

कृष्णदास संस्कृत सीरीज

१२१

श्रीमता पद्मप्रभुसूरिणा विरचितः

**भुवनदीपकः**

[प्रश्नमार्गीयः]

दीप्तिव्याख्यया संवलितः

व्याख्याकारः

**डॉ. कामेश्वर उपाध्यायः**

ज्यौतिषाचार्यः (लब्धस्वर्णपदकः)

पी-एच. डी. , यू. जी. सी. परीक्षोत्तीर्णः

ज्यौतिषविभागः-काशी-हिन्दू विश्वविद्यालयः, वाराणसी=५

**कृष्णदास अकादमी, वाराणसी**

१९९०

## विषयानुक्रमणिका

|     | विषयाः                      | पृष्ठ संख्या |
|-----|-----------------------------|--------------|
| १.  | मुख पृष्ठ                   | १            |
| २.  | विषयानुक्रमणिका             | २            |
| ३.  | मङ्गलम्                     | ६            |
| ४.  | भूमिका                      | ६            |
| ५.  | नमो वाक्                    | ६            |
| ६.  | विषयविभागः                  | ६            |
| ७.  | गृहाधिपद्वारम्              | १०           |
| ८.  | ग्रहोच्चनीचद्वारम्          | १४           |
| ९.  | शत्रुमित्रद्वारम्           | १६           |
| १०. | ग्रहाणां परं वैरकथनम्       | १७           |
| ११. | राहु गृहोच्चनीचद्वारम्      | १८           |
| १२. | केतुस्थितिद्वारम्           | १९           |
| १३. | ग्रहस्वरूपादिद्वारम्        | २०           |
| १४. | प्रभातादिकालज्ञानम्         | २१           |
| १५. | तिर्यगादिदृष्टिः            | २१           |
| १६. | ग्रहाणां प्रकृतिः           | २३           |
| १७. | ग्रहाणां रसाः               | २४           |
| १८. | ग्रहाणां धातुमूलजीवसंज्ञा   | २५           |
| १९. | ग्रहाणां द्विपदादिसंज्ञा    | २६           |
| २०. | ग्रहाणां जातिनिरूपणम्       | २८           |
| २१. | ग्रहाणां देहस्वरूपनिरूपणम्  | २९           |
| २२. | ग्रहाणां वर्णस्वरूपनिरूपणम् | ३०           |
| २३. | ग्रहाणां अधिकारविशेषः       | ३१           |
| २४. | ग्रहाणां धातुचिन्ताविशेषः   | ३३           |

|     | <b>विषयाः</b>               | <b>पृष्ठ संख्या</b> |
|-----|-----------------------------|---------------------|
| २५. | ग्रहाणां स्थानविशेषनिरूपणम् | ३४                  |
| २६. | ग्रहाणां स्त्रीपुरुषसंज्ञा  | ३५                  |
| २७. | ग्रहाणां वयोनुमानम्         | ३६                  |
| २८. | ग्रहाणां प्रकृतिस्वरूपम्    | ३७                  |
| २९. | तनुभावः                     | ३९                  |
| ३०. | धनभावः                      | ४०                  |
| ३१. | तृतीयभावः                   | ४१                  |
| ३२. | चतुर्थभावः                  | ४१                  |
| ३३. | पञ्चमभावः                   | ४२                  |
| ३४. | षष्ठभावः                    | ४२                  |
| ३५. | सप्तमभावः                   | ४३                  |
| ३६. | अष्टमभावः                   | ४३                  |
| ३७. | नवमभावः                     | ४४                  |
| ३८. | दशमभावः                     | ४५                  |
| ३९. | एकादशभावः                   | ४५                  |
| ४०. | द्वादशभावः                  | ४६                  |
| ४१. | इष्टकालानयनम्               | ४७                  |
| ४२. | लग्नविचारद्वारम्            | ४८                  |
| ४३. | भावभावेशलग्नेशानां विचारः   | ५३                  |
| ४४. | कार्यसिद्धियोगाः            | ५४                  |
| ४५. | विनष्टग्रहविचारद्वारम्      | ५८                  |
| ४६. | विनष्टग्रहप्रभावः           | ६०                  |
| ४७. | राजयोगद्वारम्               | ६२                  |
| ४८. | लाभालाभविचारद्वारम्         | ६७                  |
| ४९. | लग्नेशस्थितिद्वारम्         | ७०                  |
| ५०. | गर्भक्षेमद्वारम्            | ७३                  |

|     | <b>विषयाः</b>         | <b>पृष्ठ संख्या</b> |
|-----|-----------------------|---------------------|
| ५१. | गुर्विणीप्रसवद्वारम्  | ७५                  |
| ५२. | अपत्ययुगमप्रसवद्वारम् | ७८                  |
| ५३. | गर्भमाससंख्याज्ञानम्  | ८०                  |
| ५४. | स्त्रीप्राप्तिविचारः  | ८०                  |
| ५५. | विषकन्यायोगः          | ८४                  |
| ५६. | भावान्तग्रहः          | ८५                  |
| ५७. | विवाहे वृष्टिविचारः   | ८६                  |
| ५८. | कलत्रजीवनमरणादियोगः   | ८६                  |
| ५९. | विवादविचारः           | ८७                  |
| ६०. | अस्त्रप्रहारविचारः    | ९०                  |
| ६१. | संकीर्णपदनिर्णयः      | ९१                  |
| ६२. | अचिन्तितलाभयोगः       | ९२                  |
| ६३. | सदसद्व्यययोगः         | ९४                  |
| ६४. | प्रवासीगमनागमनयोगः    | ९५                  |
| ६५. | पथिकगमनद्वारम्        | ९८                  |
| ६६. | पथिकागमनविचारः        | १०१                 |
| ६७. | मृत्युयोगः            | १०३                 |
| ६८. | दुर्गभङ्गद्वारम्      | १०७                 |
| ६९. | चौर्यादिस्थानद्वारम्  | ११०                 |
| ७०. | ऋयाणकार्घद्वारम्      | ११७                 |
| ७१. | नौमृतिबन्धद्वारम्     | १२४                 |
| ७२. | अतीतदिनलाभादिद्वारम्  | १३०                 |
| ७३. | लग्नेशांशलाभद्वारम्   | १३१                 |
| ७४. | द्रेष्काणादिद्वारम्   | १३३                 |
| ७५. | लाभयोगः               | १३५                 |
| ७६. | पुत्रप्राप्तियोगः     | १३५                 |

|     | विषयाः               | पृष्ठ संख्या |
|-----|----------------------|--------------|
| ७७. | दोषज्ञानद्वारम्      | १३७          |
| ७८. | दिनचर्याद्वारम्      | १३९          |
| ७९. | असिना वधयोगः         | १४०          |
| ८०. | गर्भादिप्रश्नद्वारम् | १४१          |
| ८१. | द्रव्यखननयोगः        | १४५          |
| ८२. | उपसंहारः             | १५०          |

॥ श्री ॥

## भुवनदीपकः

‘दीप्ति’ संस्कृतहिन्दीटीकाभ्यामालोकितः

मङ्गलाचरणम्

सारस्वतं नमस्कृत्य महः सर्वतमोपहम् ।

ग्रहभावप्रकाशेन ज्ञानमुन्मील्यते मया ॥ १ ॥

दीप्तिः—परम्परया प्राप्तं मङ्गलं प्रस्तौति पद्मप्रभुसूरिनामाऽऽचार्यः सारस्वतमिति । सरस्वत्याः सम्बन्धि सारस्वतम् । महः तेजः कीदृशं तन्महः ? सर्वतमोपहम् अन्धकारविनाशकम्, नमस्कृत्य प्रणम्य मया ग्रन्थभावप्रकाशेन सूर्यादिनवग्रहाणां तन्वादिभावेषु गतानां मेषादिद्वादशराशीनां च प्रकाशेन स्फुटीकरणेन ज्ञानमुन्मील्यते प्रकाशयते ।

हिन्दीः—मैं पद्मप्रभुसूरि नामक आचार्य समग्र अविद्या रूप अन्धकार को विनष्ट कर देने वाले सारस्वत तेज को प्रणाम कर ग्रहों एवं द्वादश भावों के विवेचन से ज्योति स्वरूप ज्ञान का प्रकाशन कर रहा हूँ ।

‘सारस्वतम्’ पद गणेश का भी वाचक है—सरस्वत्याः पार्वत्या अपत्यं गणेशः ।

विषयविभागः

ग्रहाधिपा उच्चनीचा अन्योऽन्यं मित्रशत्रवः ।

राहोर्गृहोच्चनीचानि केतुर्यत्रावतिष्ठते ॥ २ ॥

दीप्तिः—“षट्त्रिंशदस्मिन् द्वाराणि ग्रन्थे भुवनदीपके”ति प्रतिश्रुत्या विषयविभागे तान्येव द्वाराणि वक्ष्यन्ते । तत्र द्वाराणि— १. गृहाधिपा= गृहस्वामिनः २. उच्चनीचाः = राशिपशादुच्चनीचा ग्रहाः । ३. अन्योऽन्यं मित्रशत्रवः = ग्रहाणां पारस्परिकः सम्बन्धः ४. राहोर्गृहोच्चनीचानि = राहोर्ग्रहस्य द्वाराण्युच्चनीचानि ५. केतुर्यत्रावतिष्ठते = केतोर्गृहमित्यभिप्रायः ।

हिन्दी—ग्रन्थकर्ता ने “भुवनदीपक” ग्रन्थ को छत्तीस द्वारों में व्यवस्थित किया है--- “षट्त्रिंशदस्मिन् द्वाराणि ग्रन्थे भुवनदीपके” । अतः उन द्वारों की संज्ञा श्लोक संख्या दो से दश पर्यन्त पढ़ी गई है । ये क्रमशः निम्नलिखित हैं -

१. गृहाधिप [भावों के स्वामी ] २. उच्चनीच ३. मित्रशत्रु ४. राहु का गृह, उच्च और नीच ५. केतु का गृह ।

**स्वरूपं ग्रहचक्रस्य वीक्ष्यं द्वादशवेश्मसु ।**

**निर्णयोऽभीष्टकालस्य यथा लग्नं विचार्यते ॥ ३ ॥**

**दीप्तिः**—क्रमप्राप्तानि द्वाराणि कथ्यन्ते-- ६. ग्रहचक्रस्य स्वरूपम् = ग्रहाणां स्वरूपम् ७. द्वादशवेश्मसु वीक्ष्यम् = स्वस्थानस्थितो ग्रहः कं कं भावं पश्यति, द्वादशभावेषु कुत्र किं विलोकनीयमित्यभिप्रायः ८. अभीष्टकालस्य निर्णयः = इष्टघट्टानयनम् ९. लग्नविचारः ।

**हिन्दीः**—६. ग्रहों का स्वरूप ७. ग्रहों की द्वादशभावदृष्टि ८. इष्टघट्टानयन अर्थात् इष्टकाल का साधन ९. लग्न का विचार ।

**ग्रहो विनष्टो यादृक् स्याद्राजयोगचतुष्टयम् ।**

**लाभादीनां विचारश्च लग्नेशावस्थितेः फलम् ॥ ४ ॥**

**दीप्तिः**—१०. विनष्टो ग्रहः कीदृशो भवति इति दशमे द्वारे वर्तते ११. राजयोगचतुष्टयम् = लग्नेशकार्येशाभ्यामुत्पन्नस्य चतुष्टयस्य कथनमिति भावः । १२. लाभादीनां विचारः = प्रष्टुर्लाभो भविष्यत्यलाभो वेति १३. लग्नेशावस्थितेः फलम् = लग्नपतेः स्थितिवशाद् द्वारफलम् ।

**हिन्दीः**—१०. विनष्ट ग्रह की स्थिति का विचार ११. राजयोग चतुष्टय अर्थात् लग्नेश और कार्येश (प्रश्न सम्बन्धी भावेश) की स्थिति से चार प्रकार के राजयोग का कथन द्वार १२. लाभादि का विचार १३. लग्नेश की स्थिति से उत्पन्न फल का विचार ।

**गर्भस्य क्षेममेतस्य गुर्विण्याः प्रसवो यदा ।**

**अपत्ययुग्मप्रसवो ये मासा गर्भसम्भवाः ॥ ५ ॥**

**दीप्तिः**—१४. एतस्य गर्भस्य क्षेमम् ? गर्भिण्याः गर्भस्य शं वर्तते न वेति १५. यदा गुर्विण्याः प्रसवः = गर्भभारालसायाः प्रसूतिकालः कदा वर्तते १६. अपत्ययुग्मप्रसवः = युगलबालजन्मज्ञानम् १७. गर्भसम्भवाः ये मासाः तेषां सङ्ख्या निर्णयः ।

हिन्दी-१४. गर्भ क्षेम या गर्भपात का निर्णय कथन १५. गर्भिणी का प्रसूतिकाल कथन १६. यमलयोग अर्थात् जुड़वे बच्चों का जन्म लेने का ज्ञान १७. जिन महीनों में गर्भ स्थित है उनका पृथक् पृथक् कथन ।

धृता विवाहिता भार्या विषकन्या यथा भवेत् ।

भावान्तगो ग्रहो यादृग्विवाहादिविचारणाः ॥ ६ ॥

दीप्ति:-१८. धृता = उद्धृता, विवाहिता भार्या = पत्नी, १२. विषकन्या = कुलनाशिनी विषबाला (प्राचीनकाले राजनीतौ विषकन्यानां प्रयोगो भवति स्म) अतस्तासां लोके नाशाय एव प्रयोग अभवत् । यथा = येन प्रकारेण भवेत् २०. भावान्तगो ग्रहो यादृग् = तन्वादिभावानामन्तिमेंऽशे स्थितस्य ग्रहस्य यादृक् फलं तस्य कथनम् एवञ्च २१. विवाहादिविचारणाः विवाहसम्बन्धिफलकथनम् ।

हिन्दी-१८ वें द्वार में धृता अर्थात् रखैल या धरैल और पहले से ही विवाहिता भार्या मिलने का विचार, १९ वें में कुलनाश करने वाली कन्या का विचार, २०. वें में भाव के अन्त में पड़े ग्रह का फल कथन, २१ वें में विवाहादि का विचार ।

वक्तव्यता विवादस्य सङ्कीर्णपदनिर्णयः ।

निश्चयो दीप्तपृच्छासु पथिकस्य गमागमौ ॥ ७ ॥

दीप्ति:-२२ विवादस्य = युद्धस्य कलहस्य वेति वक्तव्यता कथनम्, २३ सङ्कीर्णपदनिर्णयः = मिश्रपदनिर्णयः, २४ दीप्तपृच्छासु = प्रवासीनां भरणबन्धनादिनां विचारः २५ पथिकस्य गमागमौ निर्णयः ।

हिन्दी-२२ युद्ध में जीत हार का ज्ञान, २३ सङ्कीर्णपदों का विचार, २४ क्रूर या धातुवादादि संदिग्ध (मृत्यु या बन्ध) प्रश्न का विचार, २५ पथिक गमन आगमन का विचार ।



**मृत्युयोगो दुर्गभङ्गश्चौर्यादिस्थानसप्तकम् ।**

**ऋयणकार्यविज्ञानं नौमृत्युबन्धनत्रयम् ॥ ८ ॥**

**दीप्तिः**—२६ मृत्युयोगः, २७ दुर्गभङ्गः = कोटभङ्गः २८  
चौर्यादिस्थानसप्तकम् = चौर्यादिसप्तस्थानानां कथनम् २९ ऋयणकार्यविज्ञानम्  
= ऋयसमर्घादिनिरूपणम्, ३० नौमृत्युबन्धनत्रयम् =  
नौकामरणकारागारादिविचारः ।

**हिन्दी**—२६ मृत्युयोग, २७ किला भङ्ग, २८ चौर्यादि सात स्थानों का  
विचार, २९ ऋयविक्रय आदि का विचार, ३० नौका, मृत्यु और बन्धन का  
विचार ।

**लाभादयो दिनेऽतीते फलं मासस्य लग्नपात् ।**

**द्रेष्काणादेः फलं सर्वं दोषज्ञानं महाद्भुतम् ॥ ९ ॥**

**दीप्तिः**—३१ अतीते दिने = व्यतीते दिवसे गतदिवस इति भावः,  
लाभादयो = लाभस्यालाभस्य वेति विचारः, ३२ लग्नपात् मासस्य फलमर्थात्  
लग्नपतेः सकाशात्कस्मिन्मासे कदा च लाभो भविष्यतीति प्रश्नस्य विचारः, ३३  
द्रेष्काणादेः सर्वं फलं = राशेर्द्रेष्काणस्य किं फलं सर्वमेतत् त्रयस्त्रिंशद्द्वारे  
प्रदर्शितम्, ३४ महाद्भुतं दोषज्ञानम् = अद्भुतदोषाणां ज्ञानमर्थाद्  
दैवादिकृतदोषज्ञानम् ।

**हिन्दी**—३१ बीते दिनों के लाभ तथा हानि का विचार, ३२ लग्नेश के  
विचार से मानफल का विचार, ३३ द्रेष्काण फल विचार, ३४ अद्भुत  
(देवप्रेतादिजन्य) दोषों का ज्ञान ।

**दिनचर्या नृपादीनां गर्भेऽस्मिन् किं भविष्यति ।**

**षट्त्रिंशदस्मिन् द्वाराणि ग्रन्थे भुवनदीपके ॥ १० ॥**

**दीप्तिः**—३५ नृपादीनां राज्ञां दिनचर्या प्रतिदिवसीया कार्यपद्धतिः,  
प्रतिदिनं नवीनं किमुत्पत्स्यत इति विचारः ३६ अस्मिन् गर्भे किं भविष्यत्यर्थात्  
पुत्रः पुत्री वेति प्रश्नस्य निर्णयः । प्रश्नशास्त्रस्यास्य जातकाङ्गभूतस्य ग्रन्थेऽस्मिन्  
भुवनदीपके नवभिः श्लोकैः षट्त्रिंशद्द्वाराणि कथितानि सन्ति ।  
अत्राध्यायक्रमोऽपि तथैव विद्यते यथा प्रतिश्रुतौ ग्रन्थकृता गदित इति ।

हिन्दी-३५ राजाओं की दिनचर्या ३६ गर्भ से जायमान संतति का विचार । इस प्रकार इस भुवनदीपक नामक ग्रन्थ में छत्तीस द्वार पठित हैं ।

ग्रन्थकर्ता ने इस ग्रन्थ में 'अध्याय' के स्थान पर 'द्वार' शब्द का प्रयोग किया है । इन छत्तीस द्वारों में समग्र ग्रन्थ विभाजित तथा सुव्यवस्थित है । अब तक नौ श्लोकों में ग्रन्थ में वर्णित विषयों की सूची प्रस्तुत की गई है ।

अथ गृहाधिपद्वारम् ॥ १ ॥

मेषवृश्चिकयोर्भौमः शुक्रोवृषतुलाभृतोः ।

बुधः कन्यामिथुनयोः कर्कस्वामी तु चन्द्रमाः ॥ ११ ॥

दीप्तिः—मेषवृश्चिकयोः प्रथमाष्टमयोः स्वामी भौमो मङ्गलो भवति, शुक्रश्च वृषलाभृतोः गोघटयोः स्वामी विश्रुतः, बुधो ग्रहः कन्यामिथुनयोः षष्ठतृतीययोः स्वामी भवति, कर्कस्य कुलीरस्य स्वामिनौ भवतः । अन्ये सर्वे पञ्चताराग्रहाः द्विराशिपा इति ख्यातमिदं तथ्यम् । विषयेऽस्मिन् वृद्धानां वचनं प्रमाणम्—

कण्ठीरवं विक्रमिणं विलोक्य स्वीयं पदं तत्र चकार सूर्यः ।

मैत्र्या तदासन्नतया कुलीरे निजं बबन्धालयमेणलक्ष्या ॥

अन्ये ग्रहा गृहयियाचिषया क्रमेण शीतांशुतीग्ममहसोः सदनं समीयुः ।

प्राप्तक्रमेण ददतुर्भवानानि तौ तु ताराग्रहा द्विभवनास्तत एव जाताः ॥

हिन्दी—इस श्लोक में मेषादि बारह राशियों के क्रमशः स्वामी ग्रह कहे गये हैं । मेष और वृश्चिक राशियों का स्वामी मंगल होता है । वृष और तुला राशियों का स्वामी शुक्र होता है । कन्या और मिथुन राशियों का स्वामी बुध होता है । तथा कर्क राशि का स्वामी चन्द्रमा होता है ।

स्यान्मीनधन्विनोर्जीवः शनिर्मकरकुम्भयोः ।

सिंहस्याधिपतिः सूर्यः कथितो गणकोत्तमैः ॥ १२ ॥

दीप्तिः—मीनधन्विनोः स्वामी जीवः स्याद् अर्थात् ज्ञषधनुर्धरयोः स्वामीग्रहो बृहस्पतिर्भवति । एवमेव मकरकुम्भयोः स्वामी शनिर्भवति । सिंहस्याधिपतिः सिंहराशेरधिपतिः सूर्यो रविर्गणकोत्तमैः ज्योतिर्विद्भिः कथितो गदितो विद्यतेति । अत्रैका प्रथिता कथा श्रूयते । पुरा किल

सिंहादिषट्कगृहस्याधिपतिः सूर्य आसीत् कर्कादि षट्कगृहस्याधिपतिश्चन्द्रो विलोमक्रमेणासीत् । अन्ये सर्वे ग्रहाः यदाऽऽगत्य प्रार्थनां चक्रुस्तदा सूर्याचन्द्रमसौ एकैकं राशिभागं तेभ्यः प्रदत्तवन्ताविति ।

हिन्दी—मीन और धनु राशियों का स्वामी बृहस्पति होता है । मकर तथा कुम्भराशियों का स्वामी शनि होता है । सिंह राशि का अधिपति सूर्य कहा गया है । इस प्रकार श्रेष्ठ गणकों ने राशियों के अनुसार उनके स्वामी ग्रहों का यथाक्रम विभाजन किया है ।

#### राशिस्वामी चक्र

|        |                |             |                |           |           |            |              |
|--------|----------------|-------------|----------------|-----------|-----------|------------|--------------|
| राशि   | मेष<br>वृश्चिक | वृष<br>तुला | मिथुन<br>कन्या | कर्क<br>× | सिंह<br>× | धनु<br>मीन | मकर<br>कुम्भ |
| स्वामि | भौम            | शुक्र       | बुध            | चन्द्र    | सूर्य     | गुरु       | शनि          |

बारह राशियों का विभाजन आचार्यों की वैज्ञानिक दृष्टि का प्रतिफल है । उन्होंने समग्र ब्रह्माण्ड को एक वृत्त के रूप में मान लिया है । एक ब्रह्माण्ड की परिधि सूर्य किरणों के चतुरस्र प्रसार पर्यन्त मानी गयी है—

**दिनकरकरनिकरनिहततमसो नभसः स परिधिरुदितस्तैः ।**

सि० शि० गोलाध्यायः

सूर्य (आधुनिक सिद्धान्त से पृथ्वी) परिभ्रमण के मार्ग की क्रान्तिवृत्त संख्या है । अतः क्रान्तिवृत्त के द्वादश विभाग की एक राशि होती है । किसी भी वृत्त में ३६० अंश होते हैं । अतः  $\frac{३६०}{१२} = ३०$

१२

१२ राशियों का एक राशि चक्र होता है । क्रान्तिवृत्त में ही अश्विनी नक्षत्र से लेकर रेवती पर्यन्त २७ नक्षत्र अवस्थित है । एक नक्षत्र के चार चरण कल्पित हैं । फलतः  $२७ \times ४ = १०८$  चरण, अर्थात् २७ नक्षत्रों के समग्र चरण १०८ होंगे । नक्षत्रों के चरण योग से ही अपना आकार ग्रहण करती हैं । फलतः २७ नक्षत्रों के १०८ चरणों में १२ राशियों से विभाजन करने पर  $१०८ \div १२ = ९$  चरण शेष होते हैं । अतः नक्षत्रों के नौ-नौ चरणों के क्रमिक समवाय से एक-एक राशि का स्वरूप बनता है । चूंकि एक नक्षत्र में ४

चरण होते हैं । अतः ९ चरणों की पूर्ति में २ १/४ नक्षत्रों का योग बनता है ।  
इस प्रकार—

अश्विनी ४, भरणी ४, कृत्तिका १ चरण = मेष राशि  
कृत्तिका ३, रोहिणी ४, मृगशीर्ष २ चरण = वृष राशि  
मृगशीर्ष २, आर्द्रा ४, पुनर्वसु ३ चरण = मिथुन राशि  
पुनर्वसु १, पुष्य ४, आश्लेषा ४ चरण = कर्क राशि  
मघा ४, पूर्वाफाल्गुनी ४, उत्तराफाल्गुनी १ चरण = सिंह राशि  
उत्तराफाल्गुनी ३, हस्त ४, चित्रा २ चरण = कन्या राशि  
चित्रा २, स्वाती ४, विशाखा ३ चरण = तुला राशि  
विशाखा १, अनुराधा ४, ज्येष्ठा ४ चरण = वृश्चिक राशि  
मूल ४, पूर्वाषाढ़ा ४, उत्तराषाढ़ा १ चरण = धनु राशि  
उत्तराषाढ़ा ३, श्रवण ४, धनिष्ठा २ चरण = मकर राशि  
धनिष्ठा २, शतभिषा ४, पूर्वाभाद्रपदा ३ चरण = कुम्भ राशि  
पूर्वाभाद्रपदा १, उत्तराभाद्रपदा ४, रेवती ४ चरण = मीन राशि

राशियों का सीधा सम्बन्ध नक्षत्रों से होता है । प्रत्येक ग्रह इसी राशिचक्र से होकर गुजरता है । सूर्य जब इन बारह राशियों से होकर गुजरता है तो क्रमशः दो-दो राशियों के भोग से ऋतु का परिवर्तन होता है । मकर कुम्भ राशि में सूर्य के रहने पर शिशिर ऋतु का परिवर्तन होता है । मकर कुम्भ राशि में सूर्य के रहने पर शिशिर ऋतु होती है । मीनमेष में वसन्त, वृष मिथुन में ग्रीष्म, कर्क सिंह में वर्षा, कन्या तुला में शरद् और वृश्चिक धनु में हेमन्त ऋतुओं आती हैं । इससे यह सिद्ध होता है कि ग्रहों का राशियों से प्रत्यक्ष गणितीय सम्बन्ध है । इन बारह राशियों में से कर्क और सिंह राशियों को स्वतन्त्र रूप से अपना गृह स्थान क्रमशः चन्द्रमा और सूर्य ने अङ्गीकृत किया है । शेष पञ्चताराग्रहों (मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि) के दो-दो गृहस्थान पठित हैं । इस सन्दर्भ में एक रोचक श्लोक मिलता है जिसका आशय है कि ग्रहराज सूर्य ने सिंह को पराक्रमी देख कर अपना आश्रय स्थान बनाया । सूर्य मित्र चन्द्रमा ने सिंह राशि के आसन्न स्थित कर्क को अपना आश्रय स्थान बनाया ।

शेष पञ्चताराग्रहों ने कक्षा क्रम से सूर्य और चन्द्रमा की राशि के आगे तथा पीछे स्थित राशियों को अपना गृहस्थान बनाया । ग्रहों का स्थान कक्ष क्रम में इस प्रकार माना गया है—

‘भूमेः पिण्डः शशाङ्कज्ञकविरविकुजेज्यार्किनक्षत्रकक्षा’ – अर्थात् चन्द्र, बुध, शुक्र, सूर्य, मंगल, बृहस्पति तथा शनि ग्रह आकाश में क्रमशः स्थित हैं ।

सभी ग्रह इन राशियों में ही परिभ्रमण करते हैं । जो ग्रह जिस राशि का स्वामी होता है वह उस राशि में आकर अत्यधिक प्रभावशाली हो जाता है । ग्रहों एवं राशियों के स्वरूप, गुण, आवृत्ति तथा प्रभाव से जातक के ऊपर आने वाली भविष्यत् घटनाओं का विचार होता है । राशियों में भ्रमण करते हुए ग्रह न केवल प्राणिमात्र को प्रभावित करते हैं, बल्कि वे वनस्पतियों, समुद्र, ऋतु, उत्पात दृष्टि तथा भूकम्पादि के भी कारक होते हैं । ग्रहों की युति एवं अन्तरांश को राशि माध्यम से ही जाना जाता है । अतः त्रिस्कन्ध ज्यौतिष में इन राशियों का प्रतिपद प्रयोग किया गया है ।

सूर्य और चन्द्र राशिपति विभाजन में चक्रार्ध को क्रमशः अनुलोम एवं विलोम ढंग से प्रभावित करते हैं । सूर्य सिंह से लेकर मकर तक अनुलोम एवं चन्द्र कर्क से लेकर कुम्भ तक विलोम क्रम से सर्वप्रथम राजा हुए । बाद में इन दिनों ने अन्य ग्रहों को अपने अपने चक्रार्ध में भी स्थान दिया । यह कल्पना बृहत्पराशरहोराशास्त्र में सूत्र रूप में छुपी हुई है—

राजानौ भानुहिमगू नेता ज्ञेयो धरात्मजः ।

बुधो राजकुमारश्च सचिवौ गुरुभार्गवौ ॥

प्रेष्येको रवि पुत्रश्च सेना स्वर्भानुपुच्छकौ ।

अथ ग्रहोच्चनीचद्वारम् ॥ २ ॥

रवेर्मेषतुले प्रोक्ते चन्द्रस्य वृषवृश्चिकौ ।

भौमस्य मृगककौ च कन्यामीनौ बुधस्य च ॥ १३ ॥

जीवस्य कर्कमकरौ मीनकन्ये सितस्य च ।

तुलामेषौ च मन्दस्य उच्चनीचे उदाहृते ॥ १४ ॥

दीप्तिः-क्रमप्राप्तमिदं द्वितीयद्वारम् । द्वारेऽस्मिन् को ग्रहः कस्मिन् राशौ उच्चो भवति कस्मिन् च नीच इति प्रतिपादितं विद्यते । वस्तुतस्तु ग्रहाणामुच्चनीचावस्था गणितीया भवति ।

रवेः सूर्यस्योच्चनीचराशी मेषतुले प्रोक्ते । अत्र मेषराशि उच्चं तुला च नीचम् । सप्तमत्वात् उच्चराशितो नीचो भवति । 'उच्चान् नीचं सप्तममर्कादीनाम' प्रथितो राद्धान्तः । एवमेव सर्वत्रापि ज्ञेयम् । चन्द्रस्य विधोः वृष उच्चं वृश्चिको नीचम् । भौमस्य मङ्गलस्य मृगो मकर उच्चं कर्कः कुलीरो नीचम् । बुधस्य विदः कन्यामीनौ षष्ठमीनौ षष्ठराशि उच्चं द्वादशराशिश्च नीचम् । जीवस्य गुरोः कर्क मकरौ कुलीरमृगावुच्चनीचे भवतः । सितस्य शुक्रस्य मीनकन्ये झषबाले क्रमश उच्चनीचे स्तः । मन्दस्य शनैश्चरस्य उच्चनीचे तुलामेषौ च भवतः । अर्थात् तुलायां सौरिरुच्चस्थो भवति मेषे च नीचस्थो ।

अत्र विशेषः -

अजवृषभमृगाङ्गनाकुलीरा

झषवणिजौ च दिवाकरादितुङ्गाः ।

दश-शिखि-मनुयुक्-तिथी-न्द्रियांशै-

स्त्रिनवकविंशतिभिश्च तेऽस्तनीचाः ॥

सूर्यो मेषस्य दशमांशे, चन्द्रो वृषभस्य तृतीयांशे, भौमो मकरस्य अष्टाविंशत्यंशे, बुधः कन्यायाः पञ्चदशांशे, गुरुः कर्कस्य पञ्चमांशे, शुक्रो मीनस्य सप्तविंशत्यंशे, शनिः तुलायाः विंशत्यंशे परमोच्चस्थितो भवति । परमोच्चे स्थिताः ग्रहाः परमशुभफलं दिशन्ति । एवमेवोच्चतः सप्तमराशौ कथितांशे परमनीचङ्गता भवन्ति ।

परमोच्चगताः ग्रहाः सर्वतस्तेजकारिणो जायन्ते । इदमप्यत्र ज्ञेयं  
यत्परमोच्चांशे ग्रहा तेजस्करास्तत्पश्चात् शनैः शनैः पतिततेजांसि भवन्ति ।  
जातके उच्चस्थितानां ग्रहाणां फलमित्थं गदितं विद्यते—

सुखी भोगी धनी नेता जायते मण्डलाधिपः ।

नृपतिश्चक्रवर्ती च सूर्याद्युच्चैरनुक्रमात् ॥

**हिन्दी**—सूर्य का मेष तथा तुला, चन्द्रमा का वृष और वृश्चिक मंगल  
का मकर तथा कर्क, बुध का कन्या तथा मीन, बृहस्पति का कर्क तथा मकर,  
शुक्र का मीन तथा कन्या एवं शनिश्चर का तुला तथा मेष राशियाँ क्रमशः उच्च  
एवं नीच होती हैं ।

ग्रहों के उच्च एवं नीच राशियों की कल्पना होरा में सिद्धान्तग्रन्थों के ही  
आधार पर की गई है । स्पष्टग्रह शीघ्रनीचोच्च प्रतिमण्डल में भ्रमण करता है ।

‘यः स्यात्प्रदेशः प्रतिमण्डलस्य

दूरे भुवस्तस्य कृतोच्चसंज्ञा ।

पृथ्वी से प्रतिमण्डल वृत्त में दूरतम बिन्दु की उच्च संज्ञा होती है । उच्च  
से छः राशि नीचे नीचप्रदेश होता है---‘उच्चाद् भषट्कान्तरितं च नीचम् ।’ सीधे  
शब्दों में कहा जाये तो-पृथ्वी से ग्रह की सर्वाधिक दूरी की उच्च संज्ञा होती है  
तथा सर्वनिकटस्थ दूरी की नीच, यथा—

कुमध्यतो दूरतरे प्रदेशे रेखायुते तुङ्गमिह प्रकल्प्यम् ।

नीचं तथासन्नतरे स ॥

जातकशास्त्र में उच्चनीच का उल्लेख इसलिए किया गया है क्योंकि  
उच्चस्थ ग्रह अपनी रश्मियों के कारण लोकपावन होता है जबकि नीचस्थ ग्रह  
हानिकारक होता है ।

परम उच्च एवं परम नीच के ज्ञान के लिए जातक शास्त्र में अंश भी  
पढ़े गये हैं । इन पठित अंशों को नीचे चक्र में दिया जा रहा है । उच्चांश तक  
या उच्चांश से पूर्व तक का ग्रह दीप्त किरण होता है । इसके बाद उसकी  
रश्मियाँ शनैः शनैः सीमटने लगनी हैं ।

उच्चस्थ सूर्य और चन्द्र जातक को नराधिप बनाते हैं । अन्य ग्रह ख्यात तथा धनी करते हैं, यथा गार्गी ऋषि का वचन—

स्वोच्चगौ रविशीतांशू जनयेतां नराधिपम् ।

उच्चस्थौ धनिनं ख्यातं स्वत्रिकोणगतावपि ॥

वहीं पर नीच का फल भी कहा गया है—

अन्धं दिगम्बरं मूर्खं परपिण्डोपजीविनम् ।

कुर्यातामतिनीचस्थौ पुरुषं शशिभास्करौ ॥

उच्चनीच बोधक चक्र

| ग्रह | सूर्य | चन्द्र  | भौम   | बुध    | गुरु | शुक्र  | शनि   | ग्रह |
|------|-------|---------|-------|--------|------|--------|-------|------|
| राशि | ०/१०° | १/३°    | ९/२८° | ५/१५°  | ३/५° | ११/२७° | ६/२०° | उच्च |
| अंश  | मेष   | वृष     | मकर   | कन्या  | कर्क | मीन    | तुला  |      |
| राशि | ६/१०° | ७/३°    | ३/२८° | ११/१५° | ९/५° | ५/२७°  | ०/२०° | नीच  |
| अंश  | तुला  | वृश्चिक | कर्क  | मीन    | मकरे | कन्या  | मेष   |      |

अथ शत्रुमित्रद्वारम् ॥ ३ ॥

रवीन्दुभौमगुरवो ज्ञशुक्रशनिराहवः ।

स्वस्मिन् मित्राणि चत्वारि परस्मिन् शत्रवः स्मृताः ॥१५॥

दीप्तिः—तृतीयं द्वारं 'शत्रुमित्राख्यमिति । अत्र पद्मप्रभुसूरिना संक्षिप्तेन श्लोकेन ग्रहाणां मित्रशत्रुज्ञापनं कृतम् । भुवनदीपके पञ्चधामैत्रीचक्रं न प्राप्यते । अत्र ग्रहाणां मित्रं शत्रुर्वा कथितो विद्यते ।

रविः सूर्य इन्दुश्चन्द्रो भौमः कुजो गुरुर्बृहस्पति एते ग्रहाः परस्परं मित्रत्वमापन्नास्तिष्ठन्ति । ज्ञः बुधः, शुक्रः सितः, शनिर्मन्दः, राहुः सैहिकेय एते ग्रहाः मिथो मित्राणि भवन्ति । चत्वारो ग्रहाः क्रमेण मित्राणि सन्ति । रवीन्दुभौमगुरवः एकवर्गस्थाः परस्परं मित्राणि ज्ञशुक्रशनिराहवोऽपरवर्गस्थाश्च मिथो मित्राणि । एकवर्गस्थानामपरवर्गस्थैः सह शत्रुभावः ।



हिन्दी-सूर्य चन्द्र मंगल और बृहस्पति ग्रह आपस में मित्र होते हैं । ठीक इसी तरह बुध शुक्र शनि तथा राहु भी परस्पर मित्र होते हैं । प्रद्युम्न सूर्य आचार्य ने संक्षिप्त में सर्वोत्तम ढंग से ग्रहों की मित्रता तथा शत्रुता कही है ।

मित्र, सम, शत्रु या अधिमित्र, सम, मित्र तथा शत्रु नामक त्रिधा या पञ्चधा मैत्री को प्रश्न-शास्त्रियों ने स्वीकार नहीं किया है ।

ग्रहों की शत्रुता तथा मित्रता का वैज्ञानिक कारण उनकी रश्मियाँ हैं । जिन ग्रहों की किरणें परस्पर क्रिया कारक होती है, वे मित्र होते हैं । जिन ग्रहों की किरणें परस्पर क्षतिकारक होती है, वे शत्रु होते हैं ।

बृहज्जातकोक्त मैत्री से यदि सम ग्रह को मित्र मानलिया जाय तो भुवनदीपकोक्त मित्र-शत्रु का कथन सही मिलता है । अपवाद में बृहज्जातक में चन्द्रमा का कोई शत्रुग्रह नहीं पठित है ।

इस प्रकार आचार्य ने ग्रहों का द्विविध वर्गीकरण कर दिया है, जो सुबोध तथा समीचीन है ।

अथ ग्रहाणां परं वैरकथनम्—

राहुरव्योः परं वैरं गुरुभार्गवयोरपि ।

हिमांशुबुधयोर्वैरं विवस्वन्मन्दयोरपि ॥ १६ ॥

ज्ञशनी सुहृदौ मित्राण्यर्कचन्द्रकुजाः सदा ।

पूज्यवर्गौ गुरुसितौ सैहिकेयस्य कथ्यते ॥ १७ ॥

दीप्तिः—अथेदानीं ग्रहाणां परं वैरं निरूप्यते-राहुरव्योः सैहिकेयसूर्ययोः परं वैरं भवति । गुरुभार्गवयोः जीवशुक्रयोः तथैव वाच्यम् । हिमांशुबुधयोश्चन्द्रज्ञयोः परं वैरं ज्ञेयं तथैव विवस्वन्मन्दयोः सूर्यशनिश्चरयोरपि ज्ञेयम् ।

ज्ञशनी बुधशनिश्चरौ सुहृदौ मित्रे, अर्कचन्द्रकुजाः सूर्यसोममङ्गलग्रहाः सदा मित्राणि भवन्ति, गुरुसितौ पूज्यवर्गौ बृहस्पतिशुक्रौ मिथः पूज्यभावसम्पन्नौ भवतः । सैहिकेयस्य कथ्यतेऽर्थाद् राहोः परं वैरं, मित्रं वेत्यत्र वक्ष्यते ।

हिन्दी-राहु और सूर्य का परं वैर होता है । इसी प्रकार बृहस्पति-शुक्र, चन्द्रमा-बुध, तथा सूर्य-शनैश्चर का परं वैर होता है ।

बुध और शनैश्चर परस्पर मित्र होते हैं । सूर्य, चन्द्र और मंगल हमेशा मित्र रहते हैं । बृहस्पति और शुक्र ग्रह परस्पर पूज्यभाव वाले होते हैं । [इनका वैर भी श्रेष्ठ होता है ।] राहु के मित्र और शत्रु का कथन आगे के द्वार में होगा ।

अथ राहुगृहोच्चनीचद्वारम् ॥ ४ ॥

यद्बुधस्य ग्रहस्योच्चं राहोस्तद् गृहमुच्यते ।

यद्बुधस्य गृहं राहोस्तदुच्चं बुवते बुधाः ॥ १८ ॥

कन्या राहुगृहं प्रोक्तं राहूच्चं मिथुनं स्मृतम् ।

राहुनीचं धनुर्वर्णादिकं शनिवदस्य च ॥ १९ ॥

दीप्तिः—बुधस्य ग्रहस्य ज्ञस्य यदुच्चं कन्याराशिः, राहोः सैहिकेयस्य तद् गृहमुच्यतेऽर्थाद् राहोर्गृहं कन्या भवति । बुधस्य यद् गृहं मिथुनं तद् राहोरुच्चं बुधाः गणकाः बुवते कथयन्ति ।

अतोऽत्र निर्णयः राहुगृहं कन्या प्रोक्तं भवत्याशयः । मिथुनं राहूच्चं स्मृतं कथितम् । राहुनीचं धनुराशिर्भवति । उच्चात् षड्भान्तरे नीचव्यवस्थाकारणात् । एवमेव अस्य राहोर्वर्णादिकं गुणस्वभावजात्यादिकं शनिवद् च ज्ञेयम् । शनिवदेव राहोः प्रभावो भवति, एकस्वभावात् ।

हिन्दी—बुध ग्रह का जो उच्च होता है वह राहु का गृहस्थान कहलाता है, तथा श्रेष्ठ गणक बुध ग्रह के गृह स्थान को राहु का उच्च स्थान कहते हैं । राहु का गृह स्थान 'कन्या' राशि है और मिथुन उसका उच्च कहा गया है । राहु का नीच धनुराशि में होता है । इसका वर्णादि (स्वभाव, गुण, जाति प्रभृति) शनि की तरह होता है ।

आचार्य ने राहु, शनि, बुध और शुक्र को एक वर्ग में रखा है । एकवर्गस्थ ग्रहों में परस्पर मैत्री होती है । इसी सिद्धान्त के आधार पर प्रश्नभैरव में लिखा गया होगा—

अङ्गीकृतं सौम्यगृहं सुहृत्वात्कन्याह्वयं तच्च विधुन्तुदेन ।

तत्सप्तमं यत् शिखिना गृहीतं मीनाह्वयं चेति बुधा वदन्ति ॥

केतु का उच्च एवं नीच राहु के विपरीत है, क्योंकि ये दोनों परस्पर सप्तमस्थ होने से सर्वदा षड्भान्तरित रहते हैं ।

**राहुर्दुष्टः परं किञ्चिदुदास्ते मित्रसद्गनि ।**

**कन्यामिथुनयोः किञ्चिद् विधत्ते शुभमप्ययम् ॥ २० ॥**

**दीप्तिः—**राहुर्यद्यपि दुष्टः क्रूरत्वात् तथापि मित्रसद्गनि मित्रगृहे

किञ्चित्स्वल्पमुदास्ते उदासीनो भवति । अयं राहुः कन्यामिथुनयोः स्वगृहोच्चयोः किञ्चित्स्वल्पं शुभमपि विधत्ते करोति ।

राहुर्ग्रहो दुष्टो परञ्च मित्रगृहे (बुधशनिगृहे) वर्तमानः क्रूरादिफले उदासीनतां व्यनक्ति । कन्यामिथुनयोर्मध्ये शुभमपि दिशति । यथा विशेषः—

अजवृषकर्कटलग्ने रक्षति राहुः समस्तदुरितेभ्यः ।

पृथ्वीपतिः प्रसन्नः कृतापराधं यथा पुरुषम् ॥

**हिन्दी—**राहु ग्रह स्वभाव से क्रूर होता है, परन्तु मित्र के घर में थोड़ा-सा उदासीन होता है अर्थात् पूर्णरूप से हानिकारक नहीं होता है । यह कन्या और मिथुन राशि में स्थित होने पर थोड़ा-सा शुभ फल भी देता है ।

अथ केतुस्थितिद्वारम् ॥ ५ ॥

**राहुच्छाया स्मृतः केतुर्यत्र राशौ भवेदयम् ।**

**तस्मात् सप्तमके केतू राहुः स्याद्यत्र चांशके ॥ २१ ॥**

**तस्मादंशे सप्तमे स्यात् केतोरंशो नवांशकः ।**

**त्रिंशांशो भागशब्देन पारम्पर्यमिदं गुरोः ॥ २२ ॥**

**दीप्तिः—**केतुर्ग्रहो राहुच्छायारूपः स्मृतः । यत्र यस्मिन् राशौ अयं राहुर्भवेत् तस्माद्राशेः सप्तमे केतुः । अथवा यस्मिन् नवांशके राहुर्भवति तस्मात् सप्तमैऽंशे नवांशे वा केतुः स्थितो भवति । अंशशब्दकथनेन नवमांशस्य तथा च भागशब्दकथनेन त्रिंशांशस्य बोधो भवति । इदं गुरोः पारम्पर्यं विद्यते । गुरुपरम्परया प्राप्तमिदमिति भावः ।

**हिन्दी—**केतु ग्रह राहु का छाया ग्रह कहा गया है । जिस राशि पर राहु ग्रह होता है । उससे सप्तम स्थान में केतु ग्रह स्थित होता है । एवमेव राहु जिस अंश पर होता है उससे ठीक सप्तम राशि में उतने ही अंश पर केतु स्थित होता है । गुरुपरम्परा के अनुसार अंश शब्द से नवमांश तथा भाग शब्द से त्रिंशांश का ग्रहण करना चाहिए ।

राहु और केतु दृश्य ग्रह नहीं हैं । इन्हें छाया ग्रह कहा जाता है । ग्रहण में इनका उपयोग होने से तथा जातक के ऊपर इनका निश्चित प्रभाव होने के कारण प्राचीनाचार्यों ने इनके ऊपर विस्तृत रूप से विचार किया है ।

क्रान्तिमण्डल सूर्य का परभ्रमणपथ है । अन्य सभी ग्रह विमण्डल में घूमते हैं । सूर्य एवं चन्द्रमा के परिभ्रमण वलय जहाँ आपस में मिलते हैं उस स्थान की पातसंज्ञा होती है । क्रान्तिमण्डल से विमण्डल की पूर्व दिशा में स्थित पात को राहु तथा पश्चिम पात को केतु कहते हैं । ये पात षड्भान्तरित होने के कारण एक दूसरे से सप्तमस्थ होते हैं । इसी कारण राहु एवं केतु का अंश साम्य होता है तथा ये परस्पर छः राशि अन्तरित होते हैं ।

यहाँ एक विशिष्ट बात कही गई है कि राहु जिस ग्रह के त्रिंशांश में रहता है उसी ग्रह के त्रिंशांश में केतु भी रहता है । इस बात को 'भुवनदीपकवृत्ति' टीका में अत्यन्त स्पष्ट रूप से लिखा गया है—“आम्नायाः खलु दुर्लभाः” इत्युक्त्वादिति प्रत्यक्षमाह इदं वचनं यस्मिन् ग्रहत्रिंशांशे राहुः स्यात् तस्मिन् ग्रहत्रिंशांशे केतुः स्यात् । -----एवं होराद्रेष्काणदशांशा ज्ञेयाः ।

वस्तुतः जहाँ विभाजन अंशा प्रधान हो, अर्थात् राशि के बदलने से अन्तर न पड़ता हो वहाँ राहु और केतु एक ही वर्ग में रहते हैं जैसे होरा, त्रिंशांश, तथा द्रेष्काण परन्तु नवमांशवर्ग में राहु केतु एक राशि में नहीं होते । दशांश में भी राहु तथा केतु पृथक्-पृथक् ग्रहों के आधिपत्य में हो जाते हैं ।

अथ ग्रहस्वरूपादिद्वारम् ॥ ६ ॥

भार्गवेन्दु जलचरौ ज्ञजीवौ ग्रामचारिणौ ।

राहुक्षितिजमन्दार्का बुवतेऽरण्यचारिणः ॥ २३ ॥

दीप्तिः—भार्गवश्च इन्दुश्च भार्गवेन्दू शुक्रचन्द्रौ द्वावपि जलचरौ ज्ञजीवौ बुधगुरु ग्रामचारिणौ ग्रामवासिनौ, राहुक्षितिजमन्दार्काः सैहिकेयभौमशानिसूर्याः चत्वारोऽपि अरण्यचारिणोः वनवासिनो बुवते पण्डिताः कथ्यन्ते ।

हिन्दी—शुक्र और चन्द्रमा जलचर, बुध और बृहस्पति ग्रामचर तथा राहु, मंगल, शनि और सूर्य वनचर कहे जाते हैं ।

ग्रहों के इस त्रिविध विभाजन का उद्देश्य मूक प्रश्न के सन्दर्भ में उत्तर ज्ञात करना है । जलचर ग्रह लग्नेश लग्नस्थित या लग्न को देखता हो तो प्रश्न जल, तालाब, कूप, तड़ाग, वापी, जलस्रोत एवं तत्सम्बन्धी प्रदेशों से सम्बन्धित होगा । ग्रामचर ग्रह यदि प्रश्नलग्न से किसी तरह सम्बन्धित हो तो प्रश्न—नगर, ग्राम, जनपद, मनोरंजन स्थल तथा सभादिकों से जुड़ा होगा । वनचर ग्रह यदि प्रश्नलग्न से किसी प्रकार जुड़ा हो तो प्रश्नकर्ता निर्जन, वन, पर्वत तथा खनिज से सम्बन्धित प्रश्न होगा ।

अथ ग्रहाणां प्रभातादिकालज्ञानमाह—

**प्रभातमिन्दुजगुरु मध्याह्नं रविभूमिजौ ।**

**अपराह्नं भार्गवेन्दू सन्ध्यां मन्दभुजङ्गमौ ॥ २४ ॥**

**दीप्तिः—**मूकप्रश्ने वस्तु कदा नष्टमिति ज्ञानाय प्रभातादिकालज्ञानमाह—इन्दुजगुरु गुरुश्च इन्दुजगुरु बुधबृहस्पती प्रभातकालं कथयतः । रविभूमिजौ सूर्यभौमौः मध्याह्नकालं वदतः । भार्गवेन्दू शुक्रचन्द्रौ अपराह्नकालं तृतीयप्रहरं ज्ञापयतः मन्दभुजङ्गमौ शनिसैहिकेयौ सन्ध्याकालं कथयतः । श्लोके कथितैर्ग्रहैः कालज्ञानं भवति । बुधगुरुभ्यां सम्बन्धितः प्रश्नः प्रातःकालेन युक्तो भवति । एवमेवान्येषां ग्रहाणां विषये ज्ञातव्यमिति ।

**हिन्दी—**प्रश्नकुण्डली के अनुसार किसी भी प्रश्न के द्वारा काल (समय) ज्ञान हेतु ग्रहों की वेला संज्ञा यहाँ पठित है ।

बुध और बृहस्पति प्रातः काल, सूर्य मंगल मध्याह्नकाल, शुक्र और चन्द्रमा अपराह्नकाल, तथा शनि और राहु सन्ध्या काल के द्योतक ग्रह हैं ।

इन ग्रहों के द्वारा नष्ट वस्तु, वस्तु, प्रसव, वृष्टि या अन्य किसी भी प्रश्न का पूर्ण होने का काल जाना जा सकता है ।

अथ ग्रहाणां तिर्यगादिदृष्टिः—

**तिर्यग् दृशौ बुधसितौ भौमाकौ व्योमदर्शिनौ ।**

**जीवेन्दू समदृष्टी च शनिराहू त्वधो दृशौ ॥ २५ ॥**

**दीप्तिः—**नष्टादिवस्तुज्ञानार्थं तिर्यगादिसूचकं ग्रहस्वरूपं कथयति—बुधसितौ जशुक्रौ तिर्यग् दृशौ तिर्यग्दृष्टी भवतः ।

भौमसूर्यावूर्ध्वदृष्टिसम्पन्नौ भवतः । व्योमदर्शिनौ शब्दस्यार्थ ऊर्ध्वदर्शिनौ भवति । जीवेन्दू बृहस्पतिचन्द्रौ समदृष्टौ भवतः । शनिराहू अधोदृष्टौ भवतः । अनेन श्लोकमाध्यमेन नष्टवस्तुनो दिशानयनं भवति । लग्नमुपरि ग्रहाणां दृष्टिभिर्नष्टवस्तुनः स्थितिः स्थानं च ज्ञायते । अज्ञापरः श्लोको दिशो ज्ञानाय लभ्यते, तद्यथा—

शुक्राकौ स्तः पूर्वमुखौ गुरुसौम्यावुदङ्मुखौ ।

सोमशनी प्रतीच्यौ च शेषा दक्षिणतो मुखाः ॥

प्रश्नकाले यदि बुधशुक्रौ बलिनौ लग्नं पश्यतः तदाऽपहतं वस्तु भित्तौ गोपितं विद्यते । एवमेव भौमाकौ योगकारकौ तदा तद्वस्तु आकाशे गृहस्योच्चभागे, उपरीन्तने स्थाने वा रक्षितं भवति । जीवेन्दू योगकारकौ स्तः तदा तदेव वस्तु गृहे, प्रकोष्ठे, अङ्गणे समे भूभागे वा स्थितं भवति ।

शनिराहू योगकारकौ तदा नष्टवस्तु भूमेः खाते, परिखायां वा रक्षितं भवति ।

**हिन्दी—**बुध और शुक्र तिर्यक् दृष्टि युक्त, मंगल और सूर्य ऊर्ध्व दृष्टि युक्त, गुरु और चन्द्र सम दृष्टि युक्त तथा शनि और राहु अधो दृष्टि युक्त होते हैं ।

ग्रहों की दृष्टि के द्वारा नष्ट या प्राप्तव्य वस्तु की स्थिति का ज्ञान होता है। उदाहरणार्थ कोई वस्तु भूल गई है तो उसकी प्राप्ति के ज्ञान के लिए तात्कालिक लग्न से विचार करना चाहिए । यदि लग्न बुध और शुक्र से युक्त या दृष्ट हो तो वह वस्तु भित्ति (दीवार या कोने) में स्थित होती है ।

ग्रहों की तिर्यक्, ऊर्ध्व, सम और अधः के अतिरिक्त अन्य दृष्टि भी होती है । सभी ग्रह सप्तम स्थान को देखते हैं । मंगल, शनि और बृहस्पति क्रमशः 4-8, 3-10, और 5-9 को भी पूर्ण से देखते हैं ।

अथ ग्रहदृष्टि चक्र—

| ग्रह   | पूर्णदृष्टि | एकपाद<br>दृष्टि | द्विपाद<br>दृष्टि | त्रिपाद<br>दृष्टि | विशिष्ट<br>दृष्टि | स्थानबोध                              |
|--------|-------------|-----------------|-------------------|-------------------|-------------------|---------------------------------------|
| सूर्य  | ७           | ३,१०            | ५,९               | ४,८               | ऊर्ध्व            | छत, वलभी एवं<br>भूमि से ऊपर           |
| चन्द्र | ७           | ३,१०            | ५,९               | ४,८               | सम                | समभूमि, कमरा,<br>आँगन आदि             |
| भौम    | ७,४,८       | ३,१०            | ५,९               | xx                | ऊर्ध्व            | छत, वलभी एवं<br>भूमि से ऊपर           |
| बुध    | ७           | ३,१०            | ५,९               | ४,८               | तिर्यग्           | भित्ति (दीवार), कोना                  |
| गुरु   | ७,५,९       | ३,१०            | xx                | ४,८               | सम                | समभूमि, कमरा,<br>आँगन आदि             |
| शुक्र  | ७           | ३,१०            | ५,९               | ४,८               | तिर्यग्           | भित्ति (दीवार), कोना                  |
| शनि    | ७,३,१०      | x               | ५,९               | ४,८               | अधः               | सुरंग, भूमि के नीचे,<br>अण्डरग्राउण्ड |
| राहु   | ७           | ३,१०            | ५,९               | ४,८               | अधः               | सुरंग, भूमि के नीचे,<br>अण्डरग्राउण्ड |

अथ ग्रहाणां प्रकृतिनिरूपणम्—

पित्तं प्रभाकरक्ष्माजौ श्लेष्मा भार्गवशीतगू ।

ज्ञगुरू समधातू च पवनौ राहुमन्दगौ ॥ २६ ॥

दीप्तिः—अथेदानीं ग्रहाणां पित्तादिधातुज्ञानमाह—प्रभाकरक्ष्माजौ सूर्यभौमौ पित्तं कुरुतः, भार्गवशीतगू शुक्रचन्द्रौ श्लेष्मा श्लेष्मविकारं वदतः, ज्ञगुरू बुधबृहस्पती समधातू वातपित्तकफसाम्ययुतौ भवतः, राहुमन्दगौ सैहिकेयशनेश्वरौ पवनौ वातप्रधानौ भवतः । अनेन प्रकारेण ग्रहाणां प्रकृतिज्ञानवशाद् रोगिणां पृच्छायां जन्मकाले वा स्थितेर्ज्ञानं कर्तुं शक्यते ।

हिन्दी—सूर्य और मंगलग्रह पित्त कारक, शुक्र और चन्द्रमा श्लेष्मा (कफ) कारक, बुध और गुरु कफ, वात एवं पित्त साम्य कारक, राहु और

शनिश्चर ग्रह वात कारक होते हैं । ग्रहों के प्रकृति (वात, पित्त तथा कफ) ज्ञान से प्रश्नकाल में रोगोत्पत्ति सम्बन्धित समस्या का उचित निदान बताया जा सकता है ।

लग्नेश यदि सूर्य या मंगल ग्रह से युक्त हो अथवा प्रश्नलग्न इन ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तब रोगी को पित्त के आधिक्य से परेशानी कहनी चाहिए । अथवा रोगेश जिस ग्रह से आक्रान्त हो उसकी प्रकृति की प्रधानता से रोगोत्पत्ति होती है ।

ग्रहप्रकृति निरूपण चक्र—

|         |       |        |       |     |      |       |     |      |
|---------|-------|--------|-------|-----|------|-------|-----|------|
| ग्रह    | सूर्य | चन्द्र | भौम   | बुध | गुरु | शुक्र | शनि | राहु |
| प्रकृति | पित्त | कफ     | पित्त | सम  | सम   | कफ    | वात | वात  |

अथ ग्रहाणां रसज्ञानमाह—

**कुजाको कटुकौ जीवो मधुरस्तुवरो बुधः ।**

**क्षाराम्लौ चन्द्रभृगुजौ तीक्ष्णौ सर्पार्कनन्दनौ ॥ २७ ॥**

**दीप्तिः**—कुजश्च अर्कश्च कुजाको भौमसूर्यौ द्वावपि कटुकस्वभावौ, जीवो मधुरो बृहस्पतिर्मधुरस्वभावः, बुधः तुवरः कषायप्रियः, चन्द्रभृगुजौ चन्द्रशुक्रौ क्रमेण क्षाराम्लौ अर्थात् चन्द्रः क्षारः शुक्रोऽम्लप्रियः, सर्पार्कनन्दनौ राहुशनी तीक्ष्णौ क्रूरप्रकृतिसम्पन्नावुभौ तीक्ष्णस्वभावौ तीक्ष्णप्रियौ वा भवतः ।

**हिन्दी**—मंगल और सूर्य कटु रस प्रिय होते हैं । बृहस्पति मधुर, बुध कषाय, चन्द्रमा क्षार (नमकीन) शुक्र अम्ल (खट्टा), राहु तथा शनि तीक्ष्ण (तीता) रस प्रिय होते हैं ।

इन ग्रहों के भोज्य रसों के आधार पर प्रश्न-कालाङ्ग चक्र के द्वारा प्रश्नकर्ता की भोज्य अभिरुचि बतलाई जाती है । भोजन में षड् रसों की प्रधानता होती है । आठ ग्रहों में षड् रसों का वर्गीकरण करते समय आचार्य पद्मप्रभु सूरि ने राहु तथा केतु एवं मंगल तथा सूर्य को सामान्य अभिरुचि का बतलाया है । ग्रहों के रस के सम्बन्ध में ताजिकनीलकण्ठीकार का मत कुछ पृथक् है ।<sup>१</sup> उन्होंने सात रसों को माना है, जैसे सूर्य कटुक, चन्द्र नमकीन, मंगल तिक्त बुध मिश्रित, गुरु मधुर, शुक्र अम्ल तथा शनि कषाय, इनकी कल्पना



में राहु ग्रह को स्थान नहीं मिल सका है । रसों के प्रयोजन का वर्णन इनके ग्रन्थ में निम्नलिखित है—

लग्नं पश्यति यः खेटस्तस्य यः कथितो रसः ।

भोजनेऽसौ रसो वीर्यक्रमाद्वाच्याः परे रसाः ॥<sup>२</sup>

अर्थात् जो ग्रह लग्न को देखता है उसके रस की जातक में प्रधानता होती है । इसके बाद जो ग्रह जितना बली होता है क्रमशः उसके रस की उतनी मात्रा में प्रधानता होती है । जातकपारिजातकार के मतानुसार शनिग्रह का रस कषाय तथा मंगल का तिक्त है । इस प्रकार यहाँ भुवनदीपक से दो ग्रहों की रस मान्यता में स्पष्ट अन्तर दिखलाई पड़ता है । इन्होंने भी बुध का रस मिश्रित माना है जो ताजिकनीलकण्ठी से मिलता है ।

ग्रहरसचक्र—

|       |        |      |      |      |       |         |         |
|-------|--------|------|------|------|-------|---------|---------|
| सूर्य | चन्द्र | मंगल | बुध  | गुरु | शुक्र | शनि     | राहु    |
| कटु   | नमकीन  | कटु  | कषाय | मृदु | खट्टा | तीक्ष्ण | तीक्ष्ण |

अथ ग्रहाणां धातुमूलजीवसंज्ञा—

मन्देदूरगभौमाः स्युर्धातुः सवितृभार्गवौ ।

मूलं जीवश्च सौम्यश्च जीवं प्राहुर्महाधियः ॥ २८ ॥

दीप्तिः—मन्देदूरगभौमाः शनिचन्द्रमंगलग्रहाः धातुः स्युः । एतेषां चतुर्णां ग्रहाणां धातु संज्ञा भवति । सवितृभार्गवौ सूर्यशुक्रौ मूलसंज्ञकौ भवतः जीवश्च बृहस्पतिश्च सौम्यश्च बुधश्च जीवसंज्ञकौ भवतः । ग्रहाणामेता संज्ञा महाधियो विद्वांसः प्राहुः कथयन्ति ।

नीलकण्ठेन धातुमूलजीवसंज्ञावर्णने भट्टोत्पलस्य मतमेवाङ्गीकृतम्—

बलिनौ केन्द्रोपगतौ रविभौमौ धातुकरौ प्रश्ने ।

बुधसौरौ मूलकरौ शशिशुक्राः स्मृता जीवाः ॥<sup>१</sup>

पद्मप्रभूसूरिभट्टोत्पलयोर्मध्ये सामान्यमन्तरं दृश्यते । अस्याः संज्ञायाः किं प्रयोजनमित्याकांक्षायां मौष्टिके किं विद्यते ? मे मनसि कस्य वस्तुनः वलीयसी चिन्ताजागर्ति प्रभृतिषु प्रश्नेषु विधानस्यावश्यकता भवति ।

हिन्दी—शनि, चन्द्र, राहु और मंगल की धातु संज्ञा, सूर्य और शुक्र की मूल संज्ञा तथा बृहस्पति और बुध की जीव संज्ञा बुद्धिमान गणकों ने की है ।

इन संज्ञाओं का प्रयोग प्रश्नकालिक लग्न के द्वारा मुष्टिस्थित या मनःस्थित प्रश्न के समाधानार्थ किया जाता है तो प्रश्नकर्ता को तत्सम्बन्धी विषय की ही चिन्ता होती है ।

शनि, चन्द्र, राहु और मंगल में से कोई एक भी ग्रह यदि प्रश्नकुण्डली के लग्न में बैठा हो या उसे देखता हो तो प्रश्न को धातु की चिन्ता होती है । धातु वर्ग में स्वर्ण, ताम्बा, रजत, कांस्य, लोहा, कोयला, रत्न, पत्थर, पीतल एवं भूगर्भोत्पन्न अन्य खनिज आते हैं ।

मूलवर्ग में जड़े, वृक्ष, घास, काष्ठ, लतायें, औषधियाँ तथा विविध धान्य आते हैं । जीववर्ग में अण्डज, पिण्डज श्वेदज, आते हैं । इनमें भी द्विपद, चतुष्पद तथा अपद या सरीसृप अर्थात् सरक कर चलने वाले जीव आते हैं । इस प्रकार इन तीनों संज्ञाओं के भी सूक्ष्म भेद होते हैं । इनके द्वारा बुद्धिमान् गणक प्रश्न की चिन्ता का उद्घाटन करता है ।

अथ ग्रहाणां द्विपदादिसंज्ञा—

**द्विपदौ भार्गवगुरु भौमाकौ च चतुष्पदौ ।**

**पक्षिणौ बुधसौरी च चन्द्रराहु सरीसृपौ ॥ २९ ॥**

**दीप्तिः—**जीववर्गे समागतानां ग्रहाणां द्विपदचतुष्पदादि-संज्ञात्मकंज्ञानं निरूप्यते भार्गवगुरु शुक्रबृहस्पति द्विपदौ, भौमाकौ मंगलसूर्यौ च चतुष्पदौ, बुधसौरी ज्ञशनी पक्षिणौ खगौ चन्द्रराहु विधुसैहिकेयौ च सरीसृपौ सपौ भवतः । सरीसृप अपदः स्मृतः अनया व्यवस्थया जीवज्ञानानन्तरं ग्रहेभ्यो द्विपदचतुष्पदपक्षिण ज्ञातुं शक्यते द्विपदेषु मानवाः, राक्षसाः, यक्षादयो वागच्छन्ति । चतुष्पदेषु अश्वहस्तिगवां प्रभृतीनां समाहारो भवति । पक्षिषु काककोकिलचटकामयूरपोदकीनां समाहारो ज्ञेयः । सरीसृपेषु अपदा आगच्छन्ति ।

हिन्दी-शुक्र और बृहस्पति द्विपद संज्ञक, मंगल और सूर्य चतुष्पदसंज्ञक, बुध और शनि पक्षी संज्ञक तथा चन्द्रमा और राहु सरीसृपसंज्ञक कहे गये हैं ।

पूर्वोक्त श्लोक के आधार पर धातु, मूल तथा जीव संज्ञाओं में से जीव संज्ञा का निर्धारण हो जाने पर इस श्लोक के द्वारा और अधिक सूक्ष्म भेद प्रदर्शित किया जा रहा है । शुक्र और बृहस्पति ग्रह में से कोई एक या दोनों यदि लग्न में हों या लग्न को देख रहे हों तो नष्टादि वस्तु को लेने वाला व्यक्ति द्विपद होगा । इसी प्रकार नष्ट प्रश्न के अतिरिक्त भी जहाँ कहीं जीव निर्धारण की आवश्यकता पड़े वहाँ इस श्लोक को आधार मान कर सूक्ष्म भेद किया जा सकता है ।

सूर्य और मंगल ग्रह यदि लग्न से युक्त या सम्बद्ध हों तो जीव चतुष्पद होगा । प्रश्नकुण्डली में जीव संज्ञा होने पर इन दोनों ग्रहों की प्रधानता से चतुष्पद का बोध होता है । इसी प्रकार बुध और शनि लग्न को प्रभावित कर रहे हों तो जीव पक्षी होगा और स्थलचर राशि के आधार पर बुध और शनि की प्रधानता से पक्षियों के भी जल और स्थल निवास की स्थिति ज्ञात हो जाती है । कर्क, वृश्चिक, कुम्भ मकर तथा मीन राशियाँ जलचर होती हैं शेष स्थल प्रधान ।

चन्द्रमा और राहु ग्रह का प्रश्न लग्न से सम्बन्ध हो तो सरीसृप जीव होता है । सरीसृप जीव में प्रधान सर्प होता है । चन्द्रमा की प्रधानता होने पर सरीसृप विषैला नहीं होगा, परन्तु कोई पाप ग्रह उसे देख रहा हो तो विषैला होगा । सरीसृपों में सर्प, केचुला घोंघा छिपकली और पेट के बल रेंगने वाले जानवर आते हैं । इन्हें 'रेपटाइल' वर्ग के जीव कहते हैं, अर्थात् क्रीपिंग एनिमल । जातक पारिजात के अनुसार सूर्य पक्षी तथा शनि चतुष्पद है ।

#### धातुमूलजीवसंज्ञाचक्र

|            |             |             |            |            |            |             |             |
|------------|-------------|-------------|------------|------------|------------|-------------|-------------|
| सूर्य      | चन्द्र      | मंगल        | बुध        | गुरु       | शुक्र      | शनि         | राहु        |
| मूल संज्ञक | धातु संज्ञक | धातु संज्ञक | जीव संज्ञक | जीव संज्ञक | मूल संज्ञक | धातु संज्ञक | धातु संज्ञक |

जीवसंज्ञान्तर्गत द्विपदादिबोधकचक्र—

|                   |                  |                   |                 |                  |                  |                 |                  |
|-------------------|------------------|-------------------|-----------------|------------------|------------------|-----------------|------------------|
| सूर्य             | चन्द्र           | मंगल              | बुध             | गुरु             | शुक्र            | शनि             | राहु             |
| चतुष्पद<br>संज्ञक | सरीसृप<br>संज्ञक | चतुष्पद<br>संज्ञक | पक्षी<br>संज्ञक | द्विपद<br>संज्ञक | द्विपद<br>संज्ञक | पक्षी<br>संज्ञक | सरीसृप<br>संज्ञक |

अथ ग्रहाणां जातिनिरूपणम्—

विप्रौ शुक्रगुरु क्षत्रौ कुजाकौ शूद्र इन्दुजः ।

इन्दुर्वैश्यः स्मृतौ म्लेच्छौ सैहिकेयशनैश्चरौ ॥ ३० ॥

दीप्तिः—ज्यौतिषशास्त्रे पञ्चधा जातिव्यवस्था विद्यते । विप्र-क्षत्र-वैश्य-शूद्र-म्लेच्छा ग्रहाः स्वजातिगुणसदृशाः जातकानां गुणस्वभावदोषाः प्रकटयन्ति । शुक्रगुरु भृगुजीवौ विप्रौ ब्राह्मणौ, कुजाकौ सूर्यभौमौ क्षत्रौ क्षत्रियौ, इन्दुजो बुधः शूद्र इन्दुश्चन्द्रो वैश्यः, सैहिकेयशनैश्चरो राहुशनी म्लेच्छौ चाण्डालौ स्मृतौ कथितौ ।

ग्रहाणां जातिव्यवस्थायां वराहिमिहिरेण राहोश्चर्या न विहिता । अमुनाचार्येण पञ्चधा जातिव्यवस्था प्रतिपादिता—

विप्रादितः शुक्रगुरु कुजाकौ शशी बुधश्चेत्यसितोऽन्त्यजानाम्<sup>१</sup> सत्याचार्येण ग्रहाणां पञ्चजातिभेदाः स्वीकृताः । अनेनान्त्यजस्य स्थाने संकरशब्दस्य प्रयोगकृतः तद्यथा—

गुरुशुक्रौ रविरक्तौ चन्द्रः सौम्यः शनेश्चरश्चेति ।

विप्रक्षत्रियविट्शूद्रसंकराणां प्रभुत्वकराः ॥

हिन्दी—ज्यौतिष शास्त्र के अनुसार ग्रहों का वर्ण निरूपण उनकी रश्मियों के गुणधर्म के आधार पर किया गया है । जातक की कुण्डली में लग्नपति जिस वर्ण का ग्रह होगा उस जातक का स्वभाव भी वैसा ही होगा । अतः यहाँ ग्रहों का वर्ण निर्देशित किया जा रहा है —

शुक्र और बृहस्पति ब्राह्मण, मंगल और सूर्य क्षत्रिय, चन्द्रमा वैश्य, बुध शूद्र तथा शनि और राहु म्लेच्छ वर्ण के होते हैं ।

नष्ट वस्तु के ज्ञान में ग्रहों के वर्ण के अनुसार ही अपहर्ता की जाति कही जाती है ।

प्राचीनाचार्यों ने ग्रहों की जाति का निरूपण करते समय राहु की चर्चा नहीं की है, परन्तु बाद के गणकों ने राहु को शनिवद् मान कर उसका भी समावेश कर लिया है।

शनि और राहु ग्रह अन्त्यजों तथा म्लेच्छों के प्रतिनिधि माने गये हैं। भट्टोत्पल ने अन्त्यजों के लिए 'वर्णप्रतिलोभभव' शब्द का प्रयोग किया है। उन्होंने इस वर्णैतर वर्ग में चाण्डाल, मागध तथा निषाद आदि जातियों को रखा है।

ग्रहजातिबोधकचक्र—

|          |        |          |       |       |       |         |         |
|----------|--------|----------|-------|-------|-------|---------|---------|
| सूर्य    | चन्द्र | भौम      | बुध   | गुरु  | शुक्र | शनि     | राहु    |
| क्षत्रिय | वैश्य  | क्षत्रिय | शूद्र | विप्र | विप्र | म्लेच्छ | म्लेच्छ |

अथ ग्रहाणां देहस्वरूपणम्—

**स्थूल इन्दुः सितः षण्दशतुरस्रौ कुजोष्णगू।**

**वर्तुलौ सौम्यधिषणौ दीर्घौ शनिभुज्जमौ ॥ ३१ ॥**

**दीप्तिः**—इन्दुश्चन्द्रः स्थूलो बृहदाङ्गः, सितः, शुक्रः षण्ढो नपुसंकसंज्ञः कुजोष्णगू भौमसूर्यो चतुरस्रौ चतुष्कोणौ नात्युच्चाङ्गौ न लघू इति भावः। सौम्यधिषणौ बुधबृहस्पती वर्तुलौ वृत्ताकारौ भवतः। शनिभुज्जमौ शनिराहू दीर्घौ लम्बाकृतियुतौ स्मृतौ। बलयुक्तो ग्रहो मूर्तौ भवति मूर्ति पश्यति वा तदा तस्य ग्रहस्याकृति इव प्रष्टुरभीष्टस्य नरस्य आकृतिर्भवति।

**हिन्दी**—जीव वर्ग के अन्तर्गत द्विपदादि ज्ञान के अनन्तर जाति की जानकारी की विधि बतलाई गई है। इस श्लोक के द्वारा उस मनुष्य (नष्ट या अपहृत वस्तु को लेने वाले) की देह स्थिति बतलाई जा रही है।

चन्द्रमा स्थूल (मोटा) शरीर, शुक्र नपुंसक, मंगल और सूर्य चतुरस्र अर्थात् न ज्यादा लम्बा न ज्यादा चौड़ा, बुध और बृहस्पति वर्तुल (गोला स्वरूप) तथा शनि और राहु दीर्घ [लम्बा चौड़ा] शरीरधारी होते हैं।

इन ग्रहों के आधार पर नष्ट वस्तु आदि के अपहर्ता मनुष्य की शरीराकृति का ज्ञान होता है। जो ग्रह बली होकर लग्न को देखता हो या स्थित हो तो उसी ग्रह की आकृति सदृश उस मनुष्य की आकृति होती है। शुक्र ग्रह

बालक तथा वृद्ध का ज्ञापक होता है, क्योंकि इनमें कामभाव की हानि देखी जाती है। अतः 'षण्ठ' पद से इनका ग्रहण होता है। यहाँ 'षण्ठ' का प्राकरणिक अर्थ निर्वीर्य [नपुंसक] होगा।

अथ ग्रहाणां वर्णस्वरूपनिरूपणम्—

रक्तवर्णः कुजः प्रोक्तो धिषणः कनकद्युतिः

शुकपिच्छसमः सौम्यो गौरकान्तिरथोष्णागुः ॥ ३२ ॥

मन्दारार्कस्य पुष्पेण समद्युतिरनुष्णागुः।

कविरत्यन्तधवलः फणी कृष्णः शनिस्तथा ॥ ३३ ॥

दीप्तिः—ग्रहाणां स्वरूपपज्ञानेन अन्यवस्तुनः स्वरूपं ज्ञातुं शक्यते। अत इदानीं ग्रहाणां वर्णो निरूप्यते—अथ कुजो भौमो रक्तवर्णो रुधिरवर्णः प्रोक्तः, धिषणो बृहस्पतिः कनकद्युतिः स्वर्णकान्तिः, सौम्यो बुधः शुकपिच्छसमो हरितवर्णः, उष्णागुः सूर्यो गौरकान्तिः, अनुष्णागुश्चन्द्रो मन्दारार्कस्य मन्दारः कल्पवृक्षस्तदभावे अर्कपुष्पं तस्य मन्दारार्कस्य पुष्पेण कुसुमेन समद्युतिः अर्कपुष्पमिव कान्तिः शुभ्र इत्यर्थः। कविः शुक्र अत्यन्तधवलः श्वेतः फणीशनिस्तथा कृष्ण अतिश्यामवर्णः।

भुवनदीपकवृत्तौ बुधस्य वर्णने “शुकपिच्छसमः” शब्दस्यार्थो 'नीलकान्तिः' कृतः। तन्न मयाभिमतं यतो बृहत्संहितायां सन्ध्यावर्णनाध्याये—'हरिताः शुकवर्णाः' तथाच लोकेऽपि शुको हरितवर्णो दृश्यते।

हिन्दी—मंगल रक्त (लाल) वर्ण, बृहस्पति सुनहला, बुध तोता की पूँछ की तरह हरितवर्ण, सूर्य गौर वर्ण, चन्द्रमा कल्पवृक्ष [मन्दार] के पुष्प की तरह शुभ्र वर्ण, शुक्र अत्यन्त धवल वर्ण एवं राहु तथा शनि कृष्ण वर्ण के होते हैं।

ग्रहों के वर्ण सन्दर्भ में आचार्यों में मतभेद है। वराहमिहिर ने सूर्य को 'रक्तश्यामो भास्करः' कहा है अर्थात् हल्का लाल' परन्तु भट्टोत्पल ने टीका में रक्तश्याम के लिए 'पाटलपुष्प वर्ण इत्यर्थः' कहा है जो सर्वथा असंगत है। 'श्वेतरक्तस्तु पाटलः' के अनुसार उजला और लालवर्ण का मिश्रण पाटल कहलाता है। पराशर भी सूर्य को रक्तश्याम वर्ण का मानते हैं—'रक्तश्यामो

दिवाधीशः ।' वस्तुतः सूर्य का रंग प्रत्येक ऋतु में बदलता है जिसका संहिताओं में उल्लेख मिलता है । चन्द्रमा को सभी आचार्यों ने गौरवर्ण का माना है । जातकपारिजातकार [वैद्यनाथ] तथा बृहज्जातककार ने मंगल को रक्तगौर वर्ण [पाटल] माना है । शेष आचार्यों ने इसे केवल रक्त वर्ण का कहा है । बुध को प्रायशः आचार्यों ने हरित वर्ण का माना है, परन्तु नीलकण्ठीकार ने इसे नील वर्ण का कहा है । पद्मप्रभूसूरि, नीलकण्ठ, वैद्यनाथ तथा अन्य आचार्यों ने गुरु को पीत वर्ण का माना है, परन्तु पराशर और वराहमिहिर के मत से गुरु गौरवर्ण का है । शुक्र ग्रह को नीलकण्ठ तथा भुवनदीपककार श्वेत वर्ण का मानते हैं जबकि पराशर, वराहमिहिर तथा वैद्यनाथ ने इसे श्याम माना है । शनि को सभी आचार्यों ने कृष्णवर्ण का माना है परन्तु नीलकण्ठ ने इसे नीलवर्ण का माना है ।

प्रश्नकुण्डली से किसी वस्तु या व्यक्ति के स्वरूप को जानने के लिए ग्रहों का वर्ण ज्ञान आवश्यक होता है । लग्न जिस ग्रह से दृष्ट या युक्त होगा वस्तु या व्यक्ति का वर्ण भी वही होगा । इसके आधार पर नष्ट या प्राप्तव्य वस्तु के वर्ण को जाना जा सकता है ।

अथ ग्रहाणामधिकारविशेषः—

अवनीशो दिनमणिस्तपस्वी रोहिणीप्रियः ।

स्वर्णकारः क्षितेः पुत्रो ब्राह्मणो रोहिणीभवः ॥ ३४ ॥

वणिग्गुरुः कविर्वैश्यो वृषलः सूर्यनन्दनः ।

सैहिकेयो निषादश्च सर्वकार्येषु सम्मतः ॥ ३५ ॥

दीप्तिः—दिनमणिः सूर्य अवनीशो क्षत्रियो वा रोहिणीप्रियश्चन्द्रः तपस्वी तपः कर्ता, क्षितेः पुत्रो धरानन्दनो भौमः स्वर्णकारः, रोहिणीभवो बुधो ब्राह्मणो विप्रो गुरुबृहस्पतिर्वणिक् कविः शुक्रो वैश्य अतिधनीति शेषः । सूर्यनन्दनः शनिर्वृषलो दास अनुचरो वेति । एवमेव सैहिकेयो राहुश्चाण्डालो हिंसको निषाद इति । जीवचिन्तायां सर्वेषु शुभाशुभकार्येषु वेति ग्रहाणां जातिविशेषो ज्ञेयः ।

सूर्यो ग्रहाणामधीशः । चन्द्रमा अत्रेः पुत्रस्तस्माद् हेतोः तपस्या तस्योपवृत्तिरिति । भौमः स्वर्णकारो विद्यते । अतोऽयं पश्यन्नेव सर्वं हरति । बुधो ब्रह्मणः । अध्ययनमधापनं तस्य धर्म उक्तम् । बृहस्पतिर्वणिक् तस्मादसौ

कृपणो ज्ञेयः । शुक्रो वैश्यः । अयमतिधनी वेद्यः । शनैश्चरो दासो भृत्यो वा सदैव सेवारतः कथितः । राहु अतीव निम्नवर्ण अस्पृश्यः ।

हिन्दी-सूर्य राजा, चन्द्रमा तपस्वी, मंगल स्वर्णकार, बुध ब्राह्मण, बृहस्पति वणिक्, शुक्र वैश्य, शनि भृत्य तथा राहु निषाद माना गया है । इसका विचार सभी कार्यों में किया जाता है ।

सूर्य राजा ग्रह है । कुण्डली में इसकी प्रधानता के कारण जातक शासन करने में सक्षम, आज्ञा देने वाला तथा समर्थ होता है ।

चन्द्रमा ग्रह की प्रधानता के कारण जातक त्यागी और परोपकार की भावना से युक्त होता है । आस्तिकता, मुनिवृत्ति, जलीयपदार्थों से लगाव, कृषि से उत्पन्न चीजों के प्रति प्रेम प्रभृति विषयों का उत्प्रेरक ग्रह चन्द्रमा ही होता है ।

मंगल का स्वर्णकार होने का तात्पर्य है धातुकर्म से जीवनवृत्ति चलाने वाला । इस ग्रह की प्रधानता से व्यक्ति साहसी, चौरवृत्ति वाला, रणोत्सुक तथा दुःसाहसी होता है ।

बुध ग्रह की प्रधानता वाले जातक सात्विक वृत्ति वाले होते हैं । इनमें भी परार्थ भाव रहता है । अध्ययन-अध्यापन, शिल्प, काव्यागम धर्मशास्त्र आदि का उच्चानुशीलन इनका जीव्य होता है ।

बृहस्पति को आचार्य पद्मप्रभुसूरि ने व्यापारी माना है अर्थात् इस ग्रह की प्रधानता से जातक व्यापार कर्म में दक्ष होता है । अन्य आचार्यों ने बृहस्पति से प्रभावित जातक के लिए देवोपासक, अध्यापक तथा धर्मोपदेशक आदि होना कहा है ।

शुक्र का वैश्य ग्रह होने का आशय है-सेवा प्रधान ग्रह । कृषिकर्म, दुग्ध, सुवर्णमाणिक्य क्रय-विक्रय, तथा श्वेत वस्तुओं के व्यापार से यह जीविका चलाता है ।

शनि भृत्य ग्रह है । इसकी प्रधानता वाला जातक नौकरी करने वाला, भारवाही तथा आज्ञा मानने वाला होता है । इसका शिल्प कला में भी सम्बन्ध होता है ।



राहु चाण्डाल ग्रह है । इस ग्रह की प्रधानता वाला जातक दुष्ट, अपराधी, समाज विरोधी, पर्यटक तथा दस्यु आदि होता है । अपराधिक वृत्तियों से जीविका चलाने वाले लोग राहु प्रधान होते हैं ।

अथ ग्रहाणां धातुचिन्ताविशेषमाह—

शुक्रे चन्द्रे भवेद्रौप्यं बुधे स्वर्णमुदाहृतम् ।

गुरौ रत्नयुतं हेम सूर्ये मौक्तिकमुच्यते ॥ ३६ ॥

भौमे त्रपु शनौ लौहं राहावस्थीनि कीर्तयेत् ।

धातोर्विनिश्चये ज्ञाते विशेषोऽस्मादुदाहृतः ॥ ३७ ॥

दीप्तिः—शुक्र भार्गवे चन्द्रे विधौ च लग्नस्थिते लग्नदृष्टे वा तदा धातूनां मध्ये रौप्यं रजतं [तत्सम्बन्धिनं वा] भवेत् । बुधे ज्ञे स्वर्णं कनकमुदाहृतं कथितम् । गुरौ बृहस्पतौ रत्नयुतं हेममणिमाणिक्यवज्रादियुक्तं हेम स्वर्णं, सूर्ये दिननायके मौक्तिकं मुक्तारत्नम् उच्यते कथ्यते । भौमे मङ्गले त्रपुःसीसकम् । रङ्गसीसकयोस्त्रपु इति रुद्रः । अग्निं दृष्ट्वा त्रपते लज्जते इव । शनौ मन्दे लौहमयः । राहौ सैहिकेये अस्थीनि अस्थिप्रभृतीनि कीर्तयेत् कथयेत् पण्डित इति शेषः । एवमेव धातोर्विनिश्चये जाते अस्मात् कथित प्रकारात् धातोर्विशेषस्य निर्णये जाते ज्ञाते सति उदाहृतः कथितः । अत्र भावो ज्योतिर्विद्भिः ग्रहाणां प्रभावज्ञानपूर्वकं धातोर्विशेषस्य फलं निर्देष्टव्यमिति ।

हिन्दी—धातु मूल एवं जीव के निर्धारण के पश्चात् ग्रहों द्वारा लक्षित विशेष धातुओं का ज्ञान निर्देशित है—

शुक्र और चन्द्रमा होने पर रौप्य अर्थात् चाँदी, बुध के होने पर स्वर्ण, गुरु के स्थित होने पर रत्नजटित स्वर्ण, सूर्य के होने पर मौक्तिक [मोती], मंगल के होने पर त्रपु अर्थात् रांगा, टीन या शीशा, शनि के होने पर लोहा, पत्थर आदि तथा राहु के होने पर अस्थि कहना चाहिए । यह धातु का विशेष प्रकार धातु संज्ञा के निश्चय होने के बाद कहा गया है ।

बुद्धिमान् गणक धातु निश्चय हो जाने के पश्चात् ग्रहों के आधार पर विशिष्ट धातुओं का आदेश करते हैं । यदि लग्न में ग्रह स्थित हो या लग्न को देखता हो तो उसके आधार पर विशेष धातुओं का निर्देश किया जाता है । शुक्र

और चन्द्रमा ग्रह चाँदी धातु को इंगित करते हैं । बुध स्वर्ण एवं तत्सम्बन्धी आभूषणों को बतलाया है । बृहस्पति ग्रह रत्न जटित आभूषणों को निर्देशित करता है । सूर्य से मोती या मोती युक्त आभूषण का बोध होता है । मंगल ग्रह ज्ञपुस् धातु का ज्ञापक है । त्रपुस् धातु में अग्नि देख कर पिघलने वाले पदार्थ आते हैं, जैसे—टीन, रांगा, शीशा आदि । मंगल ग्रह से इन धातुओं का बोध होता है । शनि ग्रह लोहा तथा पत्थर को इंगित करता है । राहु अस्थि तथा हाथी दाँत से रचित वस्तुओं को सूचित करता है ।

प्रश्नकर्ता के मन में स्थित धातु को ग्रह के आधार पर बतलाने हेतु इस श्लोक को कहा गया है ।

अथ ग्रहाणां स्थानविशेषनिरूपणम्—

शुके चन्द्रे जलाधारो देवतावसतिर्गुरौ ।

रवौ चतुष्पदस्थानमिष्टिकानि चयो बुधे ॥ ३८ ॥

दग्धस्थानं कुजे प्रोक्तं शनौ राहौ च बाह्यभूः ।

अमीभिर्हिबुकस्थाने नष्टभूमिं विलोकयेत् ॥ ३९ ॥

दीप्तिः—शुके भृगौ चन्द्रे विधौ वा लग्ने स्थिते लग्ने दृष्टे वा जलाधारो जलाशयो ज्ञेयम् । गुरौ बृहस्पतौ देवतावसति देवतास्थानञ्च रवौ चतुष्पदस्थानं गोष्ठादिकं ज्ञेयमिष्टिकानिचय इष्टिकासमूहः पषाणादिकानां स्थानं वा बुधे ज्ञे वाच्यम् । कुजे भौमे दग्धस्थानमग्निना दग्धं स्थानं प्रोक्तं कथितम् । शनौ राहौ च शनिराहोः ब्राह्मम् उस्त्रानपर्वतादिः, अथवा बहिर्भूमलस्थानमिति शेषः । अमीभिः सूर्यादिग्रहैः सर्वं ज्ञात्वा हिबुकस्थाने चतुर्थस्थाने निधनादिपृच्छायां 'क्वगतं मम वस्तु' इति प्रश्नो वा यदि चतुर्थस्थाने लग्नेशो वान्यो ग्रहो भवति तदा नष्टभूमिं नष्टवस्तुस्थानं वक्तव्यमिति भावः ।

हिन्दी—शुक्र और चन्द्रमा के [लग्न] स्थित होने पर या देखने पर जलाशय के समीप, बृहस्पति के होने पर देवालय, सूर्य के होने पर चतुष्पदस्थान अर्थात् गोष्ठ, बुध के होने पर ईंट या पत्थर के समूह के समीप, मंगल के होने पर दग्धस्थान रसोई घर, हवनकुण्ड या जहाँ आग से जला अवशेष हो, शनि और राहु के होने पर बाह्यभूमि खेत, जंगलादि में नष्ट या

अपहृत वस्तु को जानना चाहिए । इन ग्रहों अर्थात् सूर्यादि नवग्रहों के चतुर्थ स्थान में विद्यमान होने पर नष्टवस्तु के स्थान को बदलना चाहिए । आशय है कि लग्नेश या अन्य कोई ग्रह चतुर्थ स्थान में स्थित हो या उसे देखता हो तो नष्ट वस्तु को उस ग्रह के स्थान में रखा हुआ बतलाना चाहिए ।

इन दोनों श्लोकों के माध्यम से घर से भाग कर गया भूला व्यक्ति, अपहृतव्यक्ति, अथवा चुराई हुई वस्तु के मिलने के स्थान को निर्दिष्ट किया गया है ।

लग्न के साथ ही साथ चतुर्थ स्थान में कोई ग्रह स्थित हो या उसे देखता हो तो उस ग्रह के स्थान में भी वस्तु प्राप्ति का निर्देश देना चाहिए ।

आचार्य नीलकण्ठ ने भी चतुर्थस्थान के ही आधार पर नष्टवस्तु के स्थान की सूचना दी है, यथा—

अथ चतुर्थगृहे तुर्येश्वरोऽथ यः स्याद् ग्रहस्ततो ज्ञेयम् ।

मन्दे मलिनस्थाने चन्द्रेऽम्बुनि गीष्पतौ सुरारामे ॥

भौमे वह्निसमीपे रवौ गृहाधिश्चरासनस्थाने ।

तल्पे शुक्ले सौम्ये पुस्तकवित्तान्नयानपार्श्वे च ॥

भुवनदीपककार ने राहु और शनि के स्थान के लिए “बाह्यभूः” पद का प्रयोग किया है । बाह्यभू का पर्याय मलिनस्थान भी होता है । इस प्रकार पद्मप्रभूसूरि का मत प्रश्नशास्त्र सम्भत है तथापि बुध ग्रह निर्दिष्ट स्थान तथा शुक्र स्थान में किञ्चिद् भेद भी दिखलाई पड़ता है ।

अथ ग्रहाणां स्त्रीपुरुष विभागमाह—

जीवमङ्गलमार्तण्डान्वदन्तिपुरुषान्बुधाः ।

सोमसोमजमन्दाहिभृगुपुत्रांश्च योषितः ॥ ४० ॥

दीप्तिः—चौरादि ज्ञाने पुरुषः स्त्री वेति निर्णयाय अत्र श्लोकः प्रस्तूयते—

बुधाः गणकप्रवराः जीवमङ्गलमार्तण्डान् बृहस्पतिभौमसूर्यात् ग्रहान् पुरुषा नरसंज्ञका वदन्ति कथयन्ति । सोमसोमजमन्दाहिभृगुपुत्रांश्च चन्द्रबुधशनिराहुशुक्रग्रहान् योषितः स्त्रीसंज्ञकान् वदन्तीति ।

पुरुषग्रहाणां मध्ये कश्चिदेकोऽपि लग्नस्थो लग्नं वा पश्यति तदा चौराः नष्टवस्तुन अपहर्तारः पुरुषसंज्ञकाः भवन्ति । यदि पुरुषग्रहा अनेके तदा नरोऽपि बहवो भवन्ति । एवमेव स्त्रीसंज्ञका ग्रहाश्चेल्लग्नस्थानस्तदा नष्टवस्तूनि स्त्रीग्रहस्तद्गतानि वाच्यानीति भावः ।

**हिन्दी**—बुद्धिमान् गणक बृहस्पति, मंगल तथा शनि को पुरुष संज्ञक तथा चन्द्रमा, बुध, शनि, राहु और शुक्र को स्त्री संज्ञक ग्रह कहते हैं ।

कुछ आचार्य शनि तथा बुध को नपुंसक ग्रह मानते हैं ।<sup>१</sup> इन दोनों ग्रहों की प्रधानता होने पर बालक या वृद्ध का बोध होता है । ग्रहों के पुरुष और स्त्री वर्गीकरण से जहाँ कहीं भी पुरुष और स्त्री पृथकता बोध की आवश्यकता पड़ती है—इसका निराकरण हो जाता है ।

अथ ग्रहाणां वयोनुमानस्वरूपमाह—

**युवा कुजः शिशुः सौम्यः शशिशुक्रौ च मध्यमौ ।**

**मन्दमार्तण्डदेवेज्यफणिनः स्थविरा ग्रहाः ॥ ४१ ॥**

**दीप्तिः**—कुजो भौमो युवा तरुणः, शिशुर्बालकः सौम्यो बुधः, शशिशुक्रौ चन्द्रभार्गवौ मध्यमौ प्रौढौ, चत्वारिंशत्पञ्चाशद् वा वर्षस्य अवधिर्मध्यमावस्था भवति । मन्दमार्तण्डदेवेज्यफणिनः शनिसूर्यबृहस्पतिराहवः स्थविरा वृद्धा ग्रहा भवन्ति ।

ग्रहाणां वयो ज्ञानेन चौराणामपि वयः कथितुं शक्यते । यदि चतुर्थस्थाने मेषो वृश्चिको वा राशिर्भवति तदा चौरो युवा वाच्यः । एवमेवान्यग्रहैरपि वयो ज्ञानं कर्तुं शक्यते ।

प्रश्नलग्ने स्थितानां ग्रहाणां ज्ञानेन चौराणामायुज्ञानि आचार्यनीकण्ठोऽपि स्वाभिमतं प्रस्तौति—

चौरस्य वयो ज्ञाने सिते युवा ज्ञे शिशुर्गुरौमध्यः ।

तरुणो भौमे मन्दे वृद्धोऽर्के स्यादतिस्थविरः ॥<sup>२</sup>

अत्र विशेषभेदो न लक्ष्यते ।

**हिन्दी**—मंगल तरुण, बुध बालक, चन्द्रमा तथा शुक्र मध्यम आयु (अधेड़) शनि, सूर्य, गुरु तथा राहु वृद्ध अवस्था वाले ग्रह कहे गये हैं ।

इन ग्रहों की अवस्था ज्ञान के आधार पर चोर की अवस्था बतलाई जाती है । पहले के श्लोकों में चोर की जाति तथा स्वरूपादि का वर्णन किया जा चुका है ।

चन्द्रमा तथा शुक्र मध्यम आयु प्रमाण वाले ग्रह हैं । यदि चतुर्थ स्थान में इनकी राशि हो तो चोर को चालीस से पचास वर्ष की आयु वाला समझना चाहिए । स्थविर का अर्थ वृद्ध होता है । पचास से ऊपर की आयु वाला ही व्यक्ति स्थविर संज्ञक हो सकता है ।

अथ ग्रहाणां प्रकृतिस्वरूपम्—

**भौममन्दार्कभोगीन्द्राः प्रकृत्या दुःखदानृणाम् ।**

**ज्ञगुरुश्चेतकिरणशुक्राः सुखकराः सदा ॥ ४२ ॥**

**दीप्तिः—**भौममन्दार्कभोगीन्द्राः मङ्गलशानिसूर्यराहवः प्रकृत्या स्वभावेन नृणां लोकानां दुःखदा कष्टदायका भवन्ति । क्रूरत्वमत्र कारणम् । ज्ञगुरुश्चेतकिरणशुक्राः बुधबृहस्पतिचन्द्रभार्गवाः सदा अहर्निशं सुखकराः सौख्यदायका भवन्ति । सौम्यप्रकृतिरत्र कारणभूता ।

सामान्यवचनमप्यत्रोपलभ्यते—

गुरुश्चन्द्रो बुधः शुक्रः शुभा वाराः शुभे स्मृताः ।

क्रूरास्तु क्रूरकृत्येषु ग्राह्या भौमार्कसूर्यजाः ॥

**हिन्दी—**मंगल, शनि, सूर्य और राहु (क्रूर ग्रह होने के कारण) प्रकृति (स्वभाव) से मानव को कष्ट देने वाले हैं । बुध, बृहस्पति, चन्द्रमा तथा शुक्र ग्रह हमेशा सुख देने वाले होते हैं ।

क्रूर (पाप) और सौम्य ग्रहभेद का प्रयोजन जातक के स्वभाव की क्रूरता और स्निग्धता जानने हेतु है ।

कतिपय आचार्यों ने क्षीण चन्द्रमा को पाप ग्रह माना है, परन्तु यवनेश्वराचार्यों ने चन्द्रमा को सदा शुभ ग्रह ही माना है—

‘मासे तु शुक्लप्रतिपत्प्रवृत्तेराद्ये शशी मध्यबलो दशाहे ।

श्रेष्ठो द्वितीयेऽल्पबलस्तृतीये सौम्येस्तु दृष्टो बलवान् सदैव ॥

इनके मतानुसार चन्द्रमा सर्वदा 'अल्पबली' तथा 'श्रेष्ठ' स्थिति में ही विद्यमान रहता है । वह कभी भी 'पाप' नहीं होता, बल्कि शुभग्रह से दृष्ट होने पर बलवान् होता है ।

भट्टोत्पल के मतानुसार कृष्ण पक्ष की अष्टमी से लेकर शुक्ल पक्ष की अष्टमी पर्यन्त चन्द्रमा क्षीण होता है । 'आयुर्दायविधि' के अनुसार कृष्णपक्ष त्रयोदशी से लेकर अमावास्या तक क्षीण चन्द्र होता है ।

बुधग्रह पापग्रहों के साथ पापफल तथा सौम्य ग्रहों के साथ सौम्य फल देता है । इसकी स्वयं की प्रकृति सौम्य होती है—

क्रूरग्रहोऽर्कः कुजसूर्यजौ च

पापौ शुभाः शुक्रशशाङ्कजीवाः ।

सौम्यस्तु सौम्यो व्यतिमिश्रतोऽन्यै-

र्वगैस्तु तुल्यप्रकृतित्वमेति ॥

इति ग्रहस्वरूपादिद्वारम् ।

अथ भावविचारद्वारम् ॥ ७ ॥

तनुभावनिरूपम्

रूपलक्षणवर्णानां क्लेशदोषसुखायुषाम् ।

वयः प्रणामजातीनां तनुस्थानान्निरीक्षयेत् ॥ ४३ ॥

दीप्तिः—रूपं कृष्णगौरपीतात्मकं स्वरूपम्, लक्षणं मशकादिज्ञानम्, वर्णो विप्रक्षत्र वैश्यादिः अतो रूपलक्षणवर्णानां क्लेशदोषसुखायुषां क्लेशो व्यथा, दोषश्छलच्छिद्रादिः सुखं योषितपुत्रधनादिकं सर्वेषामेतेषां क्लेशदोषसुखायुषाम् । वयः प्रमाणं बालकवृद्धतरुणानामायुषामनुमानम्, जातिरपि प्रसिद्धा विद्यत एव । तनुस्थानात् प्रथमात् लग्नाद् वा विचारयेत् ।

प्राशिनकैः सर्वमेतद् विचारणीयं तनुभावादिति भावः । ताजिकनीलकण्ठ्यामपि तनुभावाच्चिन्त्यविषया वर्णितास्सन्ति ।

सौख्यमायुर्वयो जातिरारोग्यं लक्षणं गुणः ।

क्लेशाकृती रूपवर्णास्तनोश्चिन्त्या विचक्षणैः ॥ प्रश्नविचाराध्यायः

३२ उक्तं प्रश्नभूषणेऽपि—

स्वरूपलक्षणं चापि वर्णभेदं सुखासुखम् ।

प्रश्नकर्तुर्वयोमानं लग्नात्सर्वं विचिन्तयेत् ॥ संज्ञाध्याये ॥ ७ ॥

हिन्दी—मनुष्य का स्वरूप, लक्षण, वर्ण, क्लेश, दोष, सुख, आयु, वयः प्रमाण तथा जाति प्रभृति विषय तनुभाव (लग्न) से विचार करना चाहिए ।

द्वादशभावों से किन-किन विषयों का विचार किया जाता है । इस द्वार में वर्णित है । चोर, प्राशिनक या अन्य किसी व्यक्ति के शरीर से सम्बन्धित प्रत्येक प्रश्न का विचार तनुभाव से किया जाता है ।

स्वरूप का अर्थ है—दीर्घ, लघु, स्थूलादि शरीर । लक्षण में मशा, तिल या शरीर के विशिष्ट लक्ष्म आते हैं । वर्ण से गोरा, गेहुआँ, काला तथा श्यामादि का विचार किया जाता है । क्लेश से मानसिक, आर्थिक, शारीरिक प्रभृति कष्टों का विचार किया जाता है । इसी प्रकार आयु तथा वर्तमान वय का अनुमान भी इसी भाव से किया जाता है ।

तनुभाव लग्न को कहते हैं । यही जातक या प्राशनक का उदित, लग्न या तनुभाव भी कहलाता है ।

द्वितीय (धन) भावनिरूपणम्

मणिमुक्ताफलं स्वर्णं रत्नधातुकदम्बकम् ।

ऋयाणकार्घसर्वाणि धनस्थानान्निरीक्षयेत् ॥ ४४ ॥

दीप्तिः—मणिमुक्ताफलं रत्नभौक्तिकं स्वर्णं रत्नधातुकदम्बकं रत्नं वैदूर्यादिकं धातु अयवयो लौहदिकानां धातुसंज्ञको भवति । रत्नधातूनां कदम्बकं समूहः । धातोः सप्तसंज्ञ्या विदितैव तद्यथा—

“रसासृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जा शुक्राणि धातवः ।”

आधुनिका अनेके धातवः कल्पयन्ति । मणिश्चन्द्रकान्तादिः, रत्नानि वज्रमाणिक्यपुष्परजप्रभृतीनि ।

ऋयाणकानि मञ्जिष्ठादीनि । पूर्वाचार्यैः ऋयाणकानां सङ्ख्या त्रिषष्टिशतपरिमिता स्वीकृता । अतः ऋयाणकानामर्धस्य महर्धसमर्धादेः परिज्ञानमेतानि सर्वाणि धनस्थानाद् द्वितीयभावाद् निरीक्षयेत् विचारयेदिति भावः । ताजिकनीलकण्ठ्यामपि द्वितीयभावाद् किं विचारणीयमेतद्वर्णितं विद्यते—

मुक्ताफलञ्च माणिक्यं रत्नधातुधनाम्बरम् ।

सुहृत्कार्याध्वविज्ञानं वित्तस्थानाद् विलोकयेत् ॥ प्रश्नाध्यायः ३३

हिन्दी—द्वितीय भाव (धनस्थान) से मणि (चन्द्रकान्तादि), मोती, स्वर्ण, रत्न (नीलम, पुखराज, पन्ना, हीरा आदि), धातु (लोहा, ताम्बा प्रभृति) समूह, ऋयाणक (किराना वस्तु मञ्जिष्ठादि), तेजी मंहगी प्रभृति विषयों का विचार किया जाता है ।

ऋयाणक का प्रयोग किराना वस्तु के अर्थ में किया गया है । प्राचीनटीकाकारों ने ऋयाणकों के एक सौ तिरसठ भेद स्वीकार किये हैं ।



अथ तृतीयभावनिरूपणम्—

भगिनीभ्रातृभृत्यानां दासकर्मकृतामपि ।

कुर्वीत वीक्षणं विद्वान् सम्यग्दुश्चिक्व्यवेश्मनि ॥ ४५ ॥

दीप्तिः—भगिनी सहोदरी स्वसा वेति तस्याः, भ्रातृ अनुजाग्रजादिः तेषां, भृत्यानां सेवकानाञ्च, दासकर्मकृतामपि सेवाकर्मनिरतानामपि वीक्षणमवलोकनं विद्वान् गणकः सम्यग्रूपेण दुश्चिक्व्यवेश्मनि तृतीयगृहे कुर्वीत विचारयेदिति । नीलकण्ठ्यामपि—अयमेवश्लोक उदाहृतो विद्यते—तृतीयभावस्य विषयनिरूपणे ।

हिन्दी—विद्वान् गणक तृतीय भाव से बहन, भाई, भृत्य तथा दास कर्म करने वालों का सम्यक् अवलोकन कर विचार करते हैं ।

तृतीय भाव को सहज भाव भी कहते हैं । इस भाव के पराक्रम का भी विचार किया जाता है ।

अथ चतुर्थभावनिरूपणम्—

वाटिकाखलकक्षेत्रमहौषधिनिधीनिह ।

विवरादि प्रवेशं च पश्येत् पातालतो बुधः ॥ ४६ ॥

दीप्तिः—वाटिका प्रसूनस्थली, खलकं धान्यकुट्टनगाहनस्थलम्, क्षेत्रं भूखण्डम् महौषधि महच्च तदौषधं च महौषधम् । ‘महौषधं तु शुठ्यां स्याद् विषायां लशुनेऽपि च’ इति विश्वः । महौषधिर्दोषस्य भेषजम् । महौषधयोऽष्टशतसङ्ख्याः । निधीन् द्रव्याणि निखातादीनि वा गुफायां प्रवेशोऽपि चतुर्थभावाद् विचारणीयः । गृहप्रवेशोऽप्यस्मात् पातालस्थानाद् ज्ञेयः । धातूनामनेकेऽर्था भवन्ति । अतश्चतुर्थस्थानाद् गणकै एतत्सर्वं सफलं निरीक्षणीयम् ।”

हिन्दी—विद्वान् गणकों को चतुर्थस्थान से वाटिका (फुलवारी), खलिहान, खेत, महौषधि, निधि (छुपा खजाना) विवर (छीद्र, गुफा या सुरंग) और प्रवेश (गृहादि) का विचार करना चाहिए ।

चतुर्थस्थान माता या भूमि स्थान कहलाता है । वाहन तथा सुखादि अनेक विषयों का भी विचार इसी भाव से होता है ।

अथ पञ्चमभावनिरूपणम्—

गर्भापत्यविनेयानां मन्त्रसाधनयोरपि ।

विद्याबुद्धिप्रबन्धानां सुतस्थानाद्विनिश्चयः ॥ ४७ ॥

दीप्तिः—गर्भापत्यविनेयानां गर्भसंततिशिष्याणां मन्त्रसाधनयोरपि आकाशादि गमने सहायभूतायाः मन्त्रविद्यायाः साधनायाश्च विचारः, विद्याबुद्धिप्रबन्धानां विद्या सरस्वती बुद्धिर्मनीषा प्रबन्धः काव्यबन्धः तेषां विनिश्चयो निश्चयः सुतस्थानात् पञ्चमस्थानाद् बुधैर्विधेय इति भावः ।

ताजिकनीलकण्ठ्यामयमेव श्लोक उदाहृतः । प्रश्नभूषणेऽपि सामान्यपरिवर्तनेनायमेव श्लोक उदाहृतः तद्यथा—

गर्भापत्यनयानां वै मन्त्रसन्धानयोस्तथा ।

बुद्धिप्रधानशास्त्राणां विचारः पञ्चमालयात् ॥ संज्ञाध्याये ११

हिन्दी—पञ्चम भाव (सुतस्थान) से गर्भ, सन्तति, शिष्य, मन्त्र, साधना, विद्या, बुद्धि तथा प्रबन्ध (नवीनकाव्यरचना) का विचार करना चाहिए ।

पञ्चमस्थान सारस्वत क्षेत्र तथा सन्तति क्षेत्र के रूप में ख्यात है ।

अथ षष्ठभावनिरूपणम्—

सैरिभीरिपुसंग्रामोगवोष्ट्रक्रूरकर्मणाम् ।

मातुलातङ्कशङ्कानाम् रिपुस्थानाद्विनिर्णयः ॥ ४८ ॥

दीप्तिः—सैरिभी महिषी, कैश्चित् 'चौरभी' पाठः स्वीक्रियते रिपुः शत्रुः सङ्ग्रामो रणः । गौः वृषादिः, उष्ट्रः क्रमेलको लोके 'ऊंट' इति प्रसिद्धः क्रूरकर्मणां छेदभेदमारणमोहनादिनामुग्रकर्मणाम्, मातुलो मातुर्भ्राता आतङ्को भयः, शंका विचिकित्सा प्रभृतीनां विषयाणां विनिर्णयो निश्चयो रिपुस्थानाद् षष्ठस्थानाद् भावाद् वा वाच्यः ।

हिन्दी—महिषी, शत्रु, युद्ध, गाय, ऊंट, क्रूर कर्म, मामा, आतंक तथा संशय प्रभृति विषयों का निर्णय षष्ठ स्थान से करना चाहिए ।

षष्ठ भाव से रोग, शत्रु विरोध, झगड़ा, चोट-चपेट, तथा बन्धनादि विषयों का विचार किया जाता है ।

अथ सप्तमभावनिरूपणम्—

वाणिज्यं व्यवहारं च विवादं च समं परैः ।

गमागमकलत्राणि पश्येत् प्राज्ञः कलत्रतः ॥ ४९ ॥

दीप्तिः—वाणिज्यं व्यापारं, व्यवहारमादानप्रदानं विवादं कलहं च गमागमकलत्राणि यात्राप्रवृत्तिनिवृत्तिभार्याः परैरन्यैः कलत्रतः सप्तमस्थानतः प्राज्ञः बुद्धिमान्नरः पश्येद् विचारयेत् ।

हिन्दी—व्यापार, व्यवहार, विवाद, गमनागमन, और जाया का विचार बुद्धिमान् गणक को सप्तम भाव से करना चाहिए ।

व्यवहार का अर्थ है लेन-देन अथवा द्रव्य स्थिति और द्रव्य वृद्धि । अनुबन्ध सहित उधार लेने के अर्थ में भी व्यवहार का प्रयोग होता है । [तुम मुझे दस किलो चावल दो मैं तुम्हें पन्द्रह किलो लौटाऊंगा इस अनुबन्ध को 'वृद्धि अनुबन्ध' कहते हैं।] यात्रा प्रवृत्ति और निवृत्ति को गमागम कहा गया है ।

सप्तम स्थान के द्वारा विवाह, पत्नी सङ्गुचा, प्रेम विवाह, पत्नी की प्रकृति और उसका स्वरूप तथा रति प्रभृति विषयों का भी विचार किया जाता है।

अथाष्टमभावनिरूपणम्—

नद्युत्तारेऽध्ववैषम्ये दुर्गे शात्रवसंकटे ।

नष्टे दष्टे रणे व्याधौ छिद्रे छिद्रं निरीक्षयेत् ॥ ५० ॥

दीप्तिः—नद्युत्तारे नद्युत्तरणे, अध्वनो वैषम्यमध्ववैषम्यं तस्मिन्, मार्गसंकटे । त्रिविधो मार्गो भवति जलस्थलाकाशभेदात् । दुर्गे राजभवने अर्थाद् अष्टमस्थानाद् दुर्गस्य भङ्गो विचारणीयः । शात्रवसंकटे समुत्पन्ने शत्रुसङ्घटे, बन्धमोक्षयोः प्रश्नस्य समुत्पन्ने, नष्टे स्वयमेव गते वस्तुनि चोरगृहीते वा, दृष्टे सर्पादिना दंशिते सति, केचन 'दंष्ट्रे' इति भेदं स्वीक्रियन्ते तन्न ममाभिमतं यतो दंष्ट्रा शब्दो दशनार्थवाचकः । 'दशि दशनस्पर्शनयोः' इति । रणे युधे व्याधौ रुजि छिद्रे डाकिनीशाकिनी भैरवीब्रह्मराक्षसादिदोषगृहीते, एतेषु विषयेषु समुपस्थितेषु छिद्रमष्टस्थानं निरीक्षयेत् विचारयेदिति ।

**हिन्दी**—नदी के पार होने में, मार्ग की विषमता में, दुर्ग भंग या जय में, शत्रु संकट उपस्थित होने पर, द्रव्यादि के नष्ट (चोरी या झपहत) होने पर, विषकीट से दंशित होने पर, युद्ध (कलह) में, रोग में तथा विपत्ति में अष्टम स्थान का विचार करना चाहिए ।

मृत्यु, वित्त नाश, युद्ध, शत्रु तथा मनोव्यथा का भी विचार अष्टम स्थान से होता है । यात्रारम्भ में अथवा यात्रा के बीच में आई विपत्ति का विचार इसी स्थान से किया जाता है । शारीरिक, मानसिक तथा आर्थिक वैषम्य का विचार अष्टम भाव से ही होता है । आधि दैविक विपत्ति की सूचना इसी भाव से प्राप्त होती है ।

अथ नवमभावनिरूपणम्—

**वापीकूपतडागादिप्रपादेवगृहाणि च ।**

**दीक्षां यात्रां मठं धर्मं धर्मान्निश्चित्य कीर्तयेत् ॥ ५१ ॥**

**दीप्तिः**—वापी दीर्घिका । कूपः खननक्रिया द्वारा निर्मितो जलस्रोतः, तडागः पुष्करिणी प्रपा पानीयशाला जलशाला वा प्याऊ इति श्लोके समानि प्रपा सह वोऽन्नभाग, इत्यथर्ववेदे । देवगृहाणि मन्दिराणि । एतानि सर्वाणि वापीकूपतडागप्रपामन्दिराणि प्रभृतीनि धर्मात् नवमभावात् निश्चित्य सुविचार्य्य कीर्तयेत् । दीक्षां मन्त्रग्रहणक्रियां, यात्रां गमनक्रियां मठं धर्माचार्याणामाश्रमं धर्मशालां वा धर्म धर्मकार्यं पुण्याचरणं वेति सर्वे विषयाः नवमभावादेव विचार्यन्ते ।

**हिन्दी**—वापी (दीर्घिका) कुआँ, तालाब प्याऊ (जहाँ धर्मार्थ जल पिलाया जाता है ) देवमन्दिर, दीक्षा (मन्त्रग्रहण), यात्रा, मठ (धर्मशालादि) तथा धर्मकार्य का निश्चय धर्मस्थान (नवमभाव) से करना चाहिए ।

नवम स्थान से भाग्य, पथकुशलता, तथा धर्म के साधनों का भी विचार किया जाता है । धार्मिक ट्रस्टों, यशः प्राप्तिः, देव, गुरु तथा विप्र की कृपा का भी विचार, इसी स्थान से किया जाता है ।

अथ दशमभावनिरूपणम्—

राज्यं मुद्रां पुरं पण्यं स्थानं पितृ-प्रयोजनम् ।

वृष्ट्यादिव्योमवृत्तान्तं व्योमस्थानान्निरी क्षयेत् ॥ ५२ ॥

दीप्तिः—राज्यं राष्ट्रं, मुद्रां राष्ट्रस्य द्रव्यं, मुदयैव राज्यव्यापारः प्रवर्तते, पुरं नगरं, पण्यं मूल्यं पाठभेदे परं पुण्यं श्रेष्ठकृत्यमित्याशयः । स्थानं गृहं निवासस्थलं वेति । पितृप्रयोजनं पितृकर्म पाठभेदे तातं पितरं प्रयोजनमभीष्टकार्यं वृष्ट्यादिकं वर्षादिकं सर्वं व्योमवृत्तान्तमाकाशनिरीक्षणं व्योमस्थानाद् दशमस्थानात् निरीक्षयेत् विलोकयेदिति भावः ।

हिन्दी—राज्य, राज्यमुद्रा, नगर, पण्य कार्य (ऋयविक्रय), निवासस्थान पितृकर्म, वर्षा, आकाश की स्थिति आदि विषयों का निरीक्षण दशम स्थान से करना चाहिए ।

कतिपय प्रतियों में 'परं पुण्यं' पाठभेद मिलता है जिसका आशय है श्रेष्ठ, सात्विक, यशः पूर्ण तथा नैतिक कार्य का निरीक्षण भी इसी स्थान से करना चाहिए । इसी स्थान से नेतृत्व का भी विचार करना चाहिए । किन्ही-किन्ही प्रतियों में 'तातं प्रयोजनं' अलग-अलग लिखा हुआ मिलता है । इसका अभिप्राय है दशम स्थान से पिता सम्बन्धी समस्त विचार तथा प्राश्निक के जीवन और कार्यों का उद्देश्य भी इसी स्थान से जाना जाता है ।

दशम भाव के विचार से ही आकाश यात्रा, आकाशीय ज्ञान, विदेशादि गमन का ज्ञान हो पाता है ।

अथैकादशभावनिरूपणम्—

गजाश्वयानवस्त्राणि सस्यकाञ्चनकन्यकाः ।

विद्वान् विद्यार्थयोर्लाभं लक्षयेल्लाभलग्नतः ॥ ५३ ॥

दीप्तिः—गजो हस्ती, अश्वो हयः, यानं वाहनं (विशेषरूपेण यन्त्रात्मकम्) वस्त्रमम्बरं पटं वेति सस्यं धान्यं काञ्चनं स्वर्णं, कन्यका बाला, विद्यार्थयोर्लाभं विद्या चार्थश्च विद्यार्थौ तयोः विद्यार्थयोर्लाभं प्राप्ति आगमनं वा लाभलग्नत एकादशभावाल्लक्षयेद् विचारयेत् । अत्र लग्न पदं 'भाव' शब्दस्य वाचकः ।

**हिन्दी**—हाथी, घोड़ा, वाहन, वस्त्र, धान्य, स्वर्ण, कन्या, विद्या और धन के लाभ का विचार विद्वान् गणक को एकादश स्थान से करना चाहिए ।

एकादश स्थान को आय (प्रतिदिवसीय आय) स्थान कहते हैं । एकादश स्थान में बैठने वाला कोई भी ग्रह पञ्चमस्थान को पूर्ण दृष्टि से देखता है । अतः पञ्चम और एकादश स्थान का परस्पर सम्बन्ध होने से विद्या तथा संतति का भी विचार इस भाव से किया जाता है । ताजिकनीलकण्ठीकार ने एकादशस्थान से चतुष्पदों का भी विचार करने को कहा है ।

अथ द्वादशभावनिरूपणम्—

**त्यागभोगविवादेषु दानेष्टकृषिकर्मसु ।**

**व्ययस्थानेषु सर्वेषु विद्धि विद्वन् ! व्ययं व्ययात् ॥ ५४ ॥**

**दीप्तिः**—त्यागो द्रव्यमानं मङ्गलामङ्गलकर्मणेः प्रदत्तं धनं यदनुपकारिणे दीयते भोगः स्वार्थं कुटुम्बार्थं च प्रयुक्तं धनं भोगवाचको भवति अथवा स्वार्थं कृतो व्ययो भोगो भवति । विवादः कलहः 'विवाहेषु' पाठभेदो नोपयुक्तो व्ययस्थानात्तस्य विचाराभावात् । दानं त्यागमेव यत्तु पूर्वमुक्तम् । परञ्चात्र ज्यौतिषे त्यागदानयोर्मध्ये यदन्तरं विद्यते तत्त्विदं—शान्तये प्रदत्तं धनं त्यागो धर्माय च कृतं व्ययं दानमिति । इष्टकृषिः स्वाभीष्टक्षेत्रवृत्तिः । कर्षणात् कृषिः । क्षेत्राद् अन्नकर्षणम् । 'हिंसादोषप्रधानत्वात्प्रमृतं कृषिरुच्यते ।' 'प्रमृतं कर्षणं' मिति मनूक्तिः ।

एतेषु सर्वेषु दानेष्टकृषिकर्मसु तथा च व्ययस्थानेषु अन्यदपिव्ययकार्येषु व्ययं विद्वन् ! गणक !! व्ययाद् द्वादशस्थानाद् विद्धि जानीहि, इति द्वादशस्थानभावविचारः सञ्जातः ।

**हिन्दी**—त्याग, भोग, विवाद, दान, इच्छित खेती तथा सभी प्रकार के अन्य व्यय का विचार विद्वान् गणक द्वादश स्थान से करें ।

शान्ति आदि कार्य में खर्च किया हुआ धन त्याग कहलाता है । कुटुम्ब तथा स्वाभीष्ट सिद्धि हेतु खर्च किया गया धन भोग कहलाता है । परार्थ अथवा धर्म के लिये अनुपकारी व्यक्ति को दिया गया धन दान कहा जाता है ।

किसी भी प्रकार के व्यय को या धन के नाश को बारहवें भाव से विचारा जाता है । प्रचलित भुवनदीपक की प्रति में 'विवाद' के स्थान पर 'विवाह' पाठभेद मिलता है । यह असमीचीन है, क्योंकि बारहवें स्थान से विवाहादि मंगल कार्य का विचार नहीं होता है ।

इति भाव विचार द्वारम् ।

अथेष्टकालनिर्णयद्वारम् ॥ ८ ॥

भागं वारिधिवारिराशिराशिषु ( १४४ ) प्राहुर्मृगाद्ये बुधाः

षट्के बाणकृपीटयोनिविधुषु ( १३५ ) स्यात्कर्कटाद्ये पुनः ॥

पादैः सप्तभिरन्वितैः ( ७ ) प्रथमकं मुक्त्वा दिनाद्ये दले ।

हित्वैकां घटिकां परे च सततं दत्वेष्टकालं वदेत् ॥ ५५ ॥

दीप्तिः—वारिधिवारिराशिराशिषु वारिधिः समुद्रश्चतुः

समुद्रापृथिवीत्युक्त्या चत्वारः । वारिराशिश्चत्वारः शशी एकसङ्ख्यावाचकः । अङ्कानां वामतो गतिरिति १४४ अयं ध्रुवाङ्कः । कस्मिन् काल इत्याङ्काक्षायां मृगादिषट्के यदा मकरराशौ सूर्यः समायाति ततः समारभ्य षड्राशिभोगं यावत् । तथा कर्कटाद्ये षट्के च पुनः यदि सूर्यः समायाति तदा बाणः पञ्चसायका भवन्ति, अतः पञ्चसङ्ख्याज्ञेया कृपीटयोनिरग्निः त्रय अङ्काः । 'कृपीटमुदरे जले' इति रत्नकोषः । कृपीटयोनिरस्येति वा कृपीटयोनिः विधुश्चन्द्र एकसङ्ख्यावाचकः । अनेन प्रकारेण १३५ पञ्चत्रिंशदधिकं शतं ध्रुवाङ्के भवति कर्कटे स्थिते सवितरि । स्पष्टार्थो मकरसंक्रान्तिदिनं समारभ्य मिथुनान्तदिनं यावत् १४४ ध्रुवाङ्कः । कर्कसंक्रान्तिदिनं समारभ्य धनुरन्त्यदिनं यावत् १३५ ध्रुवाङ्कः । एतद् भागं बुधा गणकाः प्राहुः । स्वकीयां शरीरच्छायां पादैः प्रमाप्य तस्यां सप्तसङ्ख्या योजनीया परन्तु मापितपादानां मध्ये एकं पादं न्यूनं क्रियते । प्रथमदले प्रथमं मध्याह्नं यावद् एकां घटीमृणं कृत्वा तथा द्वितीयेऽपराह्णे दले चैकां घटी संयोज्य इष्टकालमानयेत् ।

प्राचीनायां टीकायामन्यप्रकारोऽप्युपलभ्यते

छायापादै रसोपेतैरेकविंशशतं भजेत् ।

लब्धाङ्के घटिका ज्ञेया एवं शेषे फलानि च ॥

अत्राशयः शरीरच्छाया + ६ भाज्यसंज्ञकम् । भाजक सङ्ख्या १२१ ।  
अत्रोपलब्धिरिष्ट घटिका ज्ञेया ।

अन्य प्रकारः—

छायापादै इति मुनि ७ संयुज्यान्नन्दाष्टबाहुधुवराशिलब्धे । नयनविह्वलं  
द्वाभ्यां हीनं दलीकरणं तस्माच्छेषमर्धं दलीक्रियते दिवसो गम्यते ।

**हिन्दी—**अभीष्ट समय में अपने शरीर की छाया को अपने पैरों से माप  
कर उसमें सात संख्या जोड़े तथा एक घटा दें । इसकी भाजक संज्ञा होती है ।  
मकर के सूर्य में १४४ में तथा कर्क के सूर्य में १३५ में पूर्वोक्त भाजक से  
भाग देने पर प्राप्त लब्धि में मध्याह्न का समय होने पर एक घटाने से अपराह्न का  
समय हो तो एक जोड़ने से इष्टघटी (इष्टकाल) होता है ।

भुवनदीपक १२३७ ई० की रचना है । उस समय घटिका यन्त्र का  
अभाव होने के कारण छाया के द्वारा इष्टघटी साधन का प्रचार था ।

यह निश्चित तथ्य है कि उक्त प्रक्रिया द्वारा इष्टघटी लाने पर काफी स्थूल  
होगी । जहाँ सूर्योदय का मानक समय जानने का कोई साधन नहीं था, वहाँ छाया  
द्वारा इष्टघटी लाने की बात एक उपलब्धि थी । साम्प्रतिक युग में प्रचलित  
लग्नसाधन विधि 'तत्कालाकैः सायनः स्वोदयघ्ना' से ही इष्टघटी बनानी चाहिए ।

इतीष्टकालनिर्णयद्वारम् ।

अथ लग्नविचारद्वारम् ॥ ९ ॥

**इन्दुः सर्वत्र बीजाभो लग्नं कुसुमप्रभम् ।**

**फलेन सदृशोऽशश्च भावः स्वादुसमः स्मृतः ॥ ५६ ॥**

**दीप्तिः—**श्लोकेऽस्मिन् फलादेशस्य चत्वारि प्रमुखाङ्गानि निर्देशितानि  
सन्ति । तानि च इमानि— १ चन्द्रः २ लग्नम् ३ नवमांशः ४ भाव इति तत्र विधुः  
चन्द्रो सर्वत्र बीजाभो बीजतुल्यो भवति । अत्र चन्द्रबलस्य अर्थवादः कीर्तितः ।  
सति चन्द्रबले बीजबलमित्यर्थः । वस्तुतस्तु चन्द्रः सर्वकार्येषु  
अतीतानागतवर्तमानरूपेषु बीजरूपो भवति । चन्द्रस्य विचारं विना न किञ्चित्  
सम्पादनीयमिति भावः । अत्र रूपकमुखेन कार्यलतायाः बीजं चन्द्रः,  
लताप्रतानस्य कुसुमं लग्नं फलं नवमांशः स्वादो भावो (द्वादशभावाः) दर्शितः ।



यादृशं लग्नं स्वामियुतं दृष्टं वा तादृशं कार्यं फलस्य पुष्पमित्यर्थः। यादृशो लग्ननवमांशस्तादृशं तत्तुल्यं फलं कीर्तनीयम् । लग्नस्य यादृशो भावः क्रूराक्रूरचरस्थिरस्तोदितादिः तादृश एव फलस्य स्वादो भवति ।

लग्नबलनिर्धारणे विंशोपका अपि ज्ञेयाः यावतां ग्रहाणां लग्ने स्थितिर्भवति यावन्तो वा ग्रहाः लग्नं पश्यन्ति तावन्तो विंशोपकाः लग्नबलकारका भवन्ति । लग्नस्थग्रहैः, लग्नं यैर्ग्रहैर्दृष्टं, तेभ्यः विंशोपकबलनिर्धारणाय श्लोकः

रवौ सार्द्धत्रयो भागाः पञ्च चन्द्रे गुरौत्रयम् ।

द्वौ शुक्रौ द्वौ बुधे चैव लग्नविंशोपकाः स्मृताः । इति

यदि ग्रहो लग्नस्थितो लग्नं पश्यति वा तदा सूर्यादि ग्रहवशेन विंशोपकबलम् सूर्यः ३ ॥, चन्द्रः ५, गुरुः २, शुक्रः २, बुधः २ । उच्चस्थेन ग्रहेण लग्नं सबलं नीचस्थेन निर्बलं ज्ञेयम् । एवमेव—

मन्दे भौमे तथा राहौ प्रत्येकं सार्द्धमिष्यते ।

दुर्बलं बलवल्लग्नं विज्ञेयं ज्ञानवेदिभिः ॥

असावपि श्लोक । अत्र क्रमशः शनौ, कुजे राहौ च सार्द्धमेकं बलं ज्ञेयम् ।

**हिन्दी**—इस श्लोक में रूपक द्वारा प्राश्निक की कार्यलता के प्रमुख अंगों का वर्णन किया गया है । फलादेश के चार प्रमुख अंग होते हैं— १. चन्द्रमा २. लग्न ३. नवमांश तथा ४. भाव । इनमें से कार्यलता हेतु चन्द्रमा सर्वत्र बीज रूप, लग्न उसमें पुष्परूप, नवमांश फलरूप तथा द्वादशभाव उस पक्वफल के स्वाद (रस) रूप में माना गया है ।

चन्द्रमा प्रत्येक फलादेश में बीजरूप होता है । चन्द्रबल ही बीज (प्रधान) बल होता है । वस्तुतः यहाँ चन्द्रबल हेतु अर्थवाद का सहारा लिया गया है । वैसे भी चन्द्रमा प्रभावी ग्रह होने के कारण अतीत वर्तमान और अनागत काल का द्योतक होता है ।

लग्न बल से कार्यलता के पुष्पित और फलित होने की सूचना मिलती है । लग्न यदि स्वामी से युत वा दृष्ट हो अथवा शुभ ग्रह से युत या दृष्ट हो तो कार्य का फल मिलेगा ही । पुष्प फलागमन के पूर्व विद्यमान होता है । पुष्प से

फल की सूचना मिलती है । क्रूरादि खगों (ग्रहों ) से आक्रान्त लग्न (पुष्प) फल की विनष्टता का सूचक होता है । लग्न बल के निर्धारण हेतु ग्रहों का विंशोपक बल का निर्धारण आवश्यक होता है । लग्न यदि किसी ग्रह से युत या दृष्ट है तो वह ग्रह उसे बल देता है, जैसे—

|        |        |
|--------|--------|
| सूर्य  | ३ ॥ बल |
| चन्द्र | ५ बल   |
| भौम    | १ ॥ बल |
| बुध    | २ बल   |
| गुरु   | ३ बल   |
| शुक्र  | २ बल   |
| शनि    | १ ॥ बल |
| राहु   | १ ॥ बल |

ग्रहविंशोपक योग = २० बल

यदि नीच राशि का ग्रह लग्नस्थ हो या लग्न को देखता हो तो उतने लग्न बल की हानि होती है ।

इस प्रकार चन्द्र बल से कार्य का आधार मजबूत होता है । लग्न बल से कार्य का पुष्प और सुगन्ध भव्य होता है । नवमांश बल से कार्य फलीभूत हो जाता है तथा भावबल से उसका रस परिपाक जाना जाता है , अर्थात् भाव और भावेश से फलोपभोग का कथन करना चाहिए ।

इस सन्दर्भ में मेरा एक श्लोक द्रष्टव्य है—

योगाः फलानि कथिताः कुसुमानि भावाः

लग्नं प्ररोह इव पत्र समस्तदीशः ।

राशेः पतिस्तरुणकाण्डमयः प्रदीप्त—

श्चन्द्रः सदा फलित पादपबीजरुपः ॥

अर्थात् फलितशास्त्रवृक्ष का बीज चन्द्रमा, बली राशीश मजबूत स्कन्ध, लग्न शाखायें, लग्नेश पल्लव, भाव फूल तथा ग्रह योग फल रूप होता है ।

अथ लग्नस्य भूतभाविवर्तमानस्वरूपनिरूपणम्—

उदितं चिन्तयेद् भावं भाविभूतं च चिन्तयेत् ।

कार्यभावेन योगं च कार्यभावस्थितं ग्रहम् ॥ ५७ ॥

**दीप्तिः**—उदितं क्षितिजे प्रकटितं लग्न भावं लग्नंभावं चिन्तयेद् विचारयेत् । पुनः भाविभूतञ्च ऐष्ययातञ्च चिन्तयेद् विलोकयेद् । कार्यभावेन कार्यस्थाने स्थितेन भावेन प्रश्नकाले स्थितं ग्रहं चिन्तयेत् । स्पष्टोऽयमर्थो यत् कार्य येन भावेन विचारणीयं तस्य भावस्य ग्रहस्थितिर्ज्ञेया । एवमेव कार्यभावस्थितं ग्रहं विचारयेत् । अर्थात् तस्मिन् भावे स्थितानां ग्रहाणामपि विचारः कर्तव्यः । पूर्वमेव सप्तमे द्वारे भावानां विचारः सञ्जातः तदनुसारमेव कार्यप्राधान्यमवलोक्य तस्य भावस्य विचारः, ग्रहयोगविचारः, भावस्थितग्रहविचारश्च कर्तव्यः ।

स्पष्टलग्नं यस्मिन्नंशे भवति स वर्तमानांशः । यातं भूतं व्यञ्जयति, अर्थात् येऽशाः गतास्तेऽतीतकालस्य ख्यापकाः । यो भागोऽंशो वा ऐष्यः स भावी भवति । फलितोऽर्थो यल्लग्नस्य वर्तमानातीतानागतभावान् विचार्य कार्यस्यापि भूतभावीवर्तमानत्वं चिन्तनीयम् ।

अत्र विशेषः—प्रत्येक लग्नस्य त्रिभागं विधाय क्रमेण भूतं भविष्यद्वर्तमानञ्च ज्ञायते । मीनमेषे त्रिघटिकाः, वृषकुम्भौ चतस्रो घटिका मिथुनमकरौ पञ्चघटिकाः, कर्कसिंहकन्यातुलावृश्चिकधनुषां षड् घटिका भोग्या भवन्ति । कार्यभावस्थितानां ग्रहाणां विषये एकः श्लोको लभ्यते—

राहुभौमान्तरे चन्द्रः स्यात्तदा चन्द्र कर्तरी ।

शनिराह्वन्तरे सूर्यो हायने सूर्यकर्तरी ॥

सौम्याऽसौम्याश्च मिश्रा वा पृच्छायां यत्तमे गृहे ।

तावत्यब्दफलं तादृक् वाच्यं जन्मगृहैरपि ॥

**हिन्दी**—क्षितिज में जो लग्न उदित हो उसी भाव का विचार करना चाहिए । पुनः उस लग्न से भूत और भविष्य की चिन्ता करनी चाहिए । कार्यभाव से योग का तथा कार्यभाव में स्थित ग्रह का विचार करना चाहिए ।

स्पष्ट लग्न जितने अंश का होता है उससे पूर्व का अंश भूतकाल का ज्ञापक होता है । भोग्य अंश भविष्य काल का तथा विद्यमान अंश वर्तमान काल का बोधक होता है । आशय यह है कि लग्न के द्वारा भूत, भविष्य और वर्तमान का विचार करना चाहिए । कतिपय आचार्यों ने लग्न को तीन भागों में विभक्त कर १०-१० अंशों का क्रमशः भूत, वर्तमान तथा भविष्य काल माना है । मतान्तर से कुछ प्राचीनाचार्यों ने मीन और मेष की तीन घटी, वृष और कुम्भ की चार घटी, मिथुन और मकर की पाँच घटी तथा कर्कसिंहकन्या, तुला, वृश्चिक और धनुराशियों की छः घटी को भोग्यघटी के रूप में माना है ।

यहाँ 'कार्यभाव' पद का अर्थ है— अभीष्टकार्य (प्रश्न) का भाव । द्वादश भावों से पृथक्-पृथक् क्या विचारना चाहिए यह भावविचारद्वार में बतलाया जा चुका है । अतः किसी कार्य का विचार करते समय उसके भाव से ग्रह योग का विचार करना चाहिए । साथ ही साथ उस भाव में स्थित ग्रहों की प्रकृति आदि का भी विचार करना चाहिए । फलतः लग्न और कार्यभाव को दृष्टि में रख कर ही फल कहना समीचीन होता है ।

अथ लग्नेशस्य विचारावश्यकतामाह—

उदितस्यादौ भावस्याधिपति चिन्तयेत्प्रयत्नेन ।

तदनु च नाथो यस्मिन्नासीद् भावे विचार्यं तत् ॥ ५८ ॥

दीप्तिः—आदौ प्रथमे प्रयत्नेन सावधानेन चेतसा आयासेन वेति भावः ।

उदितस्य प्रकटितस्य लग्नस्य भावस्याधिपति लग्नेशं चिन्तयेद् विचारयेत् तदनु तत्पश्चात् तदनन्तरं वा नाथो लग्नेशो यस्मिन् भावे तन्वादिद्वादशस्थाने आसीत् तत् विचार्यं चिन्तनीयम् । अत्र व्यापकमर्थमपि चिन्तनीयं यल्लग्नेशः कस्यामवस्थायां स्थितो विद्यते । तत्र इमे विषया अवश्यमेव चिन्त्याः—

स्वामित्रनीचगोवक्रः स्वराशिस्थोऽरिवर्गगः ।

लग्नाद् द्वादशगः षष्ठः क्रूरयुक्तोऽथ वीक्षितः ॥

याम्यो राहोस्तु पुच्छस्य बालो वृद्धोऽस्तगो जितः ।

मुथशीलो मुशरीफे च पापैरित्यबलो ग्रहः ॥

एते दोषास्सन्ति । एभिर्दोषैरहितो लग्नेशः शुभदो भवति । ग्रहाणां दीप्तदीनमुदित स्वस्थसुप्तनिपीडितमुषितपरिहीनसुवीर्याधिकवीर्यभेदा भवन्ति । तत्र नामसदृशं फलमपि चिन्त्यम् ।

स्वोच्चे दीप्तः समाख्यातो नीचे दीनः प्रकीर्तितः ।

मुदितो मित्रगेहस्थः स्वस्थश्च स्वगृहे स्थितः ॥

शत्रुगेहस्थितः सुप्तो जितोन्येन निपीडितः ।

नीचाभिमुखगो हीने मुषितोऽस्तङ्गतो ग्रहः ॥

सुवीर्यः कथितः प्राज्ञैः स्वोच्चाभिमुखसंस्थितः ।

अधिवीर्यो निगदितः सुरश्मिः शुभवर्गजः ॥

ग्रहाणां पञ्चबलानि जातके ख्यातानि सन्ति—स्थानदिक्काल चेष्टानैसर्गिकप्रभृतीनि ।

**हिन्दी**—सर्वप्रथम यत्नपूर्वक लग्नेश का विचार करना चाहिए तत्पश्चात् लग्नेश किस भाव में स्थित है ? उसका विचार करना चाहिए ।

लग्नेश का विचार करते समय अस्त, उदय, उच्च, नीच, क्रूराक्रान्त, क्रूरदृष्ट, शुभ युक्त और शुभ दृष्ट तथा उसके पाँच प्रकार के बलों को अवश्य देखना चाहिए । ग्रहों के पाँच बल क्रमशः स्थान, दिक्, काल, चेष्टा तथा नैसर्गिक कहे गये हैं । स्वगृह, मूलत्रिकोण तथा मित्रगृह में स्थित लग्नेश उत्तम होता है । लग्नेश यदि सूर्य के सान्निध्य में आ गया हो तो वह हतरश्मि हो जाता है ।

लग्नेश त्रिक् (६, ८ तथा १२) भाव स्थित होकर अशुभ फल देता है । अतः इसका भी विचार करना चाहिए । इन विषयों का विस्तार पूर्वक अध्ययन जातकशास्त्र से करना चाहिए ।

अथ भावभावेशलग्नेशानां विचारः—

भावोऽथ कार्यरूपो यस्तदधिपलग्नाधिपौ चिन्त्यौ ।

वीक्षणयोगौ भावाधिष्ठातारौ पुनश्चिन्त्यौ ॥ ५९ ॥

**दीप्तिः**—अथ कार्यरूपो भावः कार्यविशेषस्य यो भावो निश्चितो विद्यते तस्य भावस्य चिन्तनम् । एवमेव तदधिपो भावाधिपो भावेश इत्यर्थः । लग्नाधिपो

लग्नेशः । उभयोर्भावेशलग्नेशयोः चिन्तनं कार्यम् अर्थात् भावेशलग्नेशौ चिन्त्यौ विचारणीयौ भवतः । विक्षणयोगौ दृष्टियोगावुभयोर्भावेशयोर्योगौ चिन्त्यौ भवतः । भावाधिष्ठातारौ उदितभावकार्यभावयो अधीश्वरौ चिन्तनीयौ ।

हिन्दी—कार्य से सम्बन्धित भाव के स्वामी और लग्नभाव के स्वामी दोनों का विचार करना चाहिए । पुनः लग्नेश तथा भावेश के दृष्टियोग को विचारना चाहिए । द्वादशभावों से विचारणीय विषयों को बतलाया जा चुका है । प्राश्निक के प्रश्न को ध्यान में रख कर लग्नेश तथा भावेश का विचार करना चाहिए ।

अथ कार्यसिद्धियोगाः—

लग्नपतिर्यदि लग्नं कार्याधिपतिश्च वीक्षते कार्यम् ।

लग्नाधीशः कार्यं कार्येशः पश्यति विलग्नम् ॥ ६० ॥

लग्नेशः कार्येशं विलोकते विलग्नपं तु कार्येशः ।

शीतगुदृष्टौ सत्यां परिपूर्णा कार्यनिष्पत्तिः ॥ ६१ ॥

दीप्तिः—अत्र कार्यसिद्धियोगाः प्रतिपादिताः सन्ति । तत्र कार्यसिद्धिकारणभूताऽवस्था वर्णयते—

(१) यदि लग्नपतिर्लग्नशो लग्नं तनुभावं पश्यति ।

(२) कार्याधिपतिश्च कार्येशः कार्यं वीक्षते ।

(३) लग्नाधीशो लग्नेशः कार्यं पश्यति ।

(४) कार्येशः विलग्नं प्रश्नलग्नं पश्यति ।

एतास्ववस्थासु स्थितासु कार्यसिद्धिर्भवति ।

अपि चेत्

(५) लग्नेशः कार्येशं विलोकयेद् अर्थात् प्रश्नलग्नेशो यदि कार्यपं पश्यति ।

(६) कार्येशो यदि लग्नपं विलोकयेत् तदा कार्यसिद्धिर्भवति ।

यदि शीतगुदृष्टौ चन्द्रमसा तौ लग्नेशकार्येशौ दृष्टौ भवतस्तदा कार्यसंसिद्धिः परिपूर्णा स्यात् ।

कार्येशाः पृथक् पृथक् भवन्ति । यस्य यत्कार्यं भवति तस्य कार्यस्य प्राधान्यमभिलक्ष्य कार्येशं कार्यं वा ज्ञायते ।

**हिन्दी**—यदि लग्नेश लग्न को और कार्येश कार्यभाव को देखता हो अथवा लग्नेश कार्यभाव को और कार्येश लग्नभाव को देखता हो अथवा लग्नेश कार्येश को देखता हो और कार्येश लग्नेश को साथ ही इन पर चन्द्रमा की दृष्टि पड़ रही हो तो कार्य की पूर्णतया सिद्धि होती है ।

प्रश्न द्वारा पूछे गये प्रश्नों पर विचार करना चाहिए । कि वे किस भाव से सम्बन्धित हैं । प्रश्न जिस भाव से सम्बन्धित होता है वह कार्यभाव कहलाता है । उस भाव का स्वामी कार्येश कहलाता है । इस प्रकार कार्य और कार्येश प्रश्न भेद से बारह हो सकते हैं ।

शरीर या स्वास्थ्य से सम्बन्धित प्रश्न होने पर कार्यभाव लग्न, और धन लाभ प्रश्न में कार्यभाव द्वितीयभाव होगा । सहजभाव प्रश्न में कार्येश तृतीयभावे श होगा । गृहसुखादि लाभ प्रश्न में चतुर्थेश कार्येश होगा । विद्यापुत्राप्तिप्रश्न में पञ्चमेश कार्येश होगा । स्त्रीलाभ प्रश्न में कार्येश सप्तमेश होगा । राज्य और जीविका सम्बन्धी प्रश्न में दशमेश कार्येश होगा ।

इस प्रकार कार्यभाव और कार्येश का निर्धारण प्रश्न के आधार पर करना चाहिए । भाव विचार अध्याय में भावों से चिन्त्य विषयों का वर्णन किया जा चुका है । उसी आधार पर कार्य कार्येश का निर्धारण करना चाहिए ।

**दशमतृतीये नवपञ्चमे चतुर्थाष्टमे कलत्रं च ।**

**पश्यन्ति पादवृद्ध्या फलानि चैवं प्रयच्छन्ति ॥**

**पूर्णं पश्यति रविजस्तृतीयदशमे त्रिकोणमपि जीवः ।**

**चतुरस्रं भूमिसुतः सितार्कबुधहिमकराः कलत्रं च ॥ ६२ ॥**

**दीप्तिः**—ग्रहाः स्वस्थानात् पादवृद्ध्या चरणवृद्ध्या (१, २, ३, ४ चरणैः) क्रमशः दशमतृतीये कर्मसहजभावौ एकचरणेन, नवपञ्चमे धर्मसुतभावौ द्वाभ्यां चरणाम्यां चतुर्थाष्टमे सुखरन्ध्रे त्रिभिश्चरणैः, कलत्रञ्च सप्तमभावञ्च चतुर्भिश्चरणै अर्थात् पूर्णदृष्ट्या पश्यन्ति फलानि चैवं प्रयच्छन्ति ।

रविजो मन्दः, तृतीयदशमे सहजदशमभावौ, अपि जीवो बृहस्पतिः त्रिकोणं नवपञ्चमे, भूमिसुतो भौमश्चतुरस्रं सुखाष्टमे पूर्णं पश्यति पूर्णदृष्ट्या विलोकयति । सितार्कबुधहिमकराः शुक्रसूर्यज्ञचन्द्राः कलत्रञ्च सप्तमं भावं पूर्णं पश्यन्ति ।

**हिन्दी**—सभी ग्रह तृतीय और दशम स्थान को एक पाद दृष्टि से तथा नवम और पञ्चम स्थान को द्विपाददृष्टि से एवमेव चतुर्थ तथा अष्टम स्थान को त्रिपाददृष्टि से तथा सप्तम स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं ।

शनि तृतीय तथा दशम स्थान को, बृहस्पति नवम तथा पञ्चम स्थान को और मंगल चतुर्थ तथा अष्टम स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखता है । शेष सभी ग्रह सप्तम स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं ।

ग्रहों की दृष्टि के सम्बन्ध में पाराशर का मत सर्वमान्य है—

पश्यन्ति सप्तमं सर्वे शनिजीवकुजापुनः ।

विशेषतश्चत्रिदशत्रिकोणचतुरष्टमान् ॥ ल० पा० ५

एकपाद, द्विपाद तथा त्रिपाद दृष्टि के सम्बन्ध में स्मरणीय श्लोक मिलता है—

त्र्यांश शनिर्देवगुरुस्त्रिकोणं तुर्याष्टमं भूमिसुतः प्रपूर्णम् ।

ज्ञार्केन्दुशुक्राः क्रमपादवृद्ध्या पश्यन्ति चास्तं सकलाः प्रपूर्णम् ॥

अथ लग्नपत्यादिदृष्टिविशेषमाह—

कथयन्ति पादयोगं पश्यति सौम्यौ न लग्नपो लग्नम् ।

लग्नाधिपश्च पश्यति शुभग्रहो नार्धयोगं च ॥ ६३ ॥

**दीप्ति**—यदि सौम्यः शुभ ग्रहो लग्नं पश्यति, लग्नपो लग्नेशो लग्नं न पश्यति तदा (बुधाः) पादयोगं चतुर्थाशयोगं १/४ वा [विंशोपकानां पादयोगं ५] कथयन्ति । एवमेव लग्नाधिपो लग्नेशो लग्नं पश्यति शुभग्रहो न पश्यति तदा अर्धयोगं १/२ कथयन्ति । विंशोपकानामर्धांशाः १० कार्यसिद्धिदाः ।

**हिन्दी**—यदि शुभ ग्रह लग्न को देखता हो और लग्नेश लग्न को न देख रहा हो तो पादयोग [१/४] होता है । लग्नेश को देख रहा हो और शुभ ग्रह न देखता हो तो अर्धयोग [१/२] होता है ।



५ विंशोपक पहली स्थिति में मिलते हैं । दूसरी स्थिति में १० । इन दोनों स्थितियों में कार्यसिद्धि कही गई है ।

**एकः शुभग्रहो यदि पश्यति लग्नाधिपो विलोकयति ।**

**पादोनयोगमाहुस्तदा बुधाः कार्यसिद्धयै ॥ ६४ ॥**

**दीप्तिः**—यदि लग्नमेकः शुभग्रहः सौम्यग्रहः पश्यति लग्नाधिपो लग्नेशोऽपि [लग्नं] विलोकयति तदा बुधाः कार्यसिद्धयै पादोनयोगम् [३/४, वा  $\frac{२० \times ३}{४} = १५$  विंशोपकः भवन्ति ] आहुः । अस्यामवस्थायां

कार्यसिद्धिर्भवत्येव ।

**हिन्दी**—यदि लग्न को एक शुभ ग्रह देखता हो तथा उसे लग्नेश भी देख रहा हो तो पादोनयोग कहा जाता है । यह योग प्रश्नकार्य की सिद्धि का सूचक होता है ।

पादोनयोग में १५ विंशोपकों की प्राप्ति होती है । यह लग्नेश तथा शुभग्रह की तीसरी स्थिति होती है ।

अपि च

**लग्नपतिदर्शने सति शुभग्रहौ द्वौ त्रयोऽथवा लग्नम्**

**पश्यन्ति यदि तदानीमाहुर्योगं त्रिभागोनम् ॥ ६५ ॥**

**दीप्तिः**—अथ लग्नपतिदर्शने सति यदि अन्यौ द्वौ त्रयो वा शुभग्रहा लग्नं पश्यन्ति तदानीं तस्मिन्काले त्रिभागोनयोगमाहुः । अत्र प्राचीनाचार्याः त्र्यंशा न्यूना मन्यन्ते अर्थाद् त्रिभिर्भागैर्न्यूनं योगं  $२०-३ = १७$  विंशोपकाः । अथवा समग्रभागस्य  $\frac{३}{२०}$  भागं न्यूनं क्रियते तदा  $१-\frac{३}{२०} = \frac{२०-३}{२०} = \frac{१७}{२०}$  भागाः ।

**हिन्दी**—यदि लग्नेश से दृष्ट लग्न अन्य दो या तीन शुभग्रहों से दृष्ट हो तो त्रिभागोन योग कहलाता है । समग्र विंशोपक बल का  $\frac{३}{२०}$  वां हिस्सा कम करने पर  $१-\frac{३}{२०} = \frac{१७}{२०}$  अर्थात् १७ विंशोपक प्राप्त होगा । ऐसी अवस्था में कार्यसिद्धि सुनिश्चित माननी चाहिए । प्राचीनटीकाकारों ने २०

विंशोपकों में से सीधे ३ अंश निकालकर विंशोपक बल माना है । इसका आशय है कार्यसिद्धि की संभावना १७/२० भाग है ।

अपि च

**क्रूरावेक्षणवर्जाश्चत्वारः सौम्यखेचरा लग्नम्**

**लग्नेशदर्शने सति पश्यन्ति पूर्णयोगकराः ॥ ६६ ॥**

**दीप्तिः**—क्रूराणां पापानां ग्रहाणामवेक्षणं विलोकनं तेन वर्जाः रहिताश्चत्वारः सौम्यखेचरा शुभग्रहाः लग्नेशदर्शने सति लग्नं पश्यन्ति तदा पूर्णयोगकराः भवन्ति । अत्र ग्रहाणां विंशतिविंशोपका लभ्यन्ते । तैर्विंशोपकैः कार्यस्य पूर्णफलप्राप्तिर्भवत्येव ।

**हिन्दी**—यदि लग्नेश से दृष्ट लग्न क्रूर ग्रहों की दृष्टि से रहित हो तथा चार ग्रहों से दृष्ट हो तो पूर्णयोग कारक होता है । ऐसी अवस्था में विंशोपक बल पूर्ण रूप से मिलता है ।

यहाँ चार श्लोकों में लगातार कार्यसिद्धि की आनुपातिक परिस्थितियों का आकलन किया गया है ।

प्रश्नकुण्डली के आधार पर क्रमशः ५, १०, १५, १७ तथा २० विंशोपकों की प्राप्ति के अनुरूप ही फलप्राप्ति की भविष्यवाणी करनी चाहिए ।

यदि “पाद योग” हो तो कार्यसिद्धि की २५ प्रतिशत आशा करनी चाहिए । इसी प्रकार ‘अर्धयोग’ में ५० प्रतिशत, ‘पादोन योग’ में ७५ प्रतिशत तथा ‘त्रिभागोन योग’ में ८५ प्रतिशत कार्यसिद्धि की संभावना होती है । योग होने पर कार्य सिद्धि अवश्यमेव होती है ।

इति लग्नविचारद्वारम्

अथ विनष्टग्रहविचारद्वारम् ॥ १० ॥

**क्रूराक्रान्तः क्रूरयुतः क्रूरदृष्टस्तु यो ग्रहः ।**

**विरश्मितां प्रपन्नश्च स विनष्टो बुधैः स्मृतः ॥ ६७ ॥**

**दीप्तिः**—क्रूरेण ग्रहेणाक्रान्तः क्रूराक्रान्तः अत्राक्रान्त शब्दः पीडावाचकः । क्रूरयुतः क्रूरेण युक्तः सहितः क्रूरदृष्टः क्रूरेण दृष्टस्तु यो ग्रहः, अत्र

पूर्णदृष्टि एव फलदा भवति । विरश्मितां प्रपन्नो रश्मिहीनतां प्राप्तः, अस्तङ्गत इत्यभिप्रायः । एवंभूतो ग्रहो बुधैर्गणकैर्विनष्टः स्मृतः कथित इति ।

**हिन्दी**—जो ग्रह क्रूर ग्रह से पीड़ित, क्रूर ग्रह से युक्त, क्रूर ग्रह से दृष्ट और रश्मि हीन होता है उसे विद्वान् गणक विनष्ट ग्रह कहते हैं ।

**क्रूरेण जीयमानो यो राहुपार्श्वे यथा रविः ।**

**क्रूराक्रान्तः स विज्ञेयः क्रूरयुक्तः समेशऽके ॥ ६८ ॥**

**दीप्तिः**—क्रूरेण ग्रहेण यो ग्रहो जीयमानो भवति स क्रूराक्रान्तो विज्ञेयो विजानीयः । अस्यार्थः कश्चित्सौम्यग्रहः क्रूरेण ग्रहेण यदा पराजीयमानो भवति तदा स क्रूराक्रान्तो विज्ञेयः । अत्र दृष्टान्तमपि ग्रन्थकृता प्रस्तूयते—यथा राहुस्तमोग्रहस्तस्यपार्श्वे यदा रविः समागच्छति तदा स तेन (राहुणा) जीयते । यस्मिन्नंशे ग्रहो भवति तस्मिन्नंशे राशिभागे यदि क्रूरो भवति तदा क्रूरयुक्त उच्यते एकांशे स्थितत्वात् केचनाचार्या इत्याहः । अपरे च क्रूरग्रहो यदि अन्येन युक्तः समानांशे स्थितः स्यात् तदा 'क्रूरयुत' इति ज्ञेयः ।

**हिन्दी**—क्रूर ग्रह से पराजित ग्रह क्रूराक्रान्त कहलाता है—जैसे राहु के समीपस्थ सूर्य । कोई (सौम्य) ग्रह समान नवमांश में क्रूर ग्रह से युक्त होता है तो वह क्रूरयुक्त कहलाता है ।

दो ग्रहों की किरणें जब परस्पर मिलती हैं तो 'अंशुविमर्द' नाम का युद्ध कहलाता है । एक ग्रह जब दूसरे से अत्यासन्न आता है तो भी उनमें शरान्तर तुल्य दूरी होती है । दो ग्रहों के बीच शरान्तरतुल्य दूरी में एक अंश का अन्तर हो और एक ग्रह लघुबिम्बीय हो तो 'अपसव्य युद्ध' कहलाता है । यदि यही दूरी एक अंश अधिक हो और दोनों ग्रह महद् बिम्बीय हों तो 'समागम' कहलाता है । इस सन्दर्भ में सूर्यसिद्धान्त दर्शनीय है—

उल्लेखं तारकास्पर्शाद् भेदे भेदः प्रकीर्त्यते ।

युद्धमंशुविमर्दाख्यमंशुयोगे परस्परम् ॥

अंशादूनेऽपसव्याख्यं युद्धमेकोऽत्र चेदणुः ।

समागमोऽशादधिके भवतश्चेद्बलान्वितौ ॥

अपसव्य युद्ध में जो ग्रह लघुबिम्बीय होता है वह मदद् बिम्बीय ग्रह की किरणों से आच्छादित हो जाता है तथा उसकी किरणें विफल प्रभाव हो जाती है । अतः लघुबिम्बीय ग्रह महद् बिम्बीय ग्रह से पराजित होता है ।

वराहमिहिर के अनुसार उत्तर दिशा में स्थित स्पष्ट किरणों वाला ग्रह जयी तथा दक्षिणदिशास्थित विवर्ण, रुक्ष रश्मिहीन ग्रह पराजित होता है—

दक्षिणदिक्स्थः परुषो वेपथुरप्राप्य सन्निवृतोऽणुः ।

अधिरुढो विकृतो निष्प्रभो विवर्णश्च यः स जीतः ॥ इति

पूर्णया दृश्यते दृष्ट्या क्रूरदृष्टः स उच्यते ।

प्रविविक्षुः प्रविष्टो वा सूर्यराशौ विरश्मिकः ॥ ६९ ॥

दीप्तिः—क्रूरग्रहेण यो ग्रहो दृश्यते स क्रूरदृष्टो भवति । नैकपादद्विपादत्रिपादादिर्दृष्टिरत्र कलनीया । सम्पूर्णया दृष्ट्या यो ग्रहो क्रूरेण दृश्यते स एव क्रूरदृष्ट इत्युच्यते । सूर्यमण्डले प्रविविक्षुः प्रवेष्टुकामो ग्रहः प्रविष्टो वा विरश्मिको जायते । सूर्यो यस्मिन् राशौ स्थितो भवति तस्मिन् अन्यो ग्रहो यदि प्रविशति तदा स विरश्मिक अस्त इति जायते । बुधशुक्रौ यदा कालांशे प्रविष्टौ भवतस्तदा एव तौ विरश्मिकौ कथ्येते । पञ्चताराग्रहाणां या स्थितिर्भवति सा शुक्रबुधयोर्न भवति । इमौ सवर्वदै सूर्यस्य सहचरिणौ (९० अंशान्तरे) भवतः ।

हिन्दी—क्रूर ग्रह से जो कोई अन्य सौम्य ग्रह पूर्ण दृष्ट होता है तो उसे 'क्रूरदृष्ट' कहते हैं । सूर्य राशि में अर्थात् स्पष्ट सूर्य जिस राशि में स्थित हो यदि कोई ग्रह प्रवेश करने वाला हो या प्रवेश कर चुका हो तो वह विरश्मिक (किरणों से हीन) कहलाता है ।

अथ विनष्टग्रहप्रभावमाह—

लग्नाधिपे विनष्टे स्याद् विनष्टावयवः पुमान् ।

विनष्टजातिवर्णश्च शुभकारा विपर्यये ॥ ७० ॥

दीप्तिः—प्रागुक्तप्रकारेण विनष्टग्रहाणां निर्णयं विधाय फलं चिन्त्यम् । लग्नाधिपे लग्नेशे विनष्टे सति पुमान् प्रश्नकर्ता विनष्टावयवो विकलाङ्गो लक्ष्मयुक्तो वा स्याद् । ग्रहाणां जात्यादिकमपि पूर्वं वर्णितम् । तेन यदि कश्चिद्

विनष्टजातिवर्णश्च ग्रहो शूद्रश्यामम्लेच्छरूपो वा जन्मकाले स्थितः तदा प्रच्छकस्यापि जात्यादिकं स्वरूपञ्च विनष्टं वाच्यमिति । अस्माद् विपर्यये प्रतिकूले अर्थाद् अविनष्टे लग्नेशे शुभाकारा अविनष्टत्वं वाच्यम् । अस्यां प्रतिकूलपरिस्थितौ प्रच्छकस्य शरीरे चिह्नानि, विकाराश्च नलक्ष्यन्ते ।

**हिन्दी**—लग्नेश के विनष्ट होने पर व्यक्ति का शारीरिक अवयव, जाति तथा वर्ण विनष्ट होता है । विपरीत स्थिति [अविनष्ट लग्नेश की स्थिति] में शुभ आकृति होती है ।

पूर्व में श्लोकों में विनष्ट ग्रह के लक्षण दिये जा चुके हैं । यदि लग्नेश विनष्ट हो तो शरीर में चिह्न, और अङ्ग हीनता होती है । साथ ही साथ व्यक्ति अशुभ वेष तथा हीन जाति वाला होता है । इस विधि से चौरादि प्रश्न में अपहर्ता की जाति और वेष का पता लग जाता है ।

**एवं धनादिस्थानेषु विनष्टेऽधिपतौ वदेत् ।**

**धनभावभ्रातृभावप्रमुखान् प्रत्ययान् सुधीः ॥ ७१ ॥**

**दीप्तिः**—एवं पूर्वोक्तप्रकारेण धनसहजसुखविद्यासन्तानजायाभाग्य-कर्मायादिस्थानेष्वपि यस्य भावस्याधिपतिर्विनष्टो भवति तस्य-तस्य कार्यस्य हानिर्जायते । अतो भावाधिपतीन् विलोक्य प्रत्यनेन सुधीः प्रवदेत् ।

**हिन्दी**—इस प्रकार धन, सहजादि भावों के अधिपति यदि विनष्ट हों तो धन, भाई प्रभृति विषयों का फल बुद्धिमान् गणक द्वारा विनष्ट कहना चाहिए । किसी भी भाव के विनष्ट अधिपति के द्वारा उस भाव के फल को सुनिश्चित विनष्ट कहना चाहिए । धनेश यदि विनष्ट हो तो स्थिर सम्पति तथा कुटुम्ब की क्षति होती है । इसी प्रकार समस्त भावों से विचारणीय विषयों को देख कर उसके विनष्ट अधिपति के कारण पृथक् पृथक् फल विनष्टता कही जाती है ।

इति विनष्टग्रहविचारद्वारम्

अथ राजयोगद्वारम् ॥ ११ ॥

आद्यो लग्नपतिः कार्ये लग्ने कार्याधिपो यदि ।

द्वितीयो लग्नपो लग्ने कार्ये कार्याधिपो भवेत् ॥ ७२ ॥

लग्नपः कार्यपश्चापि लग्ने यदि तृतीयकः ।

चतुर्थः कार्यगौ स्यातां यदि लग्नपकार्यपौ ॥ ७३ ॥

चतुर्षु तूभयत्रापि चन्द्रदृग्दर्शनं मिथः ।

कार्यसिद्धिस्तदा ज्ञेया मित्रे चेदधिकं शुभम् ॥ ७४ ॥

दीप्तिः—कार्यसिद्धिकराणां योगानां वर्णनं ६१-६२ श्लोकयोः कृतम् ।

इदानीं राजयोगं निरूपयति—आद्यः प्रथमो योगस्तदा भवति यदा लग्नपतिः कार्ये लग्नेशः कार्य भावे कार्याधिपः कार्येशः लग्ने लग्नभावे च भवति । द्वितीयो राजयोगस्तदा भवेत् यदा लग्नपो लग्नेशो लग्ने भवति कार्याधिपः कार्येशः कार्ये च भवति । तृतीयराजयोगस्तदा भवेत् यदा लग्नपः कार्यपश्च लग्नेशकार्येशौ लग्ने स्थितौ भवतः । चतुर्थो राजयोगस्तदा स्यात् यदा लग्नपकार्यपौ लग्नेशकार्येशौ कार्यगौ कार्यभावस्थितौ स्यातां भवत इति भावः । इदानीं राजयोगं प्रस्तूय कार्यसिद्धियोगं निरूपयति—चतुर्षु राजयोगेषु तु मिथः परस्परमुभयत्रापि चन्द्रदृग्दर्शनं तदा कार्यसिद्धिज्ञेया । अयमत्राशयः चन्द्रो लग्नेशकार्येशौ पश्यति लग्नपकार्यपौ वा चन्द्रमसं पश्यतस्तदा कार्यं सिद्धयति । यदि चन्द्रो मित्रगृहे स्थितो विद्यते लग्नपकार्यपौ तं पश्यतस्तदाऽधिकं शुभं विज्ञेयम् ।

राजयोगः कार्यसिद्धिकरो भवति । तत्रापि विशेषस्तदा यदा चन्द्र उभौ पश्यति, अथवा लग्नपकार्यपौ चन्द्रमसं पश्यतस्तदा नूनमेव शुभं भवति ।

हिन्दी—यदि लग्नेश कार्य भाव में तथा कार्येश लग्न भाव में स्थित हो तो प्रथम राजयोग होता है । लग्नेश लग्न में तथा कार्येश कार्यभाव में बैठा हो तो यह राजयोग का द्वितीय प्रकार होता है । लग्नेश और कार्येश दोनों ही लग्न में स्थित हों तो राजयोग का तृतीय प्रकार तथा कार्यभाव में लग्नेश और कार्येश बैठे हों तो चतुर्थ राजयोग होता है । इन चार राजयोगों में परस्पर चन्द्रमा की

दृष्टि हो तो कार्यसिद्धि समझनी चाहिए । यदि चन्द्रमा मित्र गृही हो तो और अधिक शुभ फल मिलता है ।

यदि किसी ने अपने कुटुम्ब से सम्बन्धित प्रश्न किया हो तो राजयोग के निम्नलिखित चार प्रकार होंगे ।—

(प्रथम राजयोग)

|        |            |     |        |
|--------|------------|-----|--------|
| ३      | मं गु २    | १ २ |        |
|        | सू बु शु १ |     | १ १ रा |
| ४      |            | १ ० |        |
| च के ५ | ७          |     | श. ९   |
| ६      |            | ८   |        |

(द्वितीय राजयोग)

|       |               |     |        |
|-------|---------------|-----|--------|
| के. ५ | मं चं शु ४    | २   |        |
|       | सू. बु. गु. ३ |     | १      |
| ६     |               | १ २ |        |
| ७     | श. ९          |     | १ २ रा |
| ६     |               | १ ० |        |

## (तृतीय राजयोग)

|       |            |       |   |
|-------|------------|-------|---|
| ७     | सू.मं.के ५ | ८     | ४ |
| ८     | बु. शु. ६  | १०    | २ |
| १०    | श. ९       | ११ रा | १ |
| ११ रा | चन्द्र १२  | ३ गु. | २ |

## (चतुर्थ राजयोग)

|            |         |       |         |
|------------|---------|-------|---------|
| सू.चं.के ५ | ३       | बुध ६ | १२ गुरु |
| बुध ६      | शुक्र ४ | ७     | १       |
| ७          | १०      | शनि ८ | भौ १२   |
| शनि ८      | १०      | ९     | ११ रा.  |

**प्रथम राजयोग**—लग्नेश मंगल द्वितीय भाव में तथा द्वितीयेश शुक्र लग्न में है ।

अतः कुटुम्ब सम्बन्धी प्रश्न सफल होगा ।

**द्वितीय राजयोग**—लग्नेश बुध लग्न में तथा द्वितीयेश चन्द्र द्वितीय भाव में है ।

अतः कुटुम्ब सम्बन्धी कार्यसिद्धि होगी ।

**तृतीय राजयोग**—लग्नेश और द्वितीयेश लग्न में योग कर रहे हैं तथा उन पर

चन्द्रमा की दृष्टि है । अतः कौटुम्बिक कार्यसिद्धि होगी ।

**चतुर्थ राजयोग**—लग्नेश तथा द्वितीयेश दोनों द्वितीय भाव में योग कर रहे हैं ।

अतः यह राजयोग का चतुर्थ प्रकार है । इस प्रश्न लग्न में कुटुम्ब से सम्बन्धित कार्य की सिद्धि होगी ।



चतुर्विध राजयोगों का प्रतिपादन कार्येश और लग्नेश की स्थिति के आधार पर किया गया है । इसके पूर्व ६०वें तथा ६१वें श्लोक में लग्नेश तथा कार्येश की दृष्टि के आधार पर कार्यसिद्धियोग का प्रतिपादन किया गया है ।

‘उभयत्र चन्द्रदृग्दर्शन’ मिथः’ का भाव है चन्द्रमा लग्नेश और कार्येश को देखता हो तथा कार्येश और लग्नाधिप चन्द्रमा को देखते हों तो कार्यसिद्धि होती है । ऐसी स्थिति पूर्णरूप से तीसरे और चतुर्थ राजयोग में आती है जब लग्नेश और कार्येश एक साथ लग्न या कार्य भाव में स्थित होते हैं और उनसे सातवें स्थान में चन्द्रमा बैठा होता है । शेष प्रथम और द्वितीय योग में यह स्थिति आंशिक रूप से घटती है, क्योंकि चन्द्रमा का दृष्टि योग लग्नेश या कार्येश में से किसी एक के ही साथ हो पाता है ।

चन्द्रमा सौम्य क्षिप्र होने के कारण शीघ्र ही कार्यसिद्धि करता है । इसीलिए ग्रन्थकार ने इसे ‘इन्दुः सर्वत्र बीजाभः’ कहा है ।

**चन्द्रदृष्टि विनान्यस्य शुभस्य यदि दृग्भवेत् ।**

**शुभं प्रयोजनं किञ्चिदन्यदुत्पद्यते तदा ॥ ७५ ॥**

**दीप्तिः—**चन्द्रदृष्टि विना चन्द्रस्य वीक्षणं विना यदि अन्यस्य शुभस्य ग्रहस्य दृग्भवेत् दृष्टिर्भवेत् तदा किञ्चिद् अन्यच्छुभं प्रयोजनमुद्देश्यमुत्पद्यते । अत्र भावो यदि चन्द्रो लग्नेश्वरं न पश्यति परं किञ्चिदन्यो ग्रहः सौम्यो लग्नं कार्यं वा पश्यति तदा प्रारब्धकार्यमध्ये कार्यान्तरं नवीनं प्रयोजनमिति भवति ।

**हिन्दी—**यदि (कार्येश या लग्नेश पर) चन्द्रमा ग्रह की दृष्टि न हो कर किसी अन्य शुभग्रह की दृष्टि हो तो कार्यारम्भ के बीच में अन्य नवीन शुभ प्रयोजन उत्पन्न होता है ।

ऊपर के चार राजयोगों में से कोई एक राजयोग लगा हो परन्तु उस पर चन्द्रमा की दृष्टि न हो कर किसी दूसरे शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो प्रश्नसम्बन्धी कार्य न हो कर बीच में ही कोई दूसरा शुभ कार्य शुरु हो जाता है ।

**राजयोगा अमी ख्याताश्चत्वारोऽपि महाबलाः ।**

**अत्रैव दृष्टियोगेन सामान्येन फलं स्मृतम् ॥ ७६ ॥**

**दीप्तिः**—अमी इमे चत्वारोऽपि पूर्वोक्ता राजयोगाः प्रसिद्धाः महाबला अतीव बलवन्तो भवन्ति । अत्रैव राजयोगे चन्द्रादि दृष्टिसद्भावे सति सामान्येनैव फलं स्मृतमिति ।

**हिन्दी**—ये चारों राजयोग प्रख्यात तथा अत्यधिक बलिष्ठ हैं । इन चारों योगों और ग्रहों की दृष्टि के द्वारा फल सामान्य का निर्देश किया गया है ।

अशुभ ग्रहों की दृष्टि कार्य में विघ्न डालने वाली तथा शुभ ग्रहों की दृष्टि पूर्णतया सिद्धि देने वाली होती है । अतः राजयोगों पर ग्रह दृष्टि के प्रभाव का आकलन करके ही फल को कहना चाहिए ।

**अर्द्धयोगो विनिर्दिष्टः परस्परदृशं बिना ।**

**चन्द्रदृष्टि विना ज्ञेयं शुभं पादफलं बुधैः ॥ ७७ ॥**

**दीप्तिः**—परस्परदृशं विना मिथ अवलोकनं विना, अर्थात् चतुर्णां योगानां मध्ये एकोऽपि राज्यदो योगः स्यात् परं लग्नाधिपकार्याधिपयोः परस्परं वीक्षणं न भवति तदा अर्द्धयोगो (१० विंशोपकाः) भवति । अत्राशय अर्द्धमेव कार्यसिद्धिर्जायते । चन्द्रदृष्टिं विना शुभं पादफलं [१/४ अंशः] ज्ञेयमर्थात् २५ प्रतिशतमेव कार्यं सम्पद्यते । लग्नपकार्यपयोः परस्परं चन्द्रदृष्टिर्न स्यात् तदा पादफलं [५ विंशोपकाः] लभ्यत इति भावः ।

**हिन्दी**—परस्पर दृष्टि के बिना 'अर्द्धयोग' होता है तथा चन्द्रमा की दृष्टि के बिना शुभ पादफल प्राप्ति योग होता है । ऐसा विद्वान् गणकों ने कहा है ।

अर्थात् लग्नेश और कार्येश के परस्पर अबलोकन के बिना 'अर्द्धयोग' होता है । इस योग में कार्य की सिद्धि ५० प्रतिशत ही हो पाती है । राजयोग हो परन्तु लग्नेश और कार्येश पर चन्द्रमा की दृष्टि न पड़ती हो तो 'पादफल' अर्थात् चतुर्थांश फल मिलता है । ऐसी स्थिति में ग्रहविंशोपकबल मात्र ५ ही होता है ।

ये राजयोग की विकल्पात्मक स्थितियाँ हैं । इस सन्दर्भ में इसी ग्रन्थ के ६३, ६४ तथा ६५ वें श्लोक में कहा जा चुका है । पूर्वोक्त स्थितियाँ राजयोग

में पूर्ण प्रभावी होती हैं । यहाँ इस तथ्य का पुनः स्मरण कराया गया है । उदाहरण के तौर पर प्रश्न लग्न मेष हो और सन्तान सम्बन्धी प्रश्न हो तथा सूर्य लग्न में एवं मंगल पञ्चमभाव में बैठा हो तो 'अर्द्धयोग' होगा, इस परिस्थिति में चन्द्रमा का लग्नेश या कार्येश [मंगल या सूर्य] को देखना अनिवार्य है अन्यथा 'पादयोग' लगने के कारण कार्यसिद्धि की सम्भावना मात्र २५ प्रतिशत ही रह जाती है ।

**परस्परं विषमता चन्द्रयोगो भवेद्यदि ।**

**तदार्थफलमादिष्टं प्रपञ्चोऽयं मतो मम ॥ ७८ ॥**

**दीप्तिः**—यदि लग्नेशकार्येशयोः परस्परं विषमता शत्रुवृत्तिर्दृष्टिबाधा वा भवेद् तथा च चन्द्रयोगः चन्द्रेण योगः [दृष्ट्या युत्वा वा ] भवेद् तदाऽर्द्धफलमादिष्टं कथितमयं प्रपञ्चः राजयोगफलविस्तारो मतः कथितः, मम मे । परस्मिन् शास्त्रान्तरे मतोऽयं ग्रन्थकारस्येति वादः प्रथितः ।

**हिन्दी**—लग्नेश और कार्येश में आपस में विषमता [शत्रुता या दृष्टि हीनता] होने पर भी यदि चन्द्रमा से उनका योग [दृष्टि या युति] होता है तो आधा फल कहा गया है । यह विदग्धवाद ग्रन्थकार का है ।

नैसर्गिक मैत्रीचक्र के अनुसार यदि लग्नेश और कार्येश परस्पर शत्रुग्रह हों अथवा दोनों की दृष्टि स्थान वैषम्य के कारण एक दूसरे पर न पड़ रही हो तो कार्यसिद्धि आधी ही होती है । यह मत (सिद्धान्त) प्रथमतया पद्मप्रभुसूरी ने उद्घाटित किया है ।

इति राजयोगद्वारम्

अथ लाभालाभविचारद्वारम् ॥ १२ ॥

**लग्नेशो वीक्षते लग्नं कार्येशः कार्यमीक्षते ।**

**कार्यसिद्धिर्भवेदिन्दुः कार्यमेति परं यदा ॥ ७९ ॥**

**दीप्तिः**—लग्नेशो लग्नपो लग्नं वीक्षते पश्यति, कार्येशः कार्यपः कार्यं कार्यभावमीक्षते वीक्षते कार्यसिद्धिर्भवेत् परं कदा कार्यसिद्धिर्भविष्यतीत्या-कांक्षायां यदा इन्दुचन्द्रः कार्षमेति प्रति गच्छति कार्षभावे वा प्रविशति

यावत्कालपर्यन्तं चन्द्रः कार्यभावं न प्राप्नोति तावत्कालपर्यन्तं कार्यसिद्धौ विलम्बो वाच्यः ।

**हिन्दी**—लग्नेश लग्न भाव को तथा कार्येश कार्यभाव को देखता हो तो कार्य की सिद्धि होती है, परन्तु जब चन्द्रमा कार्य स्थान में आता है ।

प्रश्नकालिक कुण्डली में यदि लग्नेश और कार्येश अपने-अपने स्थानों को देख रहे हों तो कार्यसिद्धि योग होता है । यदि कोई यह पूछे कि हमारा प्रश्नसम्बन्धी कार्य कितने दिनों में पूरा होगा तब चन्द्रमा का विचार करना आवश्यक होता है । गोचर का चन्द्रमा घूमते-घूमते कार्य भाव में जिस समय आता है उसी समय कार्य की सिद्धि होती है । प्रश्नकालिक चन्द्रमा को कार्यभाव में पहुंचने में जितना समय लगता है कार्यसिद्धि में उतने दिनों का विलम्ब समझना चाहिए । कभी-कभी यह विलम्ब २७ दिनों का भी हो सकता है ।

**लग्नाधिपतिर्लुब्धो लाभाधीशश्च दायको भवति ।**

**लग्नाधिपस्य योगो लाभाधीशेन लाभकरः ॥ ८० ॥**

**दीप्तिः**—लग्नाधिपतिर्लग्नेशो लुब्धो ग्राहको भवति, लाभाधीशो लाभेश्वरश्च दायको दाता भवति । लाभाधीश एकादशेशो भवति । लाभाधीशेन लग्नाधिपस्य योगो लाभकरः स्मृतः । अत्रायमाशयो यत् लाभस्तदैव स्यात् यदा लाभाधीशेन सह लग्नपस्य योगो जायते ।

**हिन्दी**—लग्नेश ग्राहक (लेने वाला) तथा लाभेश देने वाला होता है । लाभेश से साथ लग्नेश का योग लाभकारी होता है ।

आशय है कि लाभ सम्बन्धी प्रश्न में लाभग्राही होता है जबकि लाभेश लाभ दिलाने वाला होता है, फिर भी यदि लग्नेश एकादशेश (लाभेश) से योग करता है तो वह ग्रहीता से दाता बन जाता है । यह लग्नेश और लाभेश के प्रति कहा गया सामान्य वचन है ।

भवति परं लाभकरस्तदैव यदि भवति चन्द्रदृग्लाभे ।

योगाः सर्वेऽप्यफलाश्चन्द्रमृते व्यक्तमेवैतत् ॥ ८१ ॥

दीप्तिः—परं लग्नेशो लाभकरस्तदा एव भवति यदा चन्द्रदृक् चन्द्रमसो दृष्टिर्लाभे भवति । ऋते चन्द्रं सर्वेऽपि योगा अफला भवन्ति । सिद्धान्तोऽसौ प्रथितः । व्यक्तम् एव एतत् तथ्यमिदं सुविदितम् ।

हिन्दी—लग्नेश लाभेश के साथ तभी लाभकारी होता है जब चन्द्रमा की दृष्टि लाभ भवन पर पड़ती है, अन्यथा नहीं । चन्द्रमा के विना सभी अफल (बाझें) हो जाते हैं । यह स्पष्ट तथ्य है ।

लग्नेश और लाभेश का योग परस्पर स्थान परिवर्तन या स्थान योग से हो सकता है ।

आचार्य पद्मप्रभुसूरि ने चन्द्रबल की प्रशंसा कतिपय श्लोकों में की है । 'इन्दुः सर्वत्र बीजाभो, कह कर इन्होंने चन्द्रमा की कार्यसिद्धि विषयक महत्ता को लक्षित किया है ।

पण्याधीशेनैवं कर्मेशेनैव निवृत्यधीशेन ।

मृत्युपतिना च योगो लग्नाधीशस्य वक्तव्यः ॥ ८२ ॥

तत् तत्स्थानेक्षणतः पण्यविवृद्धिः कर्मबुद्धिश्च ।

विबुधैस्तदा निवृत्तिमृत्वोर्भावः परेऽप्येवम् ॥ ८३ ॥

दीप्तिः—एवं पण्याधीशेन पूर्वोक्तविधिना द्वितीयेशेन सह कर्मेशेनैव दशमेशेनैव निवृत्यधीशेन सप्तमेशेन, मृत्युपतिना चाष्टमेशेन लग्नाधीशस्य योगो वक्तव्यः कथनीयः । अत्राशयो यदि लग्नेशस्य एतेषां चतुर्णां ग्रहाणां मध्ये येन सह योगो भवति तदा वक्ष्यमाणरीत्या फलं वाच्यम् । तत्तत् स्थानेक्षणतः पण्यकर्मसप्तमाष्टमादिस्थानविलोकनात् पण्यविवृद्धिः ऋयाणकादिनां वस्तूनां वृद्धिः, कर्मवृद्धिश्च दशमस्थानजन्यवस्तूनां वृद्धिः निवृत्तिमृत्वोः सम्प्राप्तमयोः भावयोर्वृद्धिश्च विबुधैस्तदा तादृशं फलं वक्तव्यम् । एवमेवाऽपरेऽपि भावा विचारणीयाः ।

हिन्दी—पूर्वोक्त प्रकार से पण्याधीश (द्वितीयेश) कर्मेश (दशमेश) निवृत्यधीश (सप्तमेश), अष्टमेशादि का लग्नेश के साथ योग कहना चाहिए ।

इन (योग) स्थानों पर भावेश या चन्द्रमा की दृष्टि पड़ने से क्रमशः पण्य, कर्म, जाया, तथा मृत्यु की वृद्धि समझनी चाहिए। इसी प्रकार अन्य भावों के फल को विचारपूर्वक कहना चाहिए। किसी भी भाव के स्वामी का लग्नेश के साथ योग होने पर उस भाव का फल अवश्य ही मिलता है। यदि योग स्थान पर चन्द्रमा की दृष्टि पड़ जाए तब तो फल प्राप्ति अवश्यमेव होती है। लग्नेश और भावेश का योग ऐसे स्थान पर हो जहाँ से भावेश अपने भाव को देख रहा हो तो भी फलप्राप्ति होती है। फल की शुभ स्थिति या अशुभ स्थिति का बोध भावेश के अनुसार होता है।

इति लाभालाभविचारद्वारम् ।

अथ लग्नेशस्थितिद्वारम् ॥ १३ ॥

लग्नेशो यदि षष्ठे स्वयमेव रिपुस्तदा भवत्यात्मा ।

मृत्युकृदष्टमगोऽसौ व्ययगः सततं व्ययं कुरुते ॥ ८४ ॥

दीप्तिः—यदि लग्नेशः षष्ठे रिपुस्थाने स्यात् तदाऽऽत्मा स्वयमेव लग्नेश एव रिपुः स्यात् । लग्नेशः षष्ठस्थाने स्थितः सन् स्वयमेव विनाशको भवतीति भावः । असावष्टमयो मृत्युकृन्मृत्युदायको भवति । एवञ्च व्ययगो द्वादशभावस्थः सततमहर्निशं व्ययं द्रव्यनाशं कुरुते ।

हिन्दी—यदि लग्नेश षष्ठ स्थान में स्थित हो तो वह स्वयं ही अपना शत्रु होता है। यही लग्नेश अष्टम स्थान में स्थित हो तो मृत्युकारक होता है और व्यय भाव में स्थित हो तो अहर्निश व्यय करता है।

वस्तुतः छः, आठ और बारह ये तीनों भाव अशुभ होते हैं। इन्हें त्रिक भी कहते हैं। इन तीन भावों में से कहीं भी स्थित लग्नेश अशुभ फल देता है। 'आत्मैव रिपुरात्मनः' की स्थिति व्यक्ति के जीवन में तब आती है जब उसका लग्नेश षष्ठभावस्थ होता है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति स्वयं ही दुर्बुद्धि ग्रस्त हो कर अपना नाश कर लेता है। आयु का विचार लग्न और अष्टम भाव से किया जाता है। यदि लग्नेश अष्टम स्थान में स्थित होता है तो वह शरीर के लिए अशुभ होता है।

कार्यसिद्धि में लग्न को पुष्प कहा गया है । यदि पुष्प ही अस्थान पतित होगा तब फल का हास अवश्यम्भावी है ।

**लग्नस्थं चन्द्रजं चन्द्रः क्रूरो वा यदि पश्यति ।**

**धनलाभो भवेदाशु किन्त्वनर्थोऽपि दृश्यते ॥ ८५ ॥**

**दीप्तिः**—यदि लग्नस्थं लग्नस्थितं चन्द्रजं बुधं चन्द्रो विधुः क्रूरः पापो वा पश्यति विलोकयति तदा आशु शीघ्रं धनलाभो द्रव्यलाभो भवेत् किन्तु अनर्थोऽपि दृश्यते । अत्राशयो धनलाभादनन्तरमेव काचिद् दुर्घटनाऽकल्पिता विपत्तिर्वा जायते ।

**हिन्दी**—यदि बुध ग्रह लग्न में बैठा हो और उसे चन्द्रमा या कोई दूसरा क्रूर ग्रह देख रहा हो तो प्राश्निक को शीघ्र ही धन लाभ होगा, परन्तु इसके बाद ही अनर्थ (दुर्घटना) भी होता है ।

यह भुवनदीपक का एक ख्यात 'कार्ययोग' है जो कभी विफल नहीं होता । यहां चन्द्रमा को क्रूर ग्रह की कोटि में रखा गया है क्योंकि बुध इससे नैसर्गिक विरोधभाव रखता है । अतः बुध चन्द्रमा का शत्रु ग्रह है । बुध वस्तुतः धन, स्वर्ण, आय तथा अन्य विशिष्ट उपलब्धियों को देने वाला ग्रह है । इसलिए प्रश्नलग्न से इसका योग निश्चित तौर से धन लाभ कारक होता है । इस योग में धनलाभ के पश्चात् ही कोई दुर्घटना अवश्य होती है । उदाहरणार्थ—

|      |     |      |             |
|------|-----|------|-------------|
| के ५ | ४   | बु ३ | सू.शु.बृ. २ |
| ६    | १   | २ मं | १           |
| ७    | ८ श | चं ९ | १ २ रा      |
|      |     |      | १०          |

यहाँ लग्नस्थ बुध चन्द्रमा और मंगल से दृष्ट होने के कारण लाभ और दुर्घटना दोनों का कारक है । यदि मंगल या अन्य किसी पाप ग्रह का योग बुध के साथ हो रहा हो तो यह फल पूर्ण रूप में नहीं घटता, क्योंकि दूसरा ग्रह भी अपनी प्रकृति के अनुरूप फल को प्रभावित करता

है । अतः ऐसी अवस्था में मिश्रित फल मिलता है । यदि बुध लग्नस्थ पर किसी शत्रु के घर में हो और लग्नेश विनष्ट हो तो भी यह फल नहीं मिलता है । अतः

किसी भी 'योग' पर विचार करते समय इन परिस्थितियों को भी अवश्य देखना चाहिए ।

**चन्द्रो लग्नपतिर्वाऽपि यदि केन्द्रे शुभाः स्थिताः ।**

**किंवदन्ती तदा सत्यास्यादसत्या विपर्यये ॥ ८६ ॥**

**दीप्तिः**—इयं किंवदन्ती सत्या असत्या वेति प्रश्ने यदि चन्द्रो विधुः, लग्नपति लग्नेशे वा, शुभा ग्रहाः वापि केन्द्रे स्थिताः सन्ति तदा किंवदन्ती सत्या विपर्यये विपरीते असत्या मिथ्या स्यात् ।

**हिन्दी**—यदि चन्द्रमा, लग्नेश या दूसरे भी शुभग्रह केन्द्र में स्थित हों तो किंवदन्ती (दूसरे द्वारा कही हुई बात) सत्य होती है । विपरीत स्थिति में असत्य होती है । कभी कभी किसी के सन्दर्भ में कोई अफवाह सुनने को मिलती है, जैसे अमुक कहीं गया था किसी ने उसे मार डाला, या अमुक चोर है प्रभृति । ऐसी स्थिति में क्या यह अफवाह सच है ? जानने के लिए प्रश्नकाल को आधार मान कर विचार किया जाता है ।

चन्द्र, लग्नेश और शुभ ग्रह यदि केन्द्र में स्थित हों तो उड़ती खबर सत्य होती है । केन्द्र में पाप ग्रह, पापाक्रान्त लग्न या पापदृष्ट लग्न होने पर किंवदन्ती मिथ्या होती है । यदि शुभ ग्रहों की दृष्टि लग्न पर पड़ रही हो तो अफवाह शुभ होती है विपरीत स्थिति में अशुभ समझनी चाहिए । यदि लग्नेश निकट भविष्य में वक्री होने वाला हो तो उड़ती खबर कुछ ही दिनों बाद असत्य साबित हो जाती है । इस सन्दर्भ में आचार्य नीलकण्ठ भी दीपककार से सहमत हैं—

लग्नन्तु लग्नेश्वरशीतगूदयैः शुभान्वितैः केन्द्रगतैस्तु सत्या ।

पापान्वितैः पापनिरीक्षितैश्च त्रिक्स्थितैर्वा भवतीह मिथ्या ॥

शुभदृग्योगतः सौम्यां वार्ता सत्यां विनिर्दिशेत् ।

पापदृग्योगतो दुष्टा वार्ता सत्येति कीर्त्यते ॥

लग्नेश्वरे भाविवक्रे मिथ्या वार्ता भविष्यति ॥

इति लग्नेशस्थिति द्वारम्



अथ गर्भक्षेमद्वारम् ॥ १४ ॥

क्षेम प्रश्ने च गर्भस्य गर्भ गर्भाधिपो भवेत् ।

न पश्यति ग्रहः क्रूरस्तत्र चास्ति<sup>३</sup> च्युतिस्तदा ॥ ८७ ॥

दीप्तिः—गर्भस्य क्षेमप्रश्ने कल्याणप्रश्ने गर्भाधिपः पञ्चमेशो गर्भ पञ्चमस्थानं न पश्यति, तत्र पञ्चमे स्थाने क्रूरो ग्रहोऽस्ति तदा च्युतिर्गर्भपातो भवेत् । विपर्यये सति विपर्ययो भवति । यदीदृशी स्थितिर्न भवति तदा गर्भस्य च्युतिरपि न भवतीति भावः ।

हिन्दीः—गर्भकुशलता सम्बन्धी प्रश्न में यदि गर्भाधिप (पञ्चमेश) गर्भस्थान (पञ्चम) को न देखता हो और वहाँ क्रूर ग्रह बैठा हो तो गर्भच्युति (गर्भपात) होती है ।

|               |        |    |
|---------------|--------|----|
| बृ. ३         | १      |    |
| ४             | २      | १२ |
| के. ५         | ११ रा. |    |
| मं. ६         | चं. ८  | १० |
| सू. बु. शु. ७ | श. ९   |    |

इस प्रश्नकुण्डली में पञ्चमेश बुध की दृष्टि, पञ्चम स्थान पर नहीं पड़ रही है तथा मंगल वही बैठा है । अतः इस प्रश्न कुण्डली में गर्भपात योग लगा है ।

गर्भस्य कुशलप्रश्ने पञ्चमे पापखेचरः ।

स्वस्वामिदृष्टिरहिते तदा गर्भच्युतिर्भवेत् ॥

गर्भ का मासेश यदि पृच्छाकाल में सबल हो और पञ्चमभाव शुभग्रह से दृष्ट और युत हो तो गर्भ सकुशल रहता है । प्रथमादि मास के अधिपति क्रमशः शुक्र, मंगल, गुरु, सूर्य, चन्द्र, शनि और बुध होते हैं । इसके बाद के मासों (आठवें, नवें तथा दसवें मासों) के स्वामी क्रमशः लग्नेश, चन्द्र और सूर्य होते हैं—

कललघनाङ्कुरास्थिचर्माङ्गजचेतनताः  
 सितकुजजीवसूर्यचन्द्रार्किबुधाः परतः ।  
 उदयपचन्द्रसूर्यनाथाः क्रमशो गदिता  
 भवति शुभाशुभं च मासाधिपतेः सदृशम् ॥

अतः गर्भमासेश, पञ्चमेश और शुभग्रह पञ्चमभाव के अनुकूल हों तो गर्भ की कुशलता कहनी चाहिए—

पञ्चमे शुभसंयुक्ते स्वामिना च युतेक्षिते ।  
 गर्भस्य कुशलं ज्ञेयं मासपे सबले बुधैः ॥

गर्भपात के अन्य योग

(१) गर्भ के जिस मास का मासेश पीड़ित होता है उस मास में गर्भपात हो जाता है—

‘मासाधिपतौ निपीडिते तत्कालं स्रवणं समादिशेत् ।

पीड़ित ग्रह का विचार दशमद्वार में किया जा चुका है ।

(२) यदि पञ्चम स्थान में शनि बैठा हो और उसे शुभग्रह न देखता हो तो गर्भपात होता है । राहु शुभग्रह से दृष्ट हुए विना स्वतन्त्र रूप से यदि पञ्चम भाव में बैठा हो तो गर्भ ही नहीं ठहरने देता है । इस सन्दर्भ में आचार्य मानसागर का मत दिया जा रहा है—

शनौ च गर्भपातः स्याद्राहौ गर्भो भवेन्न हि ।

(३) आचार्य नीलकण्ठ के अनुसार यदि व्ययेश पापग्रह हो और अस्तङ्गत हो या आपोक्लिम (३, ६, ९, १२) में हो शुभग्रह से युत न हो तथा पापग्रह से युत हो तो शिशु उत्पन्न होते या गर्भ में ही मर जाता है—

क्रूरश्चेदन्त्यपतिर्दग्धश्चापोक्लिमे युक्तः ।

क्रूरस्तु जातमात्रो म्रियते बालोऽथवा गर्भे ॥’

(४) यहीं पर गर्भनाश का एक और योग दिया गया है । प्रश्नलग्न चर राशि हो, लग्न में पापग्रह हो और चन्द्रमा का इत्थशालयोग होता हो तो गर्भपात होता है ।

अथवा चर लग्नेश तथा वक्री ग्रहों से चन्द्रमा का इत्थशाल योग होता हो तो भी गर्भपात होता है—

चरलग्ने क्रूरेन्दोर्मुथशिलभावे विनश्यति हि गर्भः ।

लग्नपशाशिनोस्तत्पतिस्थवक्रिमुथशिलेऽपि तथा ॥

शीघ्रगति ग्रह का मन्दगति ग्रह के साथ योग होने के पूर्व जब वह अपनी रश्मि मन्दगति ग्रह को प्रदान करता है तो इत्थशाल योग होता है । चन्द्रमा से इत्थशाल योग १२ अंशों के अन्तर तक होता है, लेकिन पूर्ण इत्थशाल एक या अर्द्ध (३० विकला) कला के अन्तर पर ही होता है ।

(५) प्रश्नलग्न में मंगल तथा शनि बैठे हों तो गर्भपात होता है ।

(६) पञ्चमेश और लग्नेश अष्टम भाव में बैठ गये हों और अन्य क्रूर ग्रहों से युक्त हों तो क्रूर ग्रहों की जितनी संख्या होगी गर्भपात भी उतनी बार होगा ।

इति गर्भक्षेमद्वारम्

अथ गुर्विणीप्रसवद्वारम् ॥ १५ ॥

अविनष्टो यदा गर्भाधिपो गर्भ निरीक्षते ।

तदैव प्रसवो गुर्व्या नान्यथेति विनिश्चयः ॥ ८८ ॥

दीप्तिः—यदा अविनष्टः क्रूरग्रहयुतिदृष्टिरश्मिभिर्हीनो गर्भाधिपः पञ्चमेशो गर्भ पञ्चमस्थानं निरीक्षिते विलोक्यते तदैव तस्मिन्नेव समये प्रत्यासन्नकाले गुर्व्या गर्भिण्याः प्रसवो विनिश्चयो वाच्यः, अन्यथा न इति भावः ।

यथाऽत्रोदाहरणमेकं द्रष्टव्यम् । केनाप्युक्तं कदा प्रसवं भविष्यति ? तदा प्रश्नसमयात् सूर्योदयादिष्टकालो नेयः । इष्टकालाद् स्पष्टं प्रश्नलग्नं साधनीयम् । मन्ये तस्मिन् काले स्पष्टप्रश्नलग्नम् = ५।१९।२५।४० विद्यत इति । नवमांशचक्रे एकैकं खण्डं = ३।२०' यथा प्रथमखण्डं ३° । २०'

द्वितीयखण्डं ६° १४०'  
 तृतीयखण्डं १०° १०'  
 चतुर्थखण्डं १३° १२०'  
 पञ्चमखण्डं १६° १४०'  
 षष्ठखण्डं २०° १०'  
 सप्तमखण्डं २३° १२०'  
 अष्टमखण्डं २६° १४०'  
 नवमखण्डं ३०° १०'

अत्र स्पष्टलग्नांशाः = १९।२५।४०। अयं षष्ठखण्डे समायाति ।  
 पञ्चमखण्डं व्यतीतमतः पञ्चमासाः गर्भस्य व्यतीताः । सप्तमाष्टमनवमखण्डानि  
 शेषानि, अतस्त्रयोमासाः भोग्याः षष्ठमासे दिवसानयनाय अनुपातः

$$\frac{३० \text{ दिनादि} \times \text{भोग्यकला}}{३१२०'} = \text{भोग्यदिनानि} ।$$

$$३१२०'$$

$$\text{षष्ठखण्डस्य मानं } २० \text{ } १०' १०''$$

$$२०^{\circ} १०' १०''$$

$$\text{स्पष्टलग्नस्यांशमानं } १९^{\circ} २५' ४०''$$

$$०।३४' १२०'' \text{ भोग्यकालः ।}$$

$$\frac{३० \times ३४'}{२००'} [ ३०।२० = ३ \times ६० + २० = २००' ]$$

$$= \frac{५१}{१०} = ५ \text{ दिनानि, शेषं} = १ \therefore \frac{१ \times ६०}{१०} = ६ \text{ घटी अतो}$$

$$१०$$

$$१०$$

गर्भप्रसवकालः ३ मासाः ५ दिनानि ६ घट्यः ।

हिन्दी—अविनष्ट पञ्चमेश जब पञ्चमभाव को देख रहा हो तो  
 निकटभविष्य में गर्भिणी को प्रसव होता है । विपरीत स्थिति में फल भी विपरीत  
 होता है ।

गर्भ प्रसव ज्ञान—

यदि कोई प्रश्न करे कि प्रसव कब होगा ? तो प्रश्नसमय से इष्टकाल बना कर स्पष्ट लग्न का आनयन करना चाहिए । लग्न के भुक्त भोग्य नवमांश से प्रसव का भुक्त और भोग्य मास का ज्ञान होता है । दिन ज्ञान हेतु अनुपात किया जाता है कि यदि २०० कला (३° । २०' नवमांश भाग) में ३० दिन मिलता है तो भोग्य कला में क्या ? भोग्य दिन । इस प्रकार गर्भप्रसव काल का ज्ञान हो जाता है । वस्तुतः गर्भ की नौ मास तक की अवधि होती है और नवमांश में भी नौ खण्ड होते हैं । अतः एक नवमांश एक मास का ज्ञापक होता है । दिन ज्ञान हेतु भी ३० अंश के आधार पर ३० दिनों की कल्पना की गई है । ३ अंश २० कला का एक नवमांश खण्ड होता है, अर्थात्  $३ \times ६० + २० = २००$  कला ।

यदि गर्भप्रसव ज्ञान हेतु आनीत स्पष्ट प्रश्न लग्न ८ । २१ । २९ । ४० हो तो इसका आशय है कि लग्न के छः नवमांश भुक्त हो चुके हैं [ ३° । २० × ६ = २०° । ०' ] । सातवें नवमांश में २१ । २९ । ४० भुक्त हो चुका है अथवा १° । ५०' । २०" भोग्यांश है । अभी नवमांश का आठवाँ तथा नवम भाग पूर्णरूप से शेष है । इनका आशय हुआ कि गर्भ धारण किये छः माह बीत गये । सातवें माह में भोग्य दिन के ज्ञान हेतु अनुपात होगा २०० कला में तीस दिन तो १° । ५०' । २०" में कितने दिन  $= \frac{३० \times ११०}{२००} = ३३ = २६$  दिन ३० घटी

दो नवमांश भोग्य होने के कारण अभी गर्भप्रसव में कुल समय २ माह १६ दिन ३० घटी लगना शेष है । इस प्रकार गर्भ का परिपाक काल आसानी से निकाला जा सकता है ।

इति गुर्विणीप्रसवद्वारम्

अथापत्ययुग्मप्रसवद्वारम् ॥ १६ ॥

पृच्छालग्ने च चत्वारि ग्रहयुग्मानि सन्ति चेत् ।

यत्र तत्रैव युग्मस्य प्रसवं ब्रुवते बुधा ॥ ८९ ॥

दीप्तिः—गर्भिण्याः कियन्तो बालका भविष्यन्ति पृच्छायां पृच्छालग्ने प्रश्नलग्ने चेत् यदि चत्वारि ग्रहयुगलानि चतुःस्थाने भवन्ति तदा तत्रैव कुण्डल्यां यत्र गर्भिणी स्थिता विद्यते बुधा गणका युग्मस्य यमलस्य प्रसवं गर्भप्रसवं ब्रुवते । अयं ग्रन्थकारस्य सिद्धान्तः । अन्येऽऽचार्याः स्वकीयानि मतानि पृथगपि प्रतिपादयन्ति ।

प्रश्नचिन्तामणिकारो विषयेऽस्मिन् स्वकीयं मतं प्रकटयति—

युग्मराशिगते लग्ने यदा तत्र शुभग्रहाः ।

गर्भेऽपत्यद्वयं वाच्यं दैवज्ञेन विपश्चिता ॥

अत्राशय लग्ने यदि शुभग्रहा भवन्ति समराशिश्च तदा युग्मप्रसवं कथनीयम् ।

जातकपारिजातेऽपि वैद्यनाथः प्रोक्तवान्—

युग्मे चन्द्रसितौ तथौजभवने स्युर्जरजीवोदयाः

लग्नेन्दू नृनिरीक्षितौ च समगौ युग्मेषु वा प्राणिनः ।

कुर्युस्ते मिथुनम् ॥

(१) समराशौ शुक्रचन्द्रौ भवेतां विषमराशौ बुधभौमगुरवः स्थिताः स्युः

(२) लग्नेन्दू पुरुषग्रहेण निरीक्षितौ (३) बुधभौमगुरवः समराशौ स्थिताः स्युस्तदाऽपत्यद्वयं जायते ।

कल्याणशर्मणा सारावल्यामुक्तम्—

लग्ने समराशिगते चन्द्रे च निरीक्षते बलयुतेन ।

गगनसदा वक्तव्यं मिथुनं गर्भस्थितं नित्यम् ॥

जातकतत्त्वेऽपि—

पञ्चमात् पञ्चमे मन्दे सुतस्थे च तदीश्वरे ।

सुनवः सप्तसङ्ख्याश्च द्विगर्भे यमलो भवेत् ॥

इत्युक्तम् ।

हिन्दी—यदि प्रश्नलग्न में चार स्थानों में दो-दो ग्रह हों तो विद्वान् गणक यमल (जुड़वे) बच्चों के जन्म का फलादेश करते हैं ।

इसके अतिरिक्त जुड़वा सन्तति (Twins) के अन्य योग भी कहे गये हैं, यथा—

- (१) चतुष्पद राशि (१, २, ५, १०) में सूर्य हो ।
- (२) द्विस्वभाव लग्न हो तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो ।
- (३) द्विस्वभावरशि के अनुसार में गुरुसूर्य तथा शुक्र हों और बुध से दृष्ट हों ।
- (४) सम राशि में शुक्र तथा चन्द्र हों तथा विषम में मंगल, बुध और गुरु हों ।
- (५) लग्न और चन्द्रमा पुरुषग्रह से दृष्ट हों ।
- (६) मंगल, बुध और गुरु यदि समराशि में हों ।
- (७) पञ्चमेश पञ्चम भाव में बैठा हो तथा नवम भाव में शनि हो ।

इन परिस्थितियों में भी जुड़वे शिशु होने का योग समझना चाहिए ।

आधुनिक चिकित्सा पद्धति जुड़वों को दो भागों में वर्गीकृत करती है—

(क) Dis Identical Twins (समान जुड़वें) जिन्हें Monozygotic Twins या संक्षिप्त में M. T. कहते हैं ।

(ख) (असमान जुड़वें) जिन्हें Diszygotic Twins या संक्षिप्त में D. T. कहते हैं ।

शारीरिक कोशिका में ४६ क्रोमोजोन्स होते हैं जो सम होने पर २३ जोड़े के रूप में रहते हैं तथा विषम में २२ सम जोड़े तथा एक जोड़ा असम होता है ।

ज्यौतिष शास्त्र में जुड़वों में फर्क जानने हेतु अक्षवेदांश चक्र तथा षष्ठ्यंश चक्रादि का सूक्ष्म विचार किया जाता है—

अक्षवेदांशभागे च षष्ठांशोऽखिलमीक्षयेत् ।

यत्र कुत्रापि सम्प्राप्तः क्रूरषष्ठ्यंशकाधिपाः ॥

महर्षि पराशरः ।

इति अपत्ययुग्मप्रसवद्वारम् ।

अथ गर्भमाससङ्ख्याज्ञानद्वारम् ॥ १७ ॥

मासज्ञानस्य पृच्छायां गर्भिण्याः भृगुनन्दनः ।

लग्नात्स्याद्यतमे स्थाने मासानाख्याति तावतः ॥ १० ॥

दीप्तिः—गर्भिण्या गर्भमासज्ञानाय श्लोकमुदाहरति—गर्भिण्या गुर्व्या मासज्ञानस्य पृच्छायां लग्नात् प्रश्नलग्नात् यतमे स्थाने यस्मिन् भावे भृगुनन्दनः शुक्रो भवति तावतो मासान् आख्याति । यदि शुक्रो दशमे एकादशे वा स्थाने भवति तदा पञ्चमस्थानाद् भावसङ्ख्या ज्ञेया । यस्मिन् भावे शुक्रः सैव सङ्ख्या व्यतीतमासानां भवति । ‘सुतात्सङ्ख्या तदा वाच्या यदा धर्मात्परं गतः’ इत्यपि प्रथितो सिद्धान्तः ।

हिन्दी—‘गर्भिणी को कितने मास का गर्भ है ? इस प्रश्न के उत्तर हेतु प्रश्न लग्न से शुक्र जितने स्थान में बैठा हो उतने मास का गर्भ कहना चाहिए ।

यहाँ एक बात ध्यान में रखनी चाहिए कि शुक्र की लग्न से स्थिति नवम भाव से अधिक में न हो । यदि शुक्र १०, ११ या १२ वें भाव में हो तो पञ्चम भाव को लग्न मान के संख्या बतानी चाहिए ।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि शुक्र लग्न या पञ्चम भाव में बैठा होता है । यह गर्भ रहने की स्थिति होती है । खास तौर से यदि पञ्चमभाव में शुक्र हो और उसे शुभ ग्रह देख रहे हों तो गर्भ धारण होने की स्थिति बतलानी चाहिए ‘या गर्भधृत है’ ऐसा कहना चाहिए ।

यह श्लोक ताजिकनीलकण्ठी में भी मिलता है ।

अथ स्त्रीप्राप्तिविचारद्वारम् ॥ १८ ॥

स्थाने चतुर्थे सौम्यत्वमापन्ने ललना धृता ॥

सप्तमे सौम्यतां प्राप्ते प्रष्टुः कान्ता विवाहिता ॥ १२ ॥

दीप्तिः—प्रश्नलग्नात् चतुर्थे स्थाने सौम्यत्वमापन्ने शुभग्रहयुक्ते ललना स्त्री धृता [धार्मिकरीत्या यया सह विवाहो न भवति परञ्च परिणीतावद् या



आचरति सा धृता] भवति । यदि लग्नात्सप्तमे स्थाने सौम्यग्रहाः स्थिताः सन्ति तदा प्रष्टुः पृच्छकः कान्ता विविर्हिता धर्मभार्या भवति ।

स्त्रीलाभसम्बन्धिप्रश्ने सप्तमचतुर्थभावौ विचारणीयौ भवतः । सम्बन्धेऽस्मिन् पूर्वश्लोकेषु निर्देशो लभ्यते यत्केन भावेन किं किं विचार्यमिति ।

हिन्दी—प्रश्नलग्न से चतुर्थ स्थान में यदि शुभ ग्रह बैठे हों तो प्रश्नकर्ता की स्त्री धृता (रखैल, धरी हुई) होती है तथा सप्तम स्थान में शुभ ग्रह बैठे हों तो प्रश्नकर्ता की स्त्री विवाहिता (वेद विधि से परिणीता) होती है ।

पूर्व के कई एक स्थलों पर किस भाव से किस वस्तु की विचारणा करें वर्णित है । अतः स्त्रीप्राप्ति विचार के सन्दर्भ में आचार्य ने सप्तम भाव को प्रधान माना है । चतुर्थस्थान मैत्री और हृदयभाव का द्योतक होने से वैयक्तिक प्रेम का भी द्योतक होता है । फलतः इस भाव से धृता का विवेचन किया गया है ।

क्रूरिते च चतुर्थे स्यात्परिणीता नितम्बिनी ।

सप्तमे क्रूरिते वा स्याद् धृतैव हि कुटुम्बिनी ॥ ९२ ॥

उभयोः सौम्यतां प्राप्ते द्वे स्तो धृतविवाहिते ।

उभयोः क्रूरतां प्राप्ते न धृता न विवाहिता ॥ ९३ ॥

दीप्तिः—चतुर्थे सुखस्थाने क्रूरिते क्रूरग्रहयुते दृष्टे वा नितम्बिनी भार्याया विशेषणरूपेणप्रयोगः परिणीता विवाहिता स्यात् । सप्तमे जायास्थाने वा क्रूरिते क्रूरग्रह दृष्टे युते वा कुटुम्बिनी गृहिणी हि निश्चयेन धृता भवति । अत्रैकश्लोकस्य पदान्ते 'हु' 'एव' अव्यय पदयोः प्रयोगो नोचितः । उभयोः चतुर्थसप्तमयोः सौम्यतां प्राप्ते शुभयुतेशुभेक्षिते वा धृतविवाहिते द्वे भार्ये स्तः । एका तत्र परिणीता अपरा धृतेति । उभयोः स्थानयोः चतुर्थसप्तमयोः क्रूरग्रहाः तदा न धृता न विवाहिता । अत्राशयो विवाह एव न सम्पद्यते । भार्याद्वययोगः प्रश्नभूषणेऽपि—

चतुर्थ सप्तमञ्चैव पञ्चमं सौम्यवीक्षितम् ।

विवाहिता धृता चापि द्वे भार्ये भवतस्तदा ॥ इति

प्रश्नभूषणम् स्त्रीप्र० श्लो० ६

**हिन्दी**—चतुर्थ स्थान क्रूर ग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो स्त्री परिणीता होती है । सप्तमस्थान क्रूरग्रह से प्रभावित हो तो गृहिणी धृता होती है ।

यदि चतुर्थ और सप्तम दोनों स्थानों में सौम्य ग्रह हों तो पुरुष की दो स्त्रियाँ होती हैं । एक धृता और दूसरी विवाहिता । इन दोनों स्थानों में यदि क्रूर ग्रह हों तो स्त्री न धृता मिलती है न तो परिणीता ही । इसका अर्थ है पुरुष स्त्रीसंग से वंचित रह जाता है ।

स्त्री से सम्बन्धित अन्य प्रश्नों को भी कतिपय दूसरे आचार्यों ने उठाया है—

**पुरुष स्त्री का प्रेम सम्बन्ध—**

अमुक स्त्री मुझसे प्रेम करेगी या नहीं अथवा इस स्त्री से मेरा लगाव रहेगा या नहीं ? प्रभृति प्रश्न हों तो प्रश्न लग्नेश और सप्तमेश का सम्बन्ध अवश्य विचारना चाहिए । यदि ये दोनों ग्रह शत्रु हों तो सम्बन्ध स्थिर नहीं होता । इनमें यदि मित्रता हो तो मानसिक या वैचारिक सम्बन्ध उत्तम होता है । लग्नेश और सप्तमेश एक ही राशि में हों तो पहले झगड़ा फिर मिलन होता है ।

उभयोरेकस्थितयोर्ज्ञातव्या झकटकं तयोः प्रीतिः ।

**कन्या का चरित्र ज्ञान—**

यदि कोई किसी लड़की या स्त्री के चरित्र के सम्बन्ध में प्रश्न करे तो (यदि) लग्न स्थिर हो तथा लग्नेश और चन्द्रमा शुभ हों तो कन्या का शील उत्तम है ऐसा कहना चाहिए ।

लग्न, लग्नेश और चन्द्रमा चर राशि के हों तो कन्या विवाह के पूर्व ही अपहृत कौमार्य होती है । चन्द्रमा चर तथा मंगल द्विस्वभाव राशि में हो तो गुप्त संभोग में रत रहने वाली होती है ।

चन्द्रमा और शनि अथवा मंगल और शनि लग्न में हों तो कन्या प्रथित काम सम्बन्ध वाली होती है, अर्थात् उसका चरित्र टीका-टिप्पणी का विषय होता है ।

प्रेम विवाह—

सप्तम स्थान में कोई पाप ग्रह प्रबल योग कारक हो और उस पर शुभ ग्रह की दृष्टि नहीं हो तो अन्तर्जातीय या अन्तरधर्मीय अथवा अन्तरराष्ट्रीय विवाह होता है।

सप्तम स्थान में बृहस्पति और राहु अथवा बृहस्पति और शनि एक साथ हों तो भी अन्तर्जातीय या अन्तरराष्ट्रीय प्रेमविवाह होता है ।

लग्नस्थ पापग्रह यदि शुभग्रह से युक्त सप्तम को देखता है तो प्रेम 'विवाह होता है, परन्तु इसमें कठिनाइयाँ बहुत आती हैं और कभी-कभी विवाह हो भी नहीं पाता ।

यदि लग्नेश और व्ययेश परस्पर स्थान परिवर्तन करते हों तो भी इच्छित प्रेम विवाह होता है ।

**न धृता परिणीता वा योगेऽत्र सुखदायिका ।**

**परिणीता धृता वापि पाश्चात्ये सुखदायिका ॥ ९४ ॥**

**दीप्तिः—**‘क्रूरिते च चतुर्थे’ ति श्लोके धृतापरिणीराकलत्रयोर्योगः पठितः । अत्र विशेषमाह—यदि चतुर्थे सप्तमे वेति क्रूरग्रहो भवति तदा धृता परिणीता वा भार्या सुखदायिका न, किन्त्वत्र पाश्चात्ये पश्चिमे वयसि परिणीता धृता वापि सुखदायिका स्यात् ।

अयमत्र विशेषः प्राचीनाचार्यैः प्रतिपाद्यते—

लग्नस्थे सप्तमे पत्नी भर्तुरादेशकारिणी ।

लग्नेशे सप्तमस्थे तु भार्यादेशकरः पतिः ॥

**हिन्दी—**इस योग में धृता या विवाहिता भार्या सुखदायिका नहीं होती है । जीवन के अन्तिम भाग में ये (धृता या विवाहिता) सुख देती है ।

९२ श्लोक में चतुर्थ और सप्तम भावगत क्रूरग्रहों के कारण लगने वाले धृता या परिणीता भार्या के योग कहा गया है । उसी सन्दर्भ में इस श्लोक में भी कहा जा रहा है—यदि क्रूरग्रह के योगवश धृता या विवाहिता भार्या की प्राप्ति होती है तो वह जीवन के प्रारम्भ में सुख देने वाली नहीं होती, परन्तु जीवन के उत्तरार्द्ध में धृता अथवा विवाहिता सुख देती है ।

### पति आदेश परायणा तथा पत्नि आदेश पालक योग—

यदि सप्तमेश लग्न में बैठा हो तथा वह निर्दिष्ट न हो तो पत्नी अपने पति की आज्ञा का पालन करने वाली होती है । यदि लग्नेश सप्तमभाव में बैठा हो तो पति अपनी पत्नी का आज्ञापालक होता है ।

### विवाह विच्छेद (तलाक) का योग—

विवाह विच्छेद सप्तमेश और लग्नेश के विनष्ट होने पर तथा एक दूसरे के शत्रु होने पर ही होता है । प्रत्येक स्थिति में विवाह विच्छेद तभी होता है जब सप्तम भाव निर्बल तथा पापाक्रान्त हो । इसके अतिरिक्त सप्तम या अष्टम भाव में पापग्रह हों तथा मंगल बारहवें भाव में बैठा हो और सप्तमेश अस्तङ्गत हो तो दूसरी स्त्री की प्राप्ति होती है, परन्तु इस अवस्था में यह आवश्यक नहीं की पहली पत्नी से विच्छेद हो ही । वह साथ भी रह सकती है ।

सप्तमेऽवाष्टमे पापे व्ययस्थे धरणीसुते ।

अदृश्ये यदि तन्नाथे कलत्रान्तरभागभवेत् ॥ जा० पा० ॥

इति स्त्रीप्रतिविचारद्वारम् ।

अथ विषकन्यानिर्णयद्वारम् ॥ १९ ॥

रिपुक्षेत्रस्थितौ द्वौ तु लग्नाद्यदि शुभग्रहौ

ऋरश्चैकस्तत्र जाता भवेत्स्त्री विषकन्यका ॥ १५ ॥

दीप्तिः—कस्मिन् प्रश्नयोगे प्रष्टाकन्यका विषकन्या भवतीति कथयति—  
यदि लग्नात् प्रश्नोदयात् रिपुक्षेत्रस्थितौ षष्ठभावविद्यमानौ द्वौ तु शुभग्रहौ भवतः  
एवञ्चैकः ऋरग्रहस्तत्र स्यात् तदा जाता समागत । स्त्री विषकन्यका भवेत् ।

अन्येऽपि योगाः—

लग्ने सौरी रविः प्रान्ते धर्मस्थे धरणीसुते ।

अत्र योगे यदा जाता भवेत्स्त्री विषकन्यका ॥

इयं विषकन्यका विवाहात् पूर्वं पितृकुलं नाशयति पश्चाच्च स्वकुलं घातयति—

ऋरद्वयमध्यगते लग्ने चन्द्रे च कन्यका जाता ।

हरति स्वपितृपक्षं स्वकुलं घातयत्यखिलम् ॥

**हिन्दी**—यदि दो शुभग्रह लग्न से षष्ठ भाव में बैठे हों तथा वहाँ एक अन्य क्रूर ग्रह स्थित हो तो ऐसे योग में उत्पन्न स्त्री विषकन्या होती है ।

विष कन्या विवाह से पूर्व पितृकुल का तथा विवाह के पश्चात् पतिकुल का नाश करती है । यदि लग्न में शनि, प्रान्त यानी बारहवें में सूर्य, तथा नवम में मंगल ग्रह हो तो इस योग में उत्पन्न स्त्री विषकन्या होती है । दो क्रूरग्रहों के बीच में लग्न या चन्द्रमा पड़ जाता है तब भी विषकन्या योग होता है ।

इति विषकन्यानिर्णयद्वारम् ।

अथ भावान्तग्रहद्वारम् ॥ २० ॥

**भावान्तगतः खेटः परभावफलं ददाति पृच्छासु ।**

**अन्तघटीर्यावदसावासीनफलं विवाहादौ ॥ १६ ॥**

**दीप्तिः**—पृच्छासु प्रश्नकाले खेटो ग्रहो यत्र स्थितो भवति तस्माद् भावात् परभावफलमग्रिमराशेः फलं ददाति दिशति । इयं स्थितिस्तदा समायाति यदा ग्रहो भावान्तगतो भवति । मन्ये कश्चिद् ग्रहः कस्यापि राशेः २९ अंशे विद्यते तदाऽयं परस्मिन् राशौ गन्तुमिच्छति । अतोऽयं प्रश्नकालेऽग्रिमराशेः फलं प्रदास्यति । परञ्च विवाहादौ कार्येऽन्तिमांशं यावदसौ ग्रहस्तस्यैव भावस्य फलं ददाति, यत्रासीनं भवति ।

**हिन्दी**—प्रश्नकाल में भाव के अन्तिमांश में स्थित ग्रह अग्रिम भाव का फल देता है, परन्तु विवाहादि में अन्तिम घटी तक उसी भाव का फल देता है जिसमें वह रहता है । जन्मकुण्डली में ग्रह का परभावफल चलित चक्र से विचारा जाता है । यदि कोई ग्रह चलित चक्र में अग्रिम भाव में चला गया हो तो वह अगले भाव का फल देगा ही । यह नियम विवाहादि मुहूर्तों के सन्दर्भ में नहीं लगता । आचार्य का यह मत अतिप्रसिद्ध और उपादेय है, क्योंकि कभी-कभी देखा गया है कि ग्रह जिस भाव या राशि में है उसका फल न देकर अगले भाव या अगली राशि का फल देता है । कोई ग्रह भावान्त अंश में जाकर के यदि वक्री हो जाए तो वह उसी भाव का फल देता है, क्योंकि ऐसी अवस्था में वह परभावयियासु नहीं होता ।

इति भावान्तग्रहद्वारम् ।

अथ विवाहविचारद्वारम् ॥ २१ ॥

विवाहे वृष्टिविचारमाह—

अम्बरगतं शुभग्रहयुग्मं वृष्टिर्भवेद्विवाहादौ ।

लग्ने शुभत्रयस्य तु योगे महती भवेद् वृष्टिः ॥ १७ ॥

दीप्तिः—विवाहादौ विवाहलग्नसमये शुभग्रहयुग्मं शुभग्रहयोर्युगलं यदाऽम्बरगतं दशमभावस्थं तदा वृष्टिर्भवेद् । स्पष्टार्थो यदि विवाहसमये द्वौ शुभग्रहौ दशमभावे स्थितौ भवतस्तदा वृष्टिर्जायते । एवमेव विवाहलग्ने त्रयो ग्रहाः शुभाः स्युस्तदाऽस्मिन् योगे महती प्रचुरा वृष्टिर्जलधारा भवेद् इति । इदमेवोत्तरं वृष्टिप्रश्ने देयम् । वर्षाज्ञानप्रश्ने मदीया वनमाला द्रष्टव्या । वस्तुनो वर्षाजन्यं ज्ञानं संहितायां प्राप्यते ।

हिन्दी—विवाह के समय यदि लग्न से दशवें स्थान में दो शुभ ग्रह हों तो वर्षा होती है । अथवा लग्न में तीन शुभ ग्रह बैठे हों तो इस योग में भारी वर्षा होती है । ऐसा फलादेश करना चाहिए ।

इस श्लोक में प्रश्नकाल या विवाहलग्न के आधार पर वर्षा के दो ग्रहयोगों का प्रतिपादन किया गया है । वृष्टिविचार 'संहिता' का विषय है तथापि विवाह में वर्षा होने के योग को प्रश्नशास्त्र के अन्दर समाहित किया गया है । इस योग से विवाह प्रभावित होता है । अतः इसे आचार्य ने विवाह द्वार में कहा है ।

अथ कलत्रजीवनमरणादिज्ञाननिरूपणम्—

मूर्तावुच्चः खेटो जामित्रे दधाति येन दृशम् ।

स नो हन्ति कलत्रं क्रूराश्चान्ये तु निघ्नन्ति ॥ १८ ॥

दीप्तिः—यदि विवाहसमये लग्ने कश्चिदुच्चखेटो ग्रहो भवति स कलत्रं भार्या नो हन्ति स्त्रीविनाशं न कुरुते । नो पदमव्ययम् । यतो येन ग्रहेण जामित्रे सप्तमे दृशं दृष्टि दधाति । उच्चस्थो ग्रहो लग्नात्सप्तमं पश्यति, फलतः स कलत्रं रक्षति स्वकीयया शुभदृष्ट्या । परमन्ये क्रूरग्रहा लग्नस्थानस्तु कलत्रं निघ्नन्ति

नाशयन्ति । अतो विवाहसमये लग्नस्था क्रूरखेटा वर्ज्याः । विवाहमुहूर्तनिर्णयेऽपि लग्नभङ्गो विचार्यते—‘व्यये शनिः खेऽवनिजस्तृतीये’ तथा च ‘त्र्यायष्टषट्सुरविकेतुतमोऽर्कपुत्राः’ श्लोकाभ्यां मुहूर्तं लग्नं वा परिशोधय विवाहो विधीयते तथापि कश्चित्क्रूरो लग्ने स्थितस्तदा स कलत्रं नाशयति । अतो विवाहसमये क्रूररहितं लग्नमेव विचार्य निश्चेयम् ।

**हिन्दी**—विवाहलग्न में यदि उच्च ग्रह स्थित होकर सप्तम भवन को देखता है तो वह स्त्री को नहीं मारता । अन्य क्रूर ग्रह लग्नस्थ होकर स्त्री के लिए मारक होते हैं ।

मुहूर्तादि ग्रन्थों में भी विवाह लग्न का निर्णय करते समय इस बात का ध्यान रखा गया है । लग्नस्थ क्रूरग्रह यदि उच्च का हो तब वह पत्नी को नहीं मारता, परन्तु यदि वह अस्तङ्गत, नीच या सामान्यावस्था में हो तो पत्नी को मार सकता है ।

इति विवाहविचारद्वारम्

अथ विवादविचारद्वारम् ॥ २२ ॥

**क्रूरः खेटो लग्ने विवादपृच्छासु जयति विवदन्तम् ।**

**सर्वावस्थासु परं नीचास्ते जयति न द्विषितम् ॥ १९ ॥**

**दीप्तिः**—विवादपृच्छासु अहं वादे स्वकीयममुक्तं जेष्यामि न वेति प्रश्ने यदि लग्ने प्रश्नमूर्तौ क्रूर पापः खेटो ग्रहस्तदा विवदन्तं जयति स्वकीयं शत्रुं वादिनं वा जयति सर्वावस्थासु क्रूरः खेटो जयं ददाति परञ्च स खेटो यदि नीचो वास्तङ्गतो भवति तदा द्विषितं शत्रुं न जयति । प्रष्टुर्जयो तदा भवति यदा क्रूरः खेटो लग्ने भवति परञ्च यदि स अस्तङ्गतो नीचो वा स्यात्तदा प्रष्टुर्जयो न भवति ।

**हिन्दी**—मैं विवाद में अपने शत्रु को जीतूँगा या नहीं ? ऐसे प्रश्न में यदि क्रूर ग्रह लग्न में बैठा हो तो वादी (यायी या प्रष्टा अथवा प्रथम आक्रमण कर्ता) की विजय होती है, परन्तु यह नीच या अस्त हो तो वादी अपने शत्रु (प्रतिवादी) को नहीं जीता पाता ।

‘वादी प्रतिवादी को नहीं जीत पायेगा’ ऐसा कहा जाये तो इसका अर्थ है प्रतिवादी ही वादी को जीतेगा । वादी के बोधक यायी’ प्रष्टा व मुद्ई प्रभृति शब्द है तथा प्रतिवादी के स्थायी, मुद्दालय तथा प्रतिद्वन्दी ।

इस श्लोक के द्वारा हार और जीत से सम्बन्धित प्रश्नों का विचार किया जाता है । वाद विवाद, चुनाव, मुकदमा और लड़ाई में विजय-पराजय से सम्बन्धित प्रश्नों का उत्तर इसी सिद्धान्त के आधार पर दिया जाता रहा है जैसे—राजा की जीत होगी या हार इस विषय में षट्पञ्चाशिका का सिद्धान्तश्लोक द्रष्टव्य है—

दशमोदयः सप्तमगाः सौम्या

नगरधिपस्य विजयकराः ।

आराकिंज्ञगुरुसिताः

प्रभङ्गदौ विजयदा नवमे । तृ० अ० श्लोक २५

अर्थात् दशम, लग्न और सप्तम भाव में यदि शुभग्रह हों तो नगर के राजा (वादी) की जीत होती है । मंगल और शनि नवम भाव में बैठे हो तो प्रष्टा की हार होती है ।, परन्तु बुध, गुरु और शुक्र नवमस्थ हों तो प्रष्टा की जीत होती है ।

वादी और प्रतिवादी दोनों में से किसकी जीत होगी और किसकी हार इस सन्दर्भ में बाद के प्रायशः आचार्यों ने लग्नस्थ क्रूर ग्रह को वादी की जीत का सूचक माना है, तथा सप्तमस्थक्रूर को प्रतिवादी की जीत का, जैसे—

वादिनो विजयप्रश्ने लग्ने क्रूरे तदा जयः ।

यदि स्यात् सप्तमे क्रूरो विजयः प्रतिवादिनः ॥

वस्तुतः विवाद क्रूर ग्रहों के प्राबल्य का सूचक होता है । विवाद के दौरान जिसका क्रूर ग्रह प्रबल होगा उसकी जीत सुनिश्चित होगी ।



लग्ने द्यूने च यदा क्रूरः खेटो विवादिनोर्न तदा ।

कलहनिवृत्तिः कालेन जयति बलवान् गतबलं तु ॥ १०० ॥

दीप्तिः—यदा क्रूरः खेटः पापग्रहो लग्ने प्रश्नलग्ने द्यूने सप्तमे च भवति तदा विवादिनोर्मध्ये वादिप्रतिवादिनोः कलहनिवृत्तिर्न जायते, अपितु बलवान् ग्रहो गतबलं निर्बलं ग्रहं कालेनान्तरालेन जयति ।

हिन्दी—यदि प्रश्न लग्न और सप्तम दोनों भावों में क्रूर ग्रह बैठे हों तो वादिप्रतिवादियों में झगड़ा समाप्त नहीं होता । जब कालान्तर में किसी का ग्रह बलवान् होता है तो वह निर्बल ग्रह को जीत लेता है ।

लग्नस्थ क्रूर ग्रह वादी का तथा सप्तमस्थ क्रूर ग्रह प्रतिवादी का प्रतिनिधि होता है । अतः इन दोनों स्थानों में क्रूर ग्रहों के स्थित होने पर वादी-प्रतिवादी के बीच सुलह न होकर दीर्घकाल तक विवाद चलता है । एक लम्बे अरसे के बाद सप्तमस्थ या लग्नस्थ क्रूर ग्रह में से कोई एक जब निर्बल पड़ता है तो सबल ग्रह वाला जीतता है । निर्बल पड़ने का अर्थ है—रश्मि-हीन होना, अशत होना अथवा आक्रान्त होना ।

**वादी-प्रतिवादी में सन्धि होने का योग—**

आचार्य पृथुयश ने षट्पञ्चाशिका में कलह सन्धि के दो योगों को लिखा है । (१) लग्न नर राशि (३, ६, ७, ११) हो अथवा ११, १२ स्थान पर राशि का हो और ये स्थान शुभ ग्रह युक्त हों तो यायी-स्थाई दोनों में सुलह होती है ।

नृराशिसंस्था-ह्युदये शुभास्यु-

र्व्याय संस्थाश्च तथा भवन्ति ।

तदाशुसन्धिं प्रबदेन्नराणां

पापैर्द्विदेहोपगतैर्विरोधम् ॥

(२) केन्द्र में शुभ ग्रह नर राशि में स्थित हों तथा परस्पर दृष्ट हों तो कलह निवृत्ति होती है ।

अथास्त्रप्रहारविचारः—

लग्नं द्यूनं मुक्त्वा परस्परं क्रूरयोः सकलदृष्टौ ।

विवदद् विवादियुगलं क्षुरिकाभ्यां प्रहरति तदैवम् ॥ १०१ ॥

दीप्तिः—लग्नं द्यूनं च मुक्त्वाप्रश्नलग्नं सप्तमस्थानञ्च विहाय क्रूरयोर्ग्रहयोः संस्थितिः स्यात् । तथा च इमौ परस्परं सकलदृष्टौ पूर्णदृष्टौ भवतस्तदा विवदद् कलहकुर्वन् विवादियुगलं तदा एव क्षुरिकाभ्यां प्रहरति । अत्र विशेषोऽवधेयः—उभौ शत्रु परस्परमपरं घातेच्छुक्रौ भवतः । अतः कः कं घातयिष्यति निर्णये सप्तमेशलग्नेशयोश्चिन्तनं कार्यम् । यदि लग्नेशो निर्बलस्तदा वादी नश्यति, सप्तमेश्च निर्बलस्तदा प्रतिवादीति । केचन लग्नेशसप्तमेशाभ्यां विचारयन्ति । यदि लग्नेश अष्टमस्थाने भवति तदा वादिनो मृत्युर्भवति , सप्तमेशस्याष्टमस्थाने स्थितिः स्यात् तदा प्रतिवादिनो मरणं भवतीति । यदि तौ अष्टमे भवतस्तदा उभयोर्घातो वक्तव्य इति ।

हिन्दी—छुरा या तलवार से घात होने का योग—

लग्न और सप्तम स्थान को छोड़ कर अन्यत्र स्थित क्रूर ग्रह एक दूसरे को पूर्ण दृष्टि से देखते हों तो वादी तथा प्रतिवादी परस्पर एक दूसरे पर छुरा [कटारी या छुरी] से वार करते हैं ।

कतिपय विद्वान् क्रूर ग्रहों की स्थिति अष्टम में अनिवार्य मानते हैं अथवा लग्नेश और सप्तमेश में से कोई एक या दोनों अष्टम में हों तो छुरा से प्रहार करने का योग बनता है । लग्नेश की निर्बलता वादी के लिए घातक होती है तथा सप्तमेश की प्रतिवादी के लिए—

|         |          |
|---------|----------|
| २       | १२       |
| बृ. ३   | ११       |
| के.चं.४ | सू.रा.१० |
| ५       | ९शु.बु.  |
| ६       | ८ मं.    |

इस कुण्डली में सूर्य, राहु दशमस्थ हैं तथा केतु और चन्द्र (पापाक्रान्त) को परस्पर देख रहे हैं । अतः छुरा से प्रहार का योग बन रहा है । यहां लग्नेश मंगल अष्टमस्थ है । अतः वादी को संघातिक चोट लगेगी तथा प्रतिवादी बच निकलेगा क्योंकि उस पर बृहस्पति की दृष्टि है ।

इति विवादविचारद्वारम् ।

अथ संकीर्णपदनिर्णयद्वारम् ॥ २३ ॥

व्रतदानपट्टारोपणप्रतिमास्थापनविधिः स्मृतो गुरुणा ।

दशमस्थानं कार्यं रविदृष्टिप्रभृतिभिर्बलवान् ॥ १०२ ॥

दीप्तिः—व्रतम्, अभियुक्तप्रसिद्धिविषयोः यः संकल्पविशेषः स एव व्रतम्, शास्त्रोदितो हि नियमो व्रतं वेति । व्रतस्य दानं व्रतदानं दीक्षा । पट्टारोपणं पट्टाभिषेकः । प्रतिमास्थापनं देवप्रतिष्ठा । एतेषां कार्याणां विधिर्नियमः स्थापनदीक्षामुहूर्त्ताभिषेचन-प्रभृतिर्व्यवहारः तदा विधेयो यदा दशमस्थानं रविदृष्टिप्रभृतिभिः सूर्यदृष्टिभिर्ग्रहोच्चयोगैर्वा बलवान् स्यादिति । अत्र भावो येन कारणेन कश्चिद्भावो बलवान् भवति तत्कारणं दशमस्थानपुष्ट्यै तदा प्राप्यते तदा पूर्वोक्तानि कार्याणि विधेयानि । इदं गुरुणा दैवज्ञेनोक्तमिति ।

हिन्दी—दीक्षाग्रहण, राज्याभिषेक तथा प्रतिमास्थापन सूर्यादि ग्रहों की दृष्टि से दशम स्थान के पुष्ट होने पर करना चाहिए । ऐसा प्राचीनाचार्यों ने कहा है ।

द्वादश भावों के विचार के दौरान आचार्य ने नवम भाव से दीक्षा, यात्रा, मठ तथा धर्म की चिन्तन नवम स्थान से करने को कही है, परन्तु संकीर्णपद निर्णयद्वार में दीक्षा, अभिषेक तथा प्रतिमा प्रतिष्ठा के विचार हेतु दशम भाव को मजबूत होना आवश्यक समझा गया है । वस्तुतः दशम भाव से कर्म की प्रवृत्ति समझी जाती है । अतः राज्य, द्रव्य (दान) तथा यश का भी विचार इस भाव से किया जाता है । सूर्यादि ग्रहों की दृष्टि का आशय है दीक्षा में सूर्य, अभिषेक में बुध तथा प्रतिमा स्थापना में बृहस्पति की दृष्टि दशम स्थान पर हो । ऐसा होने पर ये कार्य सफल तथा निर्विघ्न होते हैं ।

यत्रान्यलाभयोगो न भवति नवमं च भवति शुभदृष्टम् ।

तत्राचिन्तितलाभः प्रष्टुर्गणकेन निर्देश्यः ॥ १०३ ॥

दीप्तिः—यत्रान्यलाभयोगो न भवति लाभादिपृच्छायां कश्चिदन्यो योगो न दृश्यते लाभकरग्रहाणां सबलत्वाभावात् परञ्च नवमं स्थानं धर्मस्थानं भाग्यस्थानं वेति शुभदृष्टं शुभग्रहैरवलोकितं भवति तदा तत्र पृच्छालग्नविषये कश्चिदचिन्तितो लाभः प्रवर्तत इति । केचन कथयन्ति यद् धर्मस्थानं शुभैर्दृष्टं स्यात् तदा चिन्तितलाभो भवति, परञ्च नेदं मतं समीचीनम् तत्र प्रष्टुःकश्चिद् अचिन्तितलाभ अकस्माद् भवतीति गणकेन दैवज्ञेन निर्देश्यः ।

हिन्दी—प्रष्टा के द्वारा किया गया लाभ प्रश्न जब अन्य योग से सिद्ध होते नहीं दिखलाई पड़ता और भाग्य भवन पर शुभ ग्रह की दृष्टि होती है तो उसे अचिन्तित लाभ होगा ऐसा गणक को कहना चाहिए ।

किसी विशिष्ट वस्तु का लाभ उस वस्तु से सम्बन्धित भाव और भावेश के द्वारा निर्दिष्ट होता है । ऐसी अवस्था में जब लाभ स्थान पर या किसी शुभग्रह की दृष्टि न पड़ती हो या इनके साथ शुभग्रह की युति न होती हो तो प्रष्टा को अभीष्ट वस्तु का लाभ नहीं होता । यह अलाभ योग है, परन्तु नवम स्थान (भाग्यभवन) जब शुभग्रह से दृष्ट होता है तो प्रष्टा को प्रश्न से सम्बन्धित वस्तु का लाभ न होकर किसी अन्य वस्तु का लाभ होता है । इसे आचार्य ने अचिन्तित लाभ की संज्ञा दी है । राजयोग द्वार में भी प्रश्न से अतिरिक्त अन्य लाभ का एक श्लोक मिलता है—

चन्द्रदृष्टि विनान्यस्य शुभस्य यदि दृग् भवेत् ।

शुभं प्रयोजनं किञ्चिदन्यदुत्पद्यते तदा ॥

रन्ध्रे लग्नाधिपतिर्भुनक्ति कार्यं तदैव यदि तस्मात् ।

शत्रौ यात्यथ मित्रे तस्मिन् काले तदा सिद्धिः ॥ १०४ ॥

दीप्तिः—यदि लग्नाधिपतिर्लग्नेशो रन्ध्रे अष्टमस्थाने प्रश्नकाले यदा लग्नेश अष्टमस्थो भवति तदैव कार्यं भुनक्ति नाशयति । अत्र विशिष्टां दशां वर्णयति यत् कदा रन्ध्रोपगतो लग्नपः कार्यं नाशयति यदा स शत्रौ गृहे रिपुस्थाने स्थितो भवति । मित्रस्थाने स्थितो रन्ध्रेऽपि लग्नपः प्रष्टुः कार्यमचिरेण साधयति । अत्रैकः श्लोको लभ्यते—

**पृच्छाकाले गृहपो यत्र गतस्तत्र तत्फलं ददते ।**

**अरिनीचास्ते विफलः स्वोच्चमित्रोच्चभे सफलः ॥**

**हिन्दी**—यदि प्रश्नकालिक लग्नेश अष्टमस्थ हो तो वह कार्य का नाश करता है । शत्रु गृही अष्टमस्थ प्रश्नलग्नेश कार्य नाशक होता है परन्तु यदि वह मित्रगृही हो तो तत्काल कार्य सिद्धि कारक होता है ।

कार्यसिद्धि योग यदि प्रश्नकुण्डली में स्पष्ट न हो तो लाभ से सम्बन्धी फलादेश करना कठिन होता है । ऐसी स्थिति में यदि लग्नेश अष्टमस्थ हो कर भी मित्र या स्वोच्च का हो तो कार्य की सिद्धि होती है ।

लग्नेश जिस भाव में जाता है वह उसी भाव के सदृश फल देता है । यह सिद्धान्तवाक्य है । अष्टम स्थान कार्य नाश का सूचक स्थान है । अतः वहाँ पर स्थित लग्नेश कार्य का ध्वंसक होता है । फिर भी यदि लग्नेश मित्र गृह या उच्च का हो तो प्रश्न से सम्बन्धित कार्य की सिद्धि तत्काल ही होती है ।

|               |          |              |
|---------------|----------|--------------|
| रा.श.१०<br>११ | ९        | ८<br>७ शु.   |
| १२            | ६ सू.बु. |              |
| १<br>२च.भौ.   | ३        | ५<br>गु.के.४ |

यदि प्रष्टा ने पूछा कि उसे प्रतियोगी परीक्षा में सफलता मिलेगी या नहीं? तो यहां पञ्चमेश मंगल षष्ठभाव में बैठ गया है । लग्नेश बृहस्पति अष्टमस्थ है, परन्तु वह उच्च का है । अतः प्रष्टा को कार्यसिद्धि का आदेश करना चाहिए । वैसे भी पञ्चम को शुक्र शुभग्रह होकर देख रहा है । भाग्येश और कर्मेश का योग भी कर्म स्थान में हो रहा है । फलतः प्रत्येक अवस्था में कार्य सिद्धि की सूचना मिल रही है ।

वीक्षणयुग्भ्यां क्रूरैर्लग्नषडष्टसु च विद्ध इत्यबलः ।

पुष्णाति कष्टभावं मृत्युमपि प्रश्नतश्चन्द्रः ॥ १०५ ॥

दीप्तिः—प्रश्नतः पृच्छायाश्चन्द्रः क्रूरैः पापैर्वीक्षणयुग्भ्यां वीक्षितो वा युतो वा द्वाभ्यां प्रकाराभ्यां लग्ने, षष्ठभावे अष्टमभावे वा विद्धो भवति तदा स अबलो ज्ञेयः । एतादृशश्चन्द्रः कष्टभावं पुष्णाति वर्द्धयति मृत्युमपि मरणञ्चापि प्रयच्छति । क्रूरग्रहैर्दृष्टो युतो वा ग्रहो विद्ध इत्युच्यते । विद्धो ग्रहो निर्बलो भवति । तत्रापि चन्द्रः शीघ्रमेव मलिनो भवति ।

हिन्दी—प्रश्न काल में क्रूर ग्रह से दृष्ट या युत चन्द्रमा विद्ध कहलाता है । विद्ध चन्द्रमा यदि लग्न, शत्रु भाव या अष्टमभाव में स्थित हो तो कष्ट की अभिवृद्धि करता है और मृत्यु भी देता है ।

चन्द्रमा बीज कारक ग्रह होने के कारण प्रश्न को प्रभावित करता है । प्रश्नकुण्डली में चन्द्रमा की स्थिति का अपना विशेष स्थान है । यदि यही चन्द्र विद्ध होकर १, ६ अथवा ८ में हो तो निश्चय ही कष्ट और मृत्यु को सूचित करता है । प्रायशः आचार्य १२ वें भाव में स्थित चन्द्रमा को भी हानिकारक मानते हैं ।

द्वादशे शोभनः खेटो विवाहादिषु सद्व्ययम् ।

क्रूरोऽप्यसद्व्ययं चोरराजाग्निप्रभवं ग्रहः ॥ १०६ ॥

दीप्तिः—यदि प्रश्नकाले द्वादशे भावे शोभनः खेटः शुभग्रहो भवति तदा विवाहादिषु शुभकृत्येषु विवाहमुण्डनव्रतबन्धदीक्षा—प्रभृतिसंस्कारेषु द्रव्यव्ययो भवति । अपि तत्र क्रूरग्रहः स्थितः स्यात् तदा चोरराजाग्निप्रभवं चौरराजशासनाग्निदाहात्मकमसद् व्ययमशोभनस्थानेद्रव्यहानिर्जायते । प्रश्नकाले द्वादशभावे स्थिताः क्रूरग्रहाः प्रष्टुर्द्रव्यमस्थाने विनियोजयन्ति । विषयेऽस्मिन् प्रश्नपण्डिता प्रतिपादयन्ति—

रवौ द्वादशे चन्द्रे वाऽवश्यं राजकुले व्ययम् ।

विचारयेद् व्यवस्थैवमेव सर्वत्र पण्डितः ॥

हिन्दी—प्रश्नकुण्डली में यदि शुभ ग्रह द्वादशभाव में स्थित हों तो विवाहयज्ञोपवीत तथा चूडाप्रभृति शुभ कार्यों में सद्व्यय कराते हैं । यदि यहीं

पर पाप ग्रह स्थित हों तो चोरी राजदण्ड तथा अग्निदाह के कारण धन हानि कराते हैं ।

बारहवें भाव से किसी भी प्रकार के व्यय का विचार किया जाता है । अतः क्रूर ग्रह से युक्त होने पर अशुभ कार्यों और शुभग्रहों से युक्त होने पर शुभ कार्यों में व्यय होने की सूचना इसी भाव से मिलती है । क्रूर शुभग्रहों में मंगल व्ययस्थ हो तो चोट-चपेट और अग्नि से धन की हानि होती है । शनि व्ययस्थ हो तो राजा से या प्रशासन से दण्डित होने के कारण व्यय होता है । इसी प्रकार राहु तथा केतु का भी फल समझना चाहिए । सूर्य ग्रह के व्ययस्थ होने से शारीरिक कष्ट के कारण आर्थिक नुकसान होता । व्यय भाव में यदि चन्द्र, बृहस्पति, शुक्र या बुध इनमें से कोई भी पापरहित होकर बैठा हो तो शुभ कार्य में खर्च होता है । विवाह, यज्ञादि, मुण्डन तथा पार्टियों में किया हुआ खर्च शुभ में आयेगा । शुभ व्यय से वैसे व्यय को समझना चाहिए जिसके करने से मन में उल्लास हो तथा श्रेय की अभिवृद्धि हो ।

इति संकीर्णपदनिर्णयद्वाम्

अथ दीप्तपृच्छाद्वारम् ॥ २४ ॥

गृहमागतो न यदसौ किं बद्धः किमथ हत इति प्रश्ने ।

मूर्तो क्रूरो यदि तत्र हतो न बद्धोऽथवापुरुषः ॥ १०७ ॥

दीप्तिः—कश्चिज्जनो देशान्तरं गतस्ततो नाद्याप्यागतः । अतस्तस्य गृहस्य कश्चित्समागत्य गणकं पृच्छति—नागत अद्यापि प्रवासी किमसौ बद्धो हतो वेति प्रश्नेऽस्मिन् यदि मूर्तो प्रश्नलग्ने क्रूरो ग्रहो भवति तदा तत्र विदेशे प्रवासी न हतो न बद्धः किं तु कुशली वर्तत इति वाच्यम् ।

हिन्दी—वह प्रवासी घर नहीं आया । क्या वह बन्दी बना दिया गया है ? अथवा वह मार दिया गया है ? इस प्रश्न के विचार में—यदि क्रूर ग्रह लग्न में बैठा हो तो वह प्रवासी न बन्दी है न तो मृत ही । अर्थात्—प्रवासी सकुशल है ।

सप्तमोऽष्टमगो वा चेत्कूरस्तद्धतोऽथ बद्धो वा ।

मूर्तो च सप्तमेऽपि वा च यद्वा लग्नेऽष्टमे च भवेत् ॥ १०८ ॥

कूरस्तदाऽसौ पुरुषो बद्धश्च हतश्च मुच्यते च परम् ।

दीप्तत्वाद् विहितमिदं व्याख्यानं कूरविषयमिह ॥ १०९ ॥

दीप्तिः—चेत् कूरो ग्रहः सप्तमग भार्यास्थानङ्गत अष्टमगो रन्ध्रस्थो वा तदा प्रवासी हतो बद्धो वा ज्ञेयः । पुनश्चात्र विकल्पो दर्शयति—यदि मूर्तो लग्ने सप्तमेऽपि च यद्वा विकल्पे प्रयुक्तः शब्दो लग्नेऽष्टमे च कूरग्रहो भवेद् तदाऽसौ प्रवासी पुरुषो हतो मारितो बद्धश्च परं मुच्यते । समयात् स मुक्तो भविष्यतीति फलं वाच्यम् । एतद्व्याख्यानं कूराणां दीप्तत्वाद् इह वर्णितं ग्रन्थकृता ।

हिन्दी—प्रश्न लग्न से सप्तम अथवा अष्टम भाव में कूर ग्रह बैठे हों तो 'प्रवासी बन्दी है अथवा मार दिया गया है' ऐसा फलादेश करना चाहिए । यदि लग्न और सप्तम दोनों भावों में कूर ग्रह बैठे हों अथवा लग्न और अष्टम में कूर ग्रह हों तो प्रवासी बन्दी है या मृत है परन्तु वह मुक्त हो जाएगा, ऐसा कहना चाहिए । आचार्य ने इस विषय का प्रतिपादन कूर ग्रहों की दीप्ति के आधार पर किया है ।

यहाँ एक प्रश्न उठता है—क्या मृत व्यक्ति पुनः जीवित होकर आ सकता है ? इस शंका के समाधान के लिए अष्टविध मरण को समझना पड़ेगा—

व्यथा दुःखं भयं लज्जा रोगः शोकस्तथैव च ।

बन्धनं चावमानं च मृत्युश्चाष्टविधः स्मृतः ॥

व्यथा, दुःख, भय, लज्जा, रोग, शोक, बन्धन तथा अवमान को भी श्रेष्ठ जनों ने मृत्यु तुल्य ही कहा है । अतः इन कष्टों को झेल कर लौट आना ही मृत्यु से पुनः मुक्त होना कहा गया है । 'मुच्यते परं' पद का यही आशय है ।

ताजिक नीलकण्ठी में भुवनदीपक के ये तीनों श्लोक अविकल उद्धृत मिलते हैं ।

प्रवासी बन्धन योग—

१. प्रश्न लग्न से सप्तम या अष्टम स्थान में कूर ग्रह हों ।



२. प्रश्नलग्न से त्रिकोण (५, ९), चतुर्थ, अष्टम तथा सप्तम भवन में यदि क्रूर ग्रह हों तथा क्रूर ग्रह से दृष्ट भी हों तो निश्चिततौर से प्रवासी बन्दी होता है—

त्रिकोणचतुरस्रास्तस्थितः पापग्रहो यदि ।

ग्रहैर्निरीक्षितः पापैर्नूनं बन्धनमादिशेत् ॥

३. पापग्रह (क्रूरग्रह) सप्तम और अष्टम में हों अथवा लग्न और सप्तम में हों अथवा लग्न और अष्टम में हों तो प्रवासी बन्दी भी होता है और शीघ्र मुक्त भी हो जाता है—

बद्धः सप्ताष्टमे क्रूरे मूर्त्यस्ते चाष्टलग्नगे ।

बद्धो विमुच्यतेऽत्याशु ..... ॥

प्रवासी मृत्यु योग—

१. लग्नेश ६, ८ या १२ में पाप ग्रह से दृष्ट या युक्त हो, केन्द्र में पाप ग्रह हों तथा अष्टमेश भी पाप ही हो तो प्रवासी की मृत्यु होती है ।

२. लग्नेश अस्तङ्गत हो चतुर्थ स्थान में बैठा हो तथा उस पर मंगल की दृष्टि पड़ती हो तो मरण योग समझना चाहिए—  
'लग्नेशेऽस्तमितेऽम्बुस्थे कुजदृष्टे तदा मृतिः ।'

३. चतुर्थभवनस्थ चन्द्रमा पाप ग्रह अष्टमेश से योग करता हो तो प्रवासी की जेल में ही मृत्यु कहनी चाहिए—

चन्द्रश्चाम्बुगपापेन मृत्युनाथेन योगकृत् ।

तदा गुप्त्यां मृतिः

॥ ता० नी० प्र०

बन्धन, मृत्यु तथा कष्ट का योग—

१. प्रश्नलग्न पृष्ठोदय राशियों (मेष, वृष, कर्कट, धनु, मकर) तथा मीन (उभयोदय) का हो तथा उस पर पाप ग्रह की दृष्टि पड़ रही हो तो प्रवासी बन्दी या मृत होता है ।

२. प्रश्न लग्न से तीसरे छठे तथा केन्द्र स्थान में पाप ग्रह हों तथा शुभ ग्रहों से दृष्ट न हों तो प्रवासी का वध या बन्धन कहना चाहिए ।

३. प्रश्न लग्न से तीसरे स्थान में पाप ग्रह हों तथा शुभ ग्रह से अदृष्ट हों तो प्रवासी प्रथम स्थान को प्राप्त करता है अर्थात् उसका प्रवास में ही स्थानान्तरण हो जाता है । यदि प्रश्न लग्न से षष्ठ स्थान में अशुभ ग्रह हों तथा शुभ ग्रह से अदृष्ट हों तो प्रवासी की मृत्यु समझनी चाहिए । ठीक यही स्थिति केन्द्र में हो अर्थात् अशुभ ग्रह स्थित हों और शुभ से दृष्ट न हों तो प्रवासी का धन प्रवास काल में ही चोरों द्वारा अपहृत हो जाता है—

पृष्ठोदये पापनिरीक्षिते वा  
पापास्तृतीये रिपुकेन्द्रगौ वा ।  
सौम्यैरदृष्टा बधबन्धनास्यु-  
र्नष्टा विनष्टा मुषितास्तु वा स्युः ॥  
इति दीप्तपृच्छाद्वारम्

अथ पथिकगमनागमनद्वारम् ॥ २५ ॥

चतुर्थे दशमे वापि यदि सौम्यग्रहो भवेत् ।

तदा न गमनं क्रूरस्तत्रैव गमनं भवेत् ॥ ११० ॥

**दीप्तिः**—गमनागमनपृच्छायां यदि प्रश्नलग्नाच्चतुर्थे स्थाने दशमे स्थाने वा कश्चित्सौम्यग्रहो भवेत् तदा गमनं न स्यात् । तत्रैव चतुर्थस्थाने दशमस्थाने वा यदि क्रूरग्रहः स्यात् तदा गमनं भवेदिति वाच्यम् । प्रश्नभूषणेऽपि—चतुर्थे स्थाने सौम्यग्रहास्स्युस्तदा गमनं न कथनीयमित्युक्तम् । परं तत्रैकविशेषो निर्दिष्टः—यदि दशमे स्थाने क्रूराः स्युस्तदा पथिकस्यागमनमपि न भवति । अस्याशयो यद् गमनप्रश्ने चतुर्थभावो विलोकनीय आगमनप्रश्ने च दशमः, परञ्च तत्र ग्रहाणां स्थितिर्विपरीता भवति तद्यथा—

प्रश्नतनोः सुखभे दशमे वा सौम्यखगो गमनं न हि गन्तुः ।

तत्र गता यदि पापनभोगा आगमनं न वदन्ति महान्त ॥ इति ॥

**हिन्दी**—प्रश्न लग्न से चतुर्थ या दशम स्थान में यदि शुभ ग्रह बैठे हों तो प्रश्ना का गमन नहीं होता । वहीं यदि क्रूर ग्रह बैठे हों तो गमन होता है ।

चतुर्थ स्थान गृह से सम्बन्धित होता है । इसी प्रकार दशम स्थान कर्म का प्रतिनिधि भाव है । फलतः इन दोनों भावों में से किसी भाव में स्थित शुभग्रह घर से अन्यत्र स्थल को कर्मक्षेत्र नहीं बनने देते ।

**द्वितीये केन्द्रतोऽभ्येति यदा खेटस्तदागमः ।**

**आयियासुं ग्रहं दृष्ट्वा ब्रूयादिदमशङ्कितः ॥ १११ ॥**

**दीप्तिः**—प्रवासस्थितः पुरुषो गृहं कदाऽऽगमिष्यतीति प्रश्ने यदा खेटो ग्रहः केन्द्रतः तनुचतुर्थसप्तमदशमस्थानानेभ्यो द्वितीये स्थाने अभ्येति समायाति तदा पथिकागमो भवति । द्वितीयपञ्चमाष्टमैकादशभावेषु यदा ग्रह एति तदा प्रवासी गृहमायाति । आयियासुं ग्रहमागनशीलं खेटं दृष्ट्वा इदमागमनविषयकं ज्ञानमशङ्कितो गणको ब्रूयाद् वदेद् । विषयेऽस्मिन् प्रश्नभूषणेऽपि—

चतुर्थतो वा दशमाद् द्वितीयेऽभ्येति खेचरः ।

यावता तावता धीरः पथिकागमनं वदेत् ॥

**हिन्दी**—केन्द्र (१, ४, ७, १०) से द्वितीय (२, ५, ८, ११) स्थान में जब ग्रह आता है तब प्रवासी का आगमन होता है । द्वितीय, पञ्चम, अष्टम तथा एकादश स्थान में आने वाले ग्रह का विचार कर के आगमन के सन्दर्भ में निःशंक फलादेश करना चाहिए ।

केन्द्र से द्वितीय स्थान में ग्रह को आने में जितना काल लगेगा उतना ही काल प्रवासी को घर आने में लगेगा ऐसा फलादेश करना चाहिए ।

**द्वितीयमायियासुश्च चन्द्रे केन्द्राद्विशेषतः ।**

**पथिकागमनं ब्रूते मुक्त्वा सप्तमकेन्द्रकम् ॥ ११२ ॥**

**दीप्तिः**—केन्द्राद् द्वितीयं स्थानं विशेषतश्चन्द्रे ग्रहे आयियासु पथिकागमनं ब्रूते ब्रवीति परञ्चैतत्फलं सप्तमकेन्द्रकं मुक्त्वा अर्थात् २, ५, ११ (द्वितीयपञ्चमाष्टमैकादशेषु) स्थानेषु स्थितश्चन्द्रः पथिकागमनं त्वरितं सूचयति परञ्च सप्तमस्थ असौ यदाऽष्टमं ग्रहं योयासु भवति तदा मरणं तत्तुल्यं कष्टं वा सूचयति । प्रश्नभूषणेऽपि प्राप्यते—

प्रश्नकाले यदा केन्द्राद् द्वितीये तारकापतिः ।

आयाति पथिकस्तत्र विना सप्तमराशिगम् ॥ इति

स्पष्टार्थः केन्द्राद् द्वितीयं स्थानमष्टमं विहाय चन्द्रो यदा याति तदा पथिकः शीघ्रमेव गृहमेति ।

**हिन्दी**—केन्द्र से द्वितीय स्थान में जब ग्रह आता है विशेषरूप से चन्द्रमा तब पथिक का अगमन कहना चाहिए परन्तु सप्तमकेन्द्र से द्वितीय स्थान (अष्टम) को छोड़ कर यह फल घटता है ।

अष्टम का चन्द्रमा प्रत्येक स्थिति में अशुभ फल देता है । अतः पथिक आगमन विचार में भी इसका परित्याग किया गया है ।

**इन्दुः सप्तगमो लग्नात् पथिकं वक्ति मार्गगम् ।**

**मार्गाधिपश्च राश्यार्द्धात्परभागे व्यवस्थितः ॥ ११३ ॥**

**दीप्ति**—यदा प्रश्नलग्नाद् इन्दुश्चन्द्रः सप्तमस्थो भवति मार्गाधिपश्च सप्तमेशः केचन नवमेषो मार्गाधिपो भवतीति मन्यन्ते, स राश्यार्द्धात् पञ्चदशांशात् परभागे उत्तरार्द्धे व्यवस्थितो भवति तदा गणकः पथिकमागमनशीलं जनं मार्गगं मार्गस्थितं वक्ति कथयति । विषयेऽस्मिन् जीवनाथज्ञामहोदया अपि प्रश्नभूषणे जगदुः—

सप्तमस्थो यदा चन्द्रः पथिकः पथि वर्तते ।

मार्गाधिपो वा राश्यर्द्धात्परतो यदि संस्थितः ॥ इति ॥

मार्गाधिपस्य निर्णये भावात्कार्यनिर्णयो करणीयस्ततो भावेशस्य निर्णयो ज्ञेयः । सप्तमस्थानात् किं विचार्यमित्यस्मिन्नेव ग्रन्थे—

‘गमागमकलत्राणि पश्येत् प्राज्ञः कलत्रतः ।’

ततो नवमस्थानात्किं चिन्त्यमित्यपि तत्रैव—

‘दीक्षां यात्रां मठं धर्मं धर्मान्निश्चित्य कीर्तयेत् ।’

उभाभ्यां भावाभ्यां यात्राचिन्तनं कर्तुं शक्यते । भुवनदीपकस्यविवृतौ मार्गाधिपेन पदेन नवमेशस्यैव ग्रहणं कृतं पूर्वाचार्यैः ।

**हिन्दी**—जब प्रश्नलग्न से सप्तमस्थान में चन्द्रमा हो और मार्गाधिप (नवमेश या सप्तमेश) राशि के उत्तरार्द्ध (पन्द्रह अंश से अधिक भाग) में स्थित हो तो प्रवासी को मार्ग में कहना चाहिए ।

मार्गाधिप से सप्तमेश तथा नवमेश दोनों का बोध होता है क्योंकि सप्तम भाव से गमागम विचार होता है तथा नवम भाव से यात्रा का । फलतः प्राचीन टीकाकारों ने सप्तमेश और नवमेश दोनों का ही मार्गाधिप कहा है ।

**चरलग्ने चरांशे च चतुर्थे चन्द्रमाः स्थितः ।**

**ब्रूते प्रवासिनं व्यक्तं समायातं स्ववेशमनि ॥ ११४ ॥**

**दीप्तिः**—पथिकस्यागमनप्रश्ने चरलग्ने मेषकर्कतुलामकरप्रभृतयश्चत्वारो राशयश्चरसंज्ञका भवन्ति । अतो मेषादिचरलग्ने चरांशे च लग्नस्य नवांशोऽपि चरस्स्यात्तस्मिन्नंशे चन्द्रमा इन्दुश्चतुर्थे तुर्ये स्थितः स्यात् । चरलग्नाच्चतुर्थोऽपि चर एव भवति । अतश्चन्द्रोऽपि चरे स्थितः व्यक्तं स्पष्टमेव प्रवासिनं पथिकं स्ववेशमनि स्वगृहे समायातं ब्रूते ब्रवीति । यदीदृशी स्थितिः स्यात् तदा वाच्यं यत् पथिको गृहमागतो विद्यते । पथिकगमनागमनद्वारेण वैदेशिकानां प्रवासिनामागमनविचारो भवति । ‘विदेशं गमिष्यामि न वेति प्रश्ने’ अनेनैव द्वारेण सर्वं विचारणीयमिति ।

**हिन्दी**—प्रश्नकाल के समय चर लग्न हो तथा चर राशि का ही लग्न नवमांश हो एवं चन्द्रमा चतुर्थस्थान में स्थित हो तो ‘प्रवासी घर आ गया है’ ऐसा स्पष्ट कहना चाहिए ।

|       |           |       |  |
|-------|-----------|-------|--|
|       | २         | १२    |  |
| गु. ३ | १         | ११रा. |  |
|       | च. ४      | १०    |  |
| के. ५ | शु. ७     | श. ९  |  |
|       | सू. बु. ६ | भौ. ८ |  |

इस प्रश्नकुण्डली में चर लग्न है तथा चर राशिस्थ होकर चन्द्रमा चतुर्थ भवन में स्थित है । अतः प्रवासी शीघ्र ही घर आयेगा ऐसा कहना चाहिए ।

चर राशियाँ गमनागमन के लिए उपयुक्त होती हैं । 'गमनागमन' प्रकरण अत्यन्त लोकोपयोगी होता है । अतः इसका सूक्ष्म विचार करके आचार्यों ने अनेक निष्कर्षों को निकाला है ।

#### गमनागमनभावविचार—

विदेश जाने या विदेश से स्वदेश आने के प्रश्न में द्वितीय, तृतीय तथा पञ्चमभाव से विचार करना चाहिए । लग्न और चन्द्रमा की प्रधानता तो प्रश्नकुण्डली में स्वतः सिद्ध है । यात्रा कराने में चर राशियाँ कारक होती हैं । अतः गमनागमन में इनका भी विचार करना चाहिए ।

प्रश्न लग्न से विदेशादि यात्रा की प्रवृत्ति, चतुर्थ भाव से यात्रा की वृद्धि, दशम भाव से यात्रा की निवृत्ति (वापसी) का विचार किया जाता है—

प्रश्नलग्नाच्च्युतिर्वाच्या वृद्धिस्तु सुखभावतः ।

प्रवासो दशमस्थानान्निवृत्तिः सप्तमालयात् ॥ प्र० भू० ॥

सप्तम स्थान में व्यापार तथा गमनागमन का विचार होता है । सप्तमस्थान लग्न से दृष्टि सम्बन्धी भी रखता है । अतः सप्तम भाव को भी दृष्टि में रख कर ही प्रवास सम्बन्धी प्रश्नों का फलादेश करना चाहिए । मार्ग सम्बन्धी सुविधाओं और कष्टों का सूचक नवम भाव होता है । अतः यात्रा सम्बन्धी प्रश्नों के उत्तर में इस भाव का विशिष्ट स्थान होता है ।

#### प्रवास गमन योग—

(१) चतुर्थ तथा दशम में सौम्य ग्रह हों तो विदेशादि यात्रा किसी न किसी कारण से नहीं हो पाती ।

(२) यदि चतुर्थ तथा दशम स्थान में क्रूर ग्रहों की स्थिति हो तो विदेशादि यात्रा होती है ।

(३) लग्नेश केन्द्र में न हो तो विदेशादि यात्रा को रोकता है । अतः लग्नेश केन्द्र से अन्यत्रनस्थित हो तथा नवमेश इत्थशाल करता हो तो विदेश गमन होता है ।

(४) नवमेश केन्द्र में हो और लग्नेश इत्थशाल करता हो तो विदेश यात्रा होती है ।

### प्रवास से आगमन का योग—

१. तृतीय स्थान में यदि कोई शुभ ग्रह आता है तब प्रवासी भी अपने घर वापस आ जाता है—

प्रयाति सहजस्थानमसौ यस्यां शुभग्रहः ।

आयाति पथिकस्तत्र तस्यामेव नरो गृहम् ॥

२. चन्द्रमा अष्टमस्थ हो, केन्द्र में पाप ग्रह न हों और कोई शुभ ग्रह ग्यारहवें भाव में बैठा हो तो प्रवासी शीघ्र ही घर आता है—

अष्टमस्थे निशानाथे कण्टकैः पापवर्जितैः ।

प्रवासी शीघ्रमायाति सौम्यैर्लाभसमन्वितैः ॥

३. प्रश्न लग्न से जब कोई ग्रह द्वितीय, पञ्चम, अष्टम तथा एकादश स्थान में आता है तो प्रवासी भी घर आता है । चन्द्रमा यदि इन स्थानों में आगमन करता हो तो प्रवासी के आगमन की पूर्ण संभावना समझनी चाहिए । अष्टमस्थ चन्द्रमा प्रवासी के आगमन का सूचक नहीं होता । यह प्रतिबन्ध केवल चन्द्रमा के साथ है ।

४. चर लग्न हो, लग्न नवमांश चर हो तथा चतुर्थ भाव में चन्द्रमा हो तो प्रवासी भी आता है और उसकी चिट्ठी भी आती है—

चराङ्गे चरभागेऽपि चतुर्थे यदि चन्द्रमाः ।

आयाति तत्क्षणादेव प्रवासी पत्रिकाऽपि च ॥

इति पथिकगमनागमनद्वारम् ।

अथ मृत्युयोगद्वारम् ॥ २६ ॥

स्मरे व्यये धने क्रूरे लग्न मृत्यौ रिपौ शशी ।

सद्यो मृत्युकरो योगः क्रूरे वा चन्द्रपार्श्वगे ॥ ११५ ॥

दीप्तिः—रोगिणो जीवनमरणपृच्छायां यदि स्मरे सप्तमे, व्यये द्वादशे, धने द्वितीये, क्रूरे पापग्रहयुते, एतेषु स्थानेषु कश्चित् क्रूर ग्रहो भवति, एवञ्च लग्ने मूर्त्तौ, मृत्यौ रन्ध्रे, रिपौ षष्ठे, शशी चन्द्रो भवति तदा सद्यः शीघ्रमेव मृत्युकरो योगो मृत्युकारको योगो जायते । अथवा विकल्पोऽयं यत् चन्द्रपार्श्वगे चन्द्रमसः

समीपस्थे क्रूरेऽपि मृत्युयोगो भवति । रोगिणो जीवनमरणपृच्छायां यदि चन्द्रः क्रूराक्रान्तो भवति तदापि मृत्युकरो योगः समुत्पद्यते । लग्नाद् वयः प्रमाणं, कष्टं, शारीरिकं सुखदुःखादिकञ्च विचार्यते । सप्तमस्थानात् कश्चिद् ग्रहो लग्नं विलोकयति । अतस्तस्य शुभाशुभं फलं रोगिणः सुखाय कष्टाय वा भवति । धनस्थानं मारकस्थानं भवति । व्ययस्थानादपि दुःखादिकं ज्ञायते । षष्ठस्थानाद्रिपुकष्टयोर्विचारो भवति, एवमेव अष्टमस्थानादपि—

‘नष्टे दष्टे रणे व्याधौ छिद्रे छिद्रं निरीक्षयेत्’ इति । अतो रोगिणो मङ्गलपृच्छायामेतानि स्थानानि विचारसरणौ समायान्ति । मरणप्रश्ने चन्द्रस्य महत्त्वमुपवर्णयन् प्रश्नभूषणकारोऽपि कथयति—

प्रश्नलग्नोपगं पापभं रोगिणः

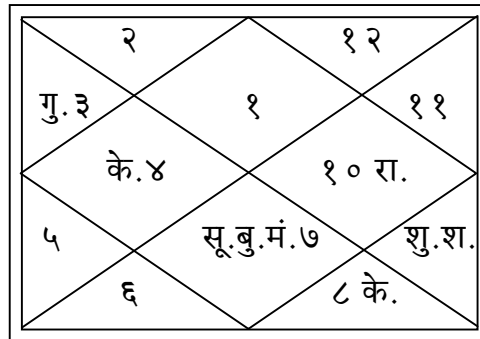
पापयुक्तेक्षितं चाष्टमर्क्षं यदा ।

पापयोरन्तरे पापयुक्तोऽष्टमे

चन्द्रमाः मृत्युयोगो भवेत्सत्त्वरम् ॥ इति

हिन्दी—यदि सप्तम, द्वादश, तथा द्वितीय भाव में क्रूर ग्रह हो और लग्न, अष्टम या षष्ठभाव में चन्द्रमा हो तो रोगी के लिए शीघ्र मृत्युकारक योग होता है। अथवा चन्द्रमा के उभय पार्श्व में क्रूर ग्रह हों तो भी शीघ्र मृत्यु करने वाला योग होता है ।

रोगी के जीवन-मरण से सम्बन्धित प्रश्न में चन्द्रमा का विशेष महत्त्व होता है । क्रूर युक्त या क्रूराक्रान्त चन्द्रमा रोगी के लिए घातक होता है । इस सिद्धान्त का प्रतिपादन आचार्य नीलकण्ठ, जीवनाथ झा गणक तथा प्रश्नचिन्तामणिकार प्रभृति विद्वानों ने किया है ।





रोगी के जीवन मरण से सम्बन्धित इस प्रश्न कुण्डली में सप्तमभाव में दो क्रूर ग्रह सूर्य तथा मंगल बैठे हैं और अष्टम में चन्द्रमा है । इस प्रकार से यह मृत्युयोग है । चन्द्रमा के दोनों पार्श्वों में पापग्रह स्थित हैं । अतः यह द्वितीय प्रकार का मृत्युकारक योग है ।

**लग्ने रविः स्मरे चन्द्रो भवेद्योगोऽयमेव हि ।**

**एतेषु रोगिणो मृत्युः सद्यस्त्वन्यस्य चापदः ॥ ११६ ॥**

**दीप्तिः**—रोगिणो जीवनमरणयोः प्रश्ने यदि लग्ने सूर्यो भवति स्मरे सप्तमस्थाने च चन्द्रो भवेत् तदाऽयं योगो हि निश्चयेनमृत्युकारको भवति । एतेषु पूर्वोक्तेषु योगेषु रोगिणो मृत्युर्भवति । यदि रोगिणो मरणसम्बन्धितप्रश्नो न विद्यते तदाऽन्यप्रश्ने चापदो विपत्तिरिति जायते । विषयेऽस्मिन् प्रश्नभूषणकृताऽपि—

‘चन्द्रे लग्ने कलत्रेऽर्के शीघ्रं रोगी विनश्यति’ इत्युच्यते । लग्ने सूर्योभवेच्चन्द्रः सप्तमे चाथवा चन्द्रो लग्ने भवेत्यसूर्य एव सप्तमे तदा फले विपर्ययं नोत्पद्यते । अस्यार्थो मरण प्रश्ने सूर्याचन्द्रमसोः लग्नसप्तमयोः सम्बन्धो न क्षेमकरो भवति ।

अत्रापि श्लोकस्य द्वितीयचरणे ‘एव’ ‘हि’ अव्यय पदयोः प्रयोगो नोचिद् एकस्यैव प्रयोगादर्थनिष्पत्तेः ।

**हिन्दी**—प्रश्नलग्न में सूर्य हो तथा सप्तम स्थान में चन्द्रमा तो निश्चित ही मृत्युकारक (पूर्वोक्त) योग बनता है । इन (पूर्वकथित) योगों में रोगियों की शीघ्र मृत्यु होती है और यदि अन्य विषय का प्रश्न हो तो मात्र विपत्ति होती है ।

आचार्य नीलकण्ठ ने भी इस योग का प्रतिपादन किया है, परन्तु उन्होंने लग्न में सूर्य को न मान कर चन्द्रमा को माना है—

विधौ लग्ने स्मरौ भानौ रोगी याति यमालयम् ।

प्रश्नभूषण में भी चन्द्रमा को लग्न में तथा सूर्य को सप्तम भाव में मरण योग कारक माना गया है ।

**रोगी के मरण का विचार—**

१. लग्नेश उदित हो तथा अष्टमेश दुर्बल हो एवं लाभेश बलवान् हो तो रोगी दीर्घ जीवी होता है —

लग्नपञ्चोदितो मृत्युपो दुर्बलो

लाभपो वीर्ययुक्तश्चिरञ्जीवनम् ॥

२. प्रश्नलग्न से सप्तम भाव में शुभ ग्रह बैठे हों तो रोगी रोममुक्त हो जाता है ।  
३. लग्नेश बलवान् ग्रह हो तथा केन्द्र में शुभ ग्रह उच्च या मूलत्रिकोणगत हों तो रोगी की प्राण रक्षा होती है—

लग्ननाथे च सबले केन्द्रसंस्थे शुभग्रहे ।

उच्चगे वा त्रिकोणे वा रोगी जीवति निश्चयम् ॥ ता० नी०

४. लग्न में एक भी शुभ ग्रह बली होकर बैठा हो अथवा शुभ ग्रह धर्म (नवम) शत्रु (षष्ठ), आय (एकादश), और तृतीय स्थान में बैठे हों तो रोगी के जीवन की रक्षा होती है—

एकः शुभो बली लग्ने त्रायते रोगपीडितम् ।

सौम्या धर्मारिलाभस्थास्तृतीयस्था गदावहाः ॥ ता० नी०

**रोग वृद्धि का लक्षण—**

यदि प्रश्न काल के समय लग्न में क्रूर ग्रह बैठा हो तो दवा करने पर रोग में और अधिक वृद्धि होती है—

‘प्रश्ने क्रूरग्रहे लग्ने रोगवृद्धिश्चिकित्सकात् ।’ ता० नी०

**ग्रह जनित रोग—**

ग्रहों के अशुभ फल से उत्पन्न होने वाले रोगों का निर्देश—

**सूर्य**—अग्निरोग, पित्त, रोग, ज्वर, जलन, क्षय, अतिसार तथा हृदयरोग करता है। यह नेत्रदोष तथा गंजापन भी देता है ।

**चन्द्र**—पाण्डुरोग, जलोदर, स्त्री जनित रोग, कफ, दमा, निमोनिया, तपेदिक तथा उच्चाटन करता है । यह पागलपन तथा हिस्टरिया रोग भी पैदा करता है ।

**मंगल**—शस्त्रघात, अग्निदाह, ग्रन्थिरोग, घाव, चोट, अण्डकोश वृद्धि, बवासीर, ब्लडप्रेसर (रक्तचाप) प्रभृति रोग देता है ।

**बुध**—गुह्य रोग, त्रिदोष, क्षय, उदर रोग, सन्निपात, रहस्यमय रोग, संग्रहिणी, शूल, मन्दागिन तथा मस्तिष्क भ्रंश करता है ।

**गुरु**—गुल्म, अजीर्ण, पथरी, आलस्य अनिद्रा तथा पीलिया रोग को करता है ।  
**शुक्र**—प्रमेह, गुप्त रोग, वीर्य विशिष्य (सुजाक), गुर्दा रोग तथा मोतियाबिन्द प्रभृति रोगों को पैदा करता है ।

**शनि**—स्नायु दौर्बल्य, साइटिका, गठिया, लकवा, कैंसर, और वायु विकार करता है तथा किसी भी रोग की भयंकरता को बढ़ा देता है ।

**राहु**—मृगी, शीतला, खांसी, संक्रामरोग, कृमिरोग, अरुचि, कुष्ठ, बवासीर, अलसर तथा आलस्य को देता है ।

**केतु**—चेचक, वाणी दोष, न्यून रक्तचाप तथा संक्रामक रोग को देता है ।

**ग्रहों से देवादि दोष विचार—**

सूर्य दोष होने पर देव दोष तथा ब्राह्मण के अभिशाप से कष्ट होता है । चन्द्रमा के अशुभ होने पर कालिका तथा स्त्री जनित अभिचार से कष्ट होता है । मंगल ग्रह के दोष से भूत, प्रेत तथा भैरवादिक व्योमचरों से रोग उत्पन्न होता है । बुध ग्रह अशुभ हो तो डाकिनी और योगिनियों से दुःख उत्पन्न करता है । बृहस्पति के अशुभ होने पर इष्टदेवता, यक्ष तथा श्रेष्ठ जनों के अभिशाप से कष्ट होता है । शुक्र ग्रह के दोष से स्त्री जनित अभिचार, पितृदोष तथा अन्य दैव दोष से रोग कष्ट होता है । शनि ग्रह के अशुभ होने से पिशाच एवं प्रेतादिकों से भय और कष्ट होता है । राहु के अनिष्टकर होने से अदृश्य योनियों के उत्पात से कष्ट होता है ।

इति मृत्युयोगद्वारम्

अथ दुर्गभङ्गद्वारम् ॥ २७ ॥

पृच्छायां मूर्तिगे क्रूरे दुर्गभङ्गो न जायते ।

बलहीनेऽपि वक्तव्यं किं पुनर्बलशालिनि ॥ ११७ ॥

**दीप्तिः**—दुर्गादिभङ्गपृच्छाया मूर्तिगे लग्नस्थिते क्रूरे पापग्रहे दुर्गभङ्गो न जायते । यदि प्रश्नलग्ने क्रूरग्रहो भवति तदा दुर्गस्य कदापि भङ्गो न भवति । बलहीनेऽपि निर्बलेऽपि वक्तव्यं यद् दुर्गभङ्गो न भविष्यति किं पुनः बलशालिनी क्रूरग्रहे लग्ने स्थिते ? अर्थात् कश्चित्क्रूरः सबलो भूत्वा लग्ने स्थितो भवति तदा

केनापि प्रकारेण दुर्गभङ्गो न भवति । निर्बलोऽपि क्रूरो मूर्तौ स्थितः सन् दुर्गभङ्गं वारयति ।

**हिन्दी**—प्रश्न लग्न में यदि क्रूर ग्रह बैठा हो तो दुर्ग (किला) भंग नहीं होता । लग्नस्थ निर्बल ग्रह भी दुर्ग भंग नहीं देता फिर सबल ग्रह स्थित हो तो क्या समझा ? अर्थात् सबल क्रूर लग्नस्थ हो तो किला किसी भी हाल में नहीं टूटता ।

ताजिकनीलकण्ठी के विशेषप्रश्नाध्याय में प्रश्नचिन्तामणि का श्लोक दिया गया है जो भुवनदीपक से मिलता है—

प्रश्ने विलग्ने क्रूरे वा दुर्गभङ्गो न जायते ।

विशेषतो भूमिपुत्रे राहौ वा मूर्तिगे सति ॥ ५० ॥

क्षितिपुत्रो विशेषेण राहुर्यदि विलग्नगः ।

शक्रेणापि तदा दुर्गभङ्गं कर्तुं न शक्यते ॥ ११८ ॥

**दीप्ति**—विशेषेण क्रूरग्रहेष्वपि विशेषरूपेण यदि क्षितिपुत्रौ भौमो राहुर्वा विलग्नगो लग्नस्थितो भवति तदा शक्रेण इन्द्रेणापि दुर्गभङ्गं कर्तुं न शक्यते दुर्गभङ्गे अमितबलवान्नापि दुर्गं न जयतीति । क्रूरेषु ग्रहेषु राहुभौमयोर्बलमधिकं भवतीति सिद्धमेव तथ्यम् । भौमः सेनापतिर्ग्रहो भवति । राहुरपि सेनायाः प्रतिनिधिः । एतयोरेकतरस्य मूर्तौ विद्यमाने सति दुर्गभङ्गं कर्तुं न शक्यते ।

**हिन्दी**—विशेषरूप से यदि मंगल या राहु लग्न में स्थित हो तो इन्द्र के द्वारा भी दुर्गभंग नहीं किया जा सकता ।

मंगल और राहु ग्रह सेना तथा सेनापति के प्रतिनिधि हैं । अतः इन दोनों में से कोई एक भी ग्रह यदि प्रश्न लग्न में बैठा हो तो इन्द्र जैसा अमितबलशाली राजा भी शत्रु राजा का किला नहीं तोड़ सकता । कभी-कभी देखा गया है सेना की एक छोटी टुकड़ी भी बड़ी सेना से पराजित नहीं हो पाती । ऐसी स्थिति में इस ग्रह योग का अपना विशेष महत्त्व होता है ।

**सप्तमो यदि राहुः स्याद् दुर्ग झटिति भज्यते ।**

**मूर्तो क्रूरः शुभोऽमुष्मिन् क्रूरदृष्टिर्न शोभना ॥ ११९ ॥**

**दीप्तिः**—यदि प्रश्नलग्नाद् राहुः सप्तमः सप्तमे भावे राहुः स्यात् तदा दुर्ग झटिति शीघ्रं भज्यते दुर्गभङ्गो जायते इत्याशयः । लग्ने क्रूरग्रहाणां स्थितिः शोभना भवति परं क्रूरदृष्टिः कथमपि शोभना न भवति । अमुष्मिन् दुर्गभङ्गप्रश्ने लग्नस्थः क्रूरः शुभफलदायको दुर्गरक्षको भवति, सप्तमस्थः क्रूरोऽशुभफलदायको दुर्गभङ्गकारको भवतीत्याशयः ।

**हिन्दी**—प्रश्न लग्न से यदि सप्तम स्थान में राहु बैठा हो तो शीघ्र ही दुर्गभंग होता है । दुर्गभंग प्रश्न में लग्नस्थ क्रूर ग्रह शुभ होते हैं, परन्तु (लग्न पर) क्रूर ग्रह की दृष्टि शुभ नहीं होती ।

पाप ग्रह लग्न में स्थित हों तो दुर्ग की रक्षा होती है , परन्तु वे ही सप्तमस्थ होकर यदि लग्न को देख रहे हों तो दुर्गभंग शीघ्र ही हो जाता है । वस्तुतः लग्नस्थ क्रूर ग्रह दुर्ग की रक्षा का प्रतीक होता है । और सप्तमस्थ होकर वही दुर्गभंग का कारक हो जाता है ।

**मूर्ति सप्तमयोः क्रूराभावे लग्नपतिर्व्यये ।**

**षष्ठेऽष्टमे द्वितीये वा तदा दुर्गं न भज्यते ॥ १२० ॥**

**दीप्तिः**—मूर्तिसप्तमयोः प्रश्नकाले लग्नजायाभावयोः क्रूराभावे क्रूरग्रहाणामभावे लग्नपतिर्व्यये लग्नेशस्य द्वादशभावे स्थिते अथवा लग्नेशस्य षष्ठे रिपौ, अष्टमे मृतौ, द्वितीये धने वा स्थिते तदा दुर्गं न भज्यते दुर्गभङ्गो न जायते । ताजिकनीलकण्ठ्यामपि विषयेऽस्मिन् प्रमाणमेकं लभ्यते—

जामित्रोदयगे क्रूरे रिःफगे लग्ननायके ।

द्वितीये वाऽष्टमे षष्ठे तदा दुर्गं न लभ्यते ॥ इति ॥

**हिन्दी**—लग्न और सप्तमस्थान में क्रूर ग्रह न हों और लग्नेश षष्ठ, अष्टम या द्वितीयभाव में बैठा हो तो दुर्गभंग नहीं होता ।

दुर्ग भंग से सम्बन्धित प्रश्न के उत्तर में लग्नस्थ क्रूर ग्रह को शुभ माना गया है । यदि लग्न में क्रूर ग्रह हो तो सामान्य कर्म में वह अनिष्टकारक या अवरोधक होता है, परन्तु किला के टूटने से सम्बन्धित प्रश्न में वही क्रूर ग्रह

शुभ फलदायक या किला रक्षक हो जाता है । यदि लग्न में क्रूर ग्रह न हो पर लग्नेश त्रिक [ ६, ८, १२ ] या द्वितीय [मारक] द्वितीय स्थान में स्थित हो तो किला नहीं टूटता । त्रिक और मारक स्थान अन्यकर्मों के लिए अशुभ सूचक होते हैं पर दुर्ग भंग प्रश्न में ये शुभ फल दायक होते हैं ।

इति दुर्गभङ्गद्वारम्

अथ चौर्यादिस्थानद्वारम् ॥ २८ ॥

एवं चौर्याय यामीति मूर्तौ क्रूरः शुभावहः ।

दृष्टिः शुभावहात्रापि न क्रूरस्य कदाचन ॥ १२१ ॥

दीप्तिः—एवं पदं दुर्गभङ्गद्वारवदस्य द्वारस्य फलं ज्ञेयमिति प्रकटयति ।

यथा दुर्गभङ्गे मूर्तौ क्रूरखेटस्य स्थितिः शोभना गदिता परं क्रूरदृष्टिरशुभा तथैवात्रापिफलं विचार्यम् । यदि कश्चिदागत्य पृच्छति चौर्याय चौरकर्महेतवे यामीति तदा मूर्तौ लग्ने क्रूरः शुभावहो भवति परमत्रापि क्रूरस्य ग्रहस्य दृष्टिः कदाचन शुभावहा न भवति । प्रश्न लग्ने क्रूरस्य दृष्टिः कदापि शुभावहा न भवति चेत् स क्रूरः कुत्रापि स्थितः सन् लग्नं पश्यति । सप्तमस्थः क्रूरो लग्नं पश्यत्येव । अपरे स्थानेऽपि स्थितः क्रूरो विशेषदृष्ट्या लग्नं पश्यति । इयमपि क्रूरदृष्टिर्लग्नं स्पृशन्ती प्रष्टुः कार्यं नाशयति ।

हिन्दी—‘चोरी करने के लिए जा रहा हूँ’ इस प्रश्न के उत्तर में पूर्वोक्त द्वार (दुर्ग भंग) की तरह लग्न में स्थित क्रूर ग्रह शुभ-फल-दायक होता है । परन्तु यहाँ (चौर्यादिस्थानद्वार में) भी (लग्न पर) क्रूर ग्रह की दृष्टि कदापि शुभ नहीं होती ।

चोरी के द्वारा लाभ, हनन के द्वारा लाभ, उग्र कर्म, दुर्ग भंग, वध तथा बन्धनादि प्रश्नों में लग्न स्थित क्रूर ग्रह शुभ होता है । वस्तुतः जिस वर्ग कार्य से अन्य को क्षति होती है अथवा जो कर्म उग्र होता है वहाँ प्रश्न लग्न में स्थित क्रूर ग्रह प्रश्न सिद्धि कारक होता है ।

**विवादे शत्रुहनने रणे संकटके तथा ।**

**क्रूरे मूर्तो जयो ज्ञेयः क्रूरदृष्ट्या पराजयः ॥ १२२ ॥**

**दीप्तिः**—इदं सिद्धान्तवाक्यं वर्तते । विवादे कलहे शत्रुहनने शत्रुवधे रणे युद्धे तथा संकटके विपत्तौ मूर्तो लग्ने क्रूरे ग्रहे स्थिते जयो ज्ञेयो वाच्यः क्रूरदृष्ट्या पापग्रहविलोकनेनार्थाद् प्रश्नलग्नं कश्चित्पापो विलोकयति तदा पराजयो भवति । लग्ने क्रूरग्रहाणां स्थितिः कलहविपत्तिवधबन्धनरणादिप्रश्नेषु शोभनं फलं व्यनक्ति । लग्नं क्रूरदृष्ट्या विद्धं कदापि न शुभकरमित्याहुराचार्याः सर्वे ।

**हिन्दी**—कलह [मुकदमा], शत्रुवध, युध तथा संकटादि के प्रश्न में लग्नस्थित क्रूरग्रह विजय देता है और लग्न पर क्रूर ग्रह की दृष्टि पड़ने से पराजय होती है ।

यह श्लोक चुनाव, मुकदमा तथा उग्र कार्यों के परिणाम को बतलाया है। घोर कर्म के फलादेश के समय लग्नस्थ पापग्रह शुभ होता है, परन्तु लग्न पर पाप ग्रह की दृष्टि अशुभ होती है ।

**अपरेष्वपि चौर्यादियोगेष्वेवं विना ग्रहम् ।**

**मूर्तो सर्वत्र वक्तव्यं चौर्यप्रश्ने शुभग्रहे ॥ १२३ ॥**

**मूर्तो सति न चौर्यं स्यात् सफलं केवलं भवेत् ।**

**शरीरे मुख्यकुशलं शुभयोगप्रभावतः ॥ १२४ ॥**

**दीप्तिः**—अपरेषु विवादरणविपत्तिशत्रुहननादिषु कार्येषु मूर्तो क्रूरग्रहो विलोकनीयः । क्रूर एव ग्रहो लग्नस्थो जयदायी भवति न परः सौम्य इति । एवं विना ग्रहं क्रूरं विना इत्यर्थः । मूर्तो लग्ने शुभग्रहे सति चौर्यं सफलं न स्यात् केवलं शरीरे काये मुख्यकुशलं चौरस्य शारीरिकी सुरक्षा एव मुख्यत्वेन कथनीया । शुभयोगप्रभावतो लग्ने शुभग्रहाणां स्थितिदृष्टिभ्यां चौरस्य शारीरिकं कुशलं रक्षणञ्च भवति । चौर्यप्रश्ने मूर्तो क्रूराऽभावेन चौरस्य लाभो न भवति ।

**हिन्दी**—चोरी आदि [विवाद, वध, संकट, युद्धादि] अन्य कर्मों के योगों में यदि लग्न में शुभग्रह न हो तो [शुभ फल नहीं मिलता] ऐसा कहना चाहिए । चोरी के प्रश्न में यदि लग्न में शुभ ग्रह हो तो चोरी में सफलता नहीं प्राप्त होती । शुभग्रहयोग के प्रभाव से चोर का शरीर सकुशल रहता है ।

‘चोर का शरीर रहता है’ वाक्य का तात्पर्यार्थ है—चोरी करते समय चोर पकड़ा नहीं जाता, न तो उसे किसी अन्य माध्यम से ही शरीर पर चोट लगती ।

**रणे चौर्यादिहनने धातुवादादिकर्मसु ।**

**क्रूराक्रूरसमायोगान् मूर्तावेव विचार्यते ॥ १२५ ॥**

**दीप्ति:**—रणे युद्धे, चौर्यादिहनने चौरवधादिकार्येषु, धातुसम्बन्धिकर्मसु मूर्तौ क्रूराक्रूरसमायोगान् शुभाशुभग्रहयोगान् एव विचार्यते । यदि मूर्तौ क्रूरग्रहस्तदा शोभनं फलं यदा शुभग्रहस्तदाऽशुभं फलं भवतीति वक्तव्यम् । पूर्वश्लोकान्न कश्चित् विशेषः प्राप्यतेऽस्मिन् ।

**हिन्दी**—युद्ध, चोरी, शत्रुवध एवं धातुवाद प्रभृति कार्यों में स्थित क्रूरग्रह तथा शुभग्रह के योग से फल का विचार किया जाता है ।

विघटन कारी कार्य, अन्ताराष्ट्रीय गड़बड़ी तस्करी स्वर्णादि धातुओं की हेराफेरी, षड्यन्त्र प्रभृति घोर कर्म में लग्नस्थ क्रूरग्रह सफलता दिलाता है । शुभग्रह के योग से केवल विफलता ही मिलती है ।

**मूर्तौ क्रूरग्रहः श्रेयाञ्छ्रेयसी क्रूरदृङ् न हि ।**

**शुभो न शोभनो मूर्तौ शुभदृष्टिस्तु शोभना ॥ १२६ ॥**

**दीप्ति:**—पूर्वोक्ते विवादवधचौर्यदुर्गभङ्गरणादिकर्मसु मूर्तौ लग्ने वर्तमानः क्रूरग्रहः श्रेयान् भवति । क्रूरदृङ् क्रूरदृष्टिर्लग्ने न श्रेयसी हि निश्चयेन शुभो न शोभनो मूर्तौ लग्ने शुभग्रहः शुभफलदायको न भवति, परं शुभग्रहस्य लग्ने शुभदृष्टिः शोभना भवति ।

**हिन्दी**—लग्न में बैठा क्रूर ग्रह श्रेयस्कर होता है पर क्रूर ग्रह की दृष्टि शुभ नहीं होती । लग्न में स्थित शुभग्रह शुभ नहीं होता पर उसकी (लग्नपर) दृष्टि शुभ होती है ।

चौर्यासिस्थानद्वार में कई एक श्लोकों द्वारा लग्न और क्रूर तथा शुभ ग्रह के योग को दर्शाया गया है । उसी क्रम में निष्कर्षरूप यह श्लोक है । यदि लग्न में क्रूर ग्रह बैठा हो अथवा लग्न पर शुभग्रह की दृष्टि पड़ रही हो तो शुभ होता है,



परन्तु लग्न में शुभग्रह बैठा हो तो या लग्न पर क्रूरदृष्टि पड़ रही हो तो अशुभ फल मिलता है ।

### चोरी से सम्बन्धित प्रश्न का विचार—

यदि लग्नेश या सप्तमेश त्रिक [ ६, ८, १२ ] या सहज (३ रे) स्थान में बैठा हो तो प्रश्नकर्ता चोरी से सम्बन्धित प्रश्न पूछता है ।

### चोर विचार—

(१) प्रश्न में स्थिर लग्न [वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ] हो अथवा स्थिर राशि का नवमांश हो अथवा वर्गोत्तम नवमांश [चर का प्रथम, स्थिर का पञ्चम द्विस्वभाव का नवम अंश वर्गोत्तम कहलाता है] हो तो चोरी करने वाला अपना ही आदमी होता है और धन भी घर में ही रहता है—

स्थिरोदये स्थिरांशे वा वर्गोत्तमगतेऽपि वा ।

स्थितं तत्रैव तद्द्रव्यं स्वकीयेनैव चोरितम् ॥

(षट्पञ्चाशिका नष्टधनाध्याय श्लो. १)

(२) यदि प्रश्न लग्न पर सूर्य और चन्द्रमा दोनों के एक साथ दृष्टि पड़ती हो तो घर का व्यक्ति चोर होता है । इन दोनों में से किसी एक ग्रह की ही दृष्टि पड़ती हो तो चोर पड़ोसी होता है—

चौरज्ञानप्रश्ने लग्नरविशशिदृशा स्वगृहचौरः ।

अनयोरेकदृशा गृहसमीपवर्ती वसत्येषः ॥

(ता.नी. प्रश्नतन्त्रे चोरितधनपृच्छाविचार श्लो. १८)

(३) यदि प्रश्न लग्न चर राशि का हो तो चोर बाहर का व्यक्ति होता है ।

(४) यदि प्रश्न लग्न में द्विस्वभाव राशि हो तो चोर गृह समीपस्थ व्यक्ति (पड़ोसी) होता है ।

### कौन व्यक्ति चोर है ?

चोरी किसने की है ? इस प्रश्न के निराकरण के लिये प्रश्न शास्त्र में अनेक योगों का प्रतिपादन किया गया है, जिससे व्यक्ति के रूप में चोर की पहचान की जा सके ।

(१) यदि प्रश्न लग्न में लग्नेश और सप्तमेश एक साथ बैठे हों तो चोर घर का ही व्यक्ति होता है । यदि सप्तमेश बारहवें या तीसरे स्थान में बैठा हो तो चोर घर का नौकर होता है—

लग्नस्थे लग्नपतावस्तपयुक्ते च गृहगतश्चौरः ।

अस्ताधिपतावन्त्ये सहजे वा स्वीयभृत्योऽयम् ॥

(ता.नी. प्रश्नतन्त्रे चोरितधनपृच्छाविचार श्लो. ९९)

(२) सप्तमेश स्वगृही या स्वोच्च का हो तो चोर विख्यात (नामजद या मशहूर) होता है—

अस्तेशे तुङ्गस्थे स्वगृहे वा तस्करः प्रसिद्धः स्यात् ।

(ता.नी. प्रश्नतन्त्रे चोरितधनपृच्छाविचार श्लो. ९८)

(३) यदि प्रश्न लग्न में नीच का सूर्य स्थित हो तो चोर गृहस्वामी का पिता होता है । एवमेव चन्द्रमा नीच का हो तो गृहस्वामी की माता, शुक्र नीच का हो तो स्त्री, शनि नीच का हो तो लड़का बृहस्पति नीच का हो तो घर का मालिक ही चोर होता है । मंगल यदि नीच का हो तो भाई का लड़का बुध नीच का हो तो मित्र या सम्बन्धी ही चोर होता है—

इत्थं चौरज्ञाने चौरः सूर्ये, गृहेश्वरस्य पिता ।

चन्द्रे माता, शुक्रे भार्या, मन्दे सुतो भवेन्नीचे ॥

जीवे गृहप्रधानं भौमे पुत्रोऽथ वा भ्राता ।

ज्ञे स्वजनो मित्रं वा ..... ॥

(ता.नी. प्रश्नतन्त्रे चोरितधनपृच्छाविचार श्लो. १०१, १०२)

**चोर पुराना है अथवा नया—**

(१) यदि सप्तमेश क्रूर ग्रह से दृष्ट हो तो चोर पुराना यानी पहले से ही चोरी करने वाला होता है । यदि सप्तमेश पापदृष्ट नहीं है तो चोर नव सीख होता है ।

(२) यदि सप्तमेश शनि हो और चन्द्रमा से दृष्ट हो तो चोर पाखण्डी होता है ।

### चोर की आयु का विचार—

श्लोक ४१ में ग्रहों की आयु का विचार किया गया है । यदि सप्तमेश शुक्र हो तो चोर युवा, बुध हो तो बालक, गुरु हो तो मध्यमायु (अधेड़), मंगल हो तो वरुण (सद्यः युवावस्था प्राप्त), शनि हो तो वृद्ध और सूर्य हो तो अतिवृद्ध होता है—

चौरस्य वयो ज्ञाने सिते युवा, ज्ञे शिशु गुरौ मध्यः ।

तरुणो भौमे, मन्दे वृद्धोऽर्के स्यदतिस्थविरः ॥

(ता.नी. प्रश्नतन्त्रे चोरितधनपृच्छाविचार श्लो. १०६)

प्रश्न लग्न से यदि सूर्य १०वें या १२वें स्थान में बैठा हो तो चोर कम आयु का होता है । इसी प्रकार यदि सूर्य सिंह राशि का हो तो चोर मध्यमायु, सप्तमस्थ हो तो वृद्ध और चतुर्थस्थ हो तो अतिवृद्ध होता है—

रविनभयोः स्वमन्दिरे स्मरभूमिलग्नयोर्मध्यम् ।

चरति रवौ नवमध्यमवृद्धवयोऽतीतकाः क्रमशः ॥

(ता.नी. प्रश्नतन्त्रे चोरितधनपृच्छाविचार श्लो. १०७)

### चोर की जाति का ज्ञान—

प्रश्न लग्न का अधिपति ग्रह जिस जाति का होता है चोर को भी उसी जाति का समझना चाहिए । यदि लग्नेश बृहस्पति और शुक्र ग्रह हों तो चोर ब्राह्मण, सूर्य और मंगल हों तो क्षत्रिय, चन्द्रमा हो तो वैश्य, बुध हो तो शूद्र तथा शनि या राहु हों तो चाण्डाल होता है ।

### चोर के स्त्री या पुरुष होने की पहचान—

यदि प्रश्न कुण्डली में सप्तमेश स्त्री राशि [सम राशि अर्थात् २, ४, ६, ८, १०, १२] में स्थित हो अथवा वह स्त्री ग्रह हो अथवा स्त्री ग्रह से दृष्ट हो तो स्त्री चोर होती है—

चौरः स्त्री पुरुषो वा पृच्छायामस्तपे स्त्रियो राशौ ।

स्त्री-खेटे स्त्रीदृष्टे चौरः स्त्री व्यत्ययात्पुरुषः ॥

(ता.नी. प्रश्नतन्त्रे चोरितधनपृच्छाविचार श्लो. ११३)

इससे विपरीत स्थिति में चोर पुरुष होता है ।

**यह व्यक्ति चोर है या नहीं—**

यदि किसी व्यक्ति पर चोरी करने का संदेह हो तो इसके निराकरण हेतु अधोलिखित योग उपयोगी होता है—

यदि चन्द्रमा पाप ग्रह से इत्थशाल करता हो तो सन्दिग्ध व्यक्ति अवश्य ही चोर होता है । शुभ ग्रह से इत्थशाल होने पर सन्दिग्ध व्यक्ति चोर नहीं होता—

चौरोऽयमथ न वेति क्रूरेन्द्रोर्मुथशिले च चोरः स्यात् ।

सौम्यशशिमुथशिले खलु न भवति चौरं प्रवक्तव्यम् ॥

(ता.नी. प्रश्नतन्त्रे चोरितधनपृच्छाविचार श्लो. १११)

**चोरी गई वस्तु का स्थान निर्देश—**

यदि लग्न पर राशि का हो तो चोरितधन घर के बाहर, स्थिर हो तो घर में ही, द्विस्वभाव हो तो घर के बगल में होता है ।

यदि प्रश्न लग्न प्रथम द्रेष्काण का हो तो चोरित धन घर के आस-पास होता है । एवमेव द्वितीय द्रेष्काण हो तो घर में ही तथा तृतीय द्रेष्काण हो तो गृह के पश्चिम (पिछला भाग) में चोरी गई वस्तु को समझना चाहिए ।

चतुर्थस्थान का अधिपति जो ग्रह हो उसके द्वारा भी नष्टवस्तु की स्थिति का ज्ञान किया जाता है । जैसे शनि चतुर्थेश हो तो मलिन स्थान, चन्द्र हो तो जल, गुरु हो तो देवालय, मंगल हो तो अग्निस्थान, सूर्य हो तो गृहपति के आसन के पास, शुक्र हो तो विस्तर, बुध हो तो पुस्तक, धन, अन्न या सवारी में नष्ट (चोरित) धन स्थित होता है ।

(ता.नी. प्रश्नतन्त्रे चोरितधनपृच्छाविचार श्लो. १०९, ११०)

**चोर के पकड़े जाने का योग—**

(१) यदि द्वितीयेश अस्त हो तो चोर पकड़ा जाता है—

‘रविरश्मिगे धनेशे वाऽस्तमिते तस्करस्य लाभः स्यात् ।’

(२) लग्नेश और दशमेश का इत्थशाल हो तो चोर धन के साथ ही पकड़ा जाता है ।

(३) यदि सप्तमेश अस्त हो तो चोर पकड़ा लिया जाता है ।

(४) यदि लग्नेश और सप्तमेश इत्थशाल करता हो तो चोर राजभय के कारण धन लौटा देता है ।

### चोरी गई वस्तु के मिलने का योग—

यदि प्रश्न लग्न में पूर्ण चन्द्रमा स्थित हो, अथवा शीर्षोदय राशि हो और शुभग्रह से दृष्ट हो अथवा लाभस्थान ( ग्यारहवाँ भाव) में शुभग्रह स्थित हो तो नष्ट धन शीघ्र ही मिलता है—

पूर्णः शशी लग्नगतः शुभो वा  
शीर्षोदये सौम्यनिरीक्षितश्च ।

नष्टस्य लाभं कुरुते तदाशु  
लाभोपयातो बलवाञ्छुभश्च ॥

(षट्पञ्चाशिका नष्टधनाध्याये श्लो. ४२)

इति चौर्यादिस्थानद्वारम् ।

अथ क्रयाणकार्घद्वारम् ॥ २९ ॥

क्रेता लग्नपतिर्ज्ञेयो विक्रेतायपतिः स्मृतः ।

गृह्णाम्यहमिदं वस्तु सति प्रश्ने अमूदृशे ॥ १२७ ॥

दीप्तिः—लग्नपतिर्लग्नेशः क्रेता ज्ञेयः । लग्नेशो ग्राहको भवतीति भावः । विक्रेता प्रयच्छक आयपति एकदशेशः स्मृतः । अहमिदं वस्तु गृह्णामि, अमूदृशे प्रश्ने सति पूर्वोक्तं सुविचार्य फलं कथनीयम् ।

अहमेकं वस्तु गृह्णामि । अस्मिन् लाभो भविष्यति न वेति । लाभप्रदमिदं वस्तु वर्तते न वा प्रश्ने लग्नेशायेशाभ्यां विचारः कर्त्तव्य इति ।

हिन्दी—‘मैं अमुक वस्तु को खरीद रहा हूँ मुझे लाभ रहेगा या नहीं ?’ ऐसे प्रश्न में लग्नेश क्रेता (खरीदने वाला) तथा विक्रेता लाभेश (एकादशेश) कहा गया है ।

कोई भी क्रेता किसी वस्तु को तभी खरीदता है जब उसे उस वस्तु से लाभ होने की आशा होती है । अतः ‘मैं इस वस्तु को खरीदूँ या नहीं ?’ ऐसे

प्रश्न में लग्नेश तथा लाभेश का विचार किया जाता है । लग्नेश क्रेता का तथा आयेश विक्रेता का प्रतिनिधि होता है ।

**बलशालि विलग्नं चेत् गृह्यते यत्क्रयाणकम् ।**

**तस्मात् क्रयाणकाल्लाभः प्रष्टुर्भवति निश्चितम् ॥ १२८ ॥**

**दीप्तिः**—चेद् विलग्नं प्रश्नलग्नं बलशालि तदा यत्क्रयाणकं वस्तु गृह्यते तस्मात् क्रयाणकाल्लाभो भवति । यदा प्रष्टुः प्रश्नकाले लग्नं बलयुक्तं स्याद् निश्चयेन क्रीतवस्तुद्वारा लाभो भविष्यतीति वाच्यः ।

अत्र विशेषोऽवधेयो—लग्नेशो मित्रगृही वर्गोत्तमस्थः शुभैर्दृष्टो वा बलवान् भवति । यावन्तो विंशोपका लग्नं पश्यन्ति तावन्तो लाभा इति ।

**हिन्दी**—यदि लग्न बलवान् हो तो खरीदी गई वस्तु से प्रष्टा को निश्चय ही लाभ होता है ।

लग्न को जितने विंशोपक बल प्राप्त होते हों उतने ही अनुपात में लाभ भी समझना चाहिए । लग्नेश यदि उदित हो तो अथवा मित्रगृही हो या वर्गोत्तम में स्थित हो तो बलवान् होता है ।

यह 'क्रेतालाभ' का योग कहलाता है ।

**विक्रीणाम्यमुकं वस्तु प्रश्नेष्येवं विधे सति ।**

**आयस्थाने बलवति विक्रेतव्यं क्रयाणकम् ॥ १२९ ॥**

**दीप्तिः**—'अहममुकं वस्तु विक्रीणामि' लाभो भविष्यति न वेति निहितोऽर्थोऽत्र तदा एवंविधे प्रश्ने सति आयस्थाने बलवति लाभस्थाने पुष्टे क्रयाणकमवश्यमेव विक्रेतव्यम् ।

**हिन्दी**—'मैं अमुक वस्तु का विक्रय करने जा रहा हूँ लाभ होगा या नहीं?' ऐसे प्रश्न में यदि आयस्थान बलवान् हो तो क्रयाणक का विक्रय करने से अवश्य लाभ होगा ऐसा कहना चाहिए ।

**स्वक्षेत्रे तु बलं पूर्णं पादोनं मित्रभे ग्रहे ।**

**अर्धं समगृहे ज्ञेयं पादं शत्रुगृहे स्थिते ॥ १३० ॥**

**दीप्तिः**—यदा ग्रहः स्वक्षेत्रे स्वगृहे स्थितो भवति तदा तस्य पूर्णं बलं वाच्यम् । एवमेव मित्रभे ग्रहे मित्रराशि स्थिते ग्रहे पादोनं (पञ्चदशविंशोपकान्)

पञ्चसप्ततिभागमाहुराचार्याः । समग्रहे समराशौ स्थिते ग्रहेऽर्द्धं बलं भवतीति ज्ञेयं वाच्यम् । शत्रुग्रहे स्थिते ग्रहे पादं बलं भवतीति भावः । अस्यैव ग्रन्थस्य ६३, ६४, ६५, ६६ श्लोकेषु 'कथयन्ति पादयोगं', 'एकः शुभग्रहो यदि पश्यति', 'लग्नपतिदर्शने सति', तथा च 'ऋरावेक्षणवर्जाश्चत्वारः' प्रभृतिषु पादयोगार्द्धयोगपादोनयोगत्रिभागोनयोगपूर्णयोगाश्च वर्णितास्सन्ति ।

**हिन्दी**—स्वगृही ग्रह पूर्ण बली होता है । मित्रग्रह की राशि में स्थित ग्रह पादोन अर्थात् I (७५ प्रतिशत या १५ विशोपक) बल से युक्त. समराशि में स्थित ग्रह अर्द्ध बली और शत्रुग्रह की राशि में स्थित ग्रह एकपाद (१/२ या ५ विंशोपक या २५ प्रतिशत) बली होता है ।

पूर्व के ६३, ६४, ६५ तथा ६६ श्लोकों में भी इन ग्रहयोगों की चर्चा हुई है, परन्तु यहाँ पर ..... भेद के साथ इनका उपस्थापन किया गया है । पूर्वोक्त योग ग्रह .....पर आश्रित हैं, जबकि ऋयाणकार्ध योग में ग्रह स्थिति के आधार पर इन योगों का प्रतिपादन किया गया है ।

**समर्ध वा महर्ध वा वस्तु मे कथयामुकम् ।**

**पृच्छायां येन खटेन शुभत्वं प्रतिपाद्यते ॥ १३१ ॥**

**खेटोसौ यावतो मासान् याति लग्नस्य सौम्यताम् ।**

**विधत्ते तावतो मासान् समर्धं ब्रुवते बुधाः ॥ १३२ ॥**

**दीप्ति** :—मे मम अमुकवस्तु समर्ध वा महर्ध वा भविष्यतीति कथय, अस्यां पृच्छायामस्मिन् प्रश्ने येन खटेन ग्रहेण लग्नस्य प्रश्नोदितस्य राशेः शुभत्वं शुभग्रहदृष्ट्या शोभनफलत्वं जायते तेनैव खटेन समर्धविचारो विधीयते । यदि स शुभग्रहो लग्ने चिरकालं यावत् तिष्ठति तदातस्य स्थितिकालपर्यन्तं समर्धता भवत्येव । अतोऽत्र सिद्धान्तवाक्यं प्रतिपादयत्याचार्यः—असौ शुभखेटः यावतो मासान् सावनमाससङ्ख्यकान् लग्नस्य सौम्यतां शुभत्वं विधत्ते तावतो मासान् पर्यन्तं बुधा विज्ञगणकाः समर्धं ऋयाणकस्यावमूल्यनं ब्रुवते कथयन्ति । यदा ग्रहो लग्नस्य बलवर्द्धनं निजेन सौम्यदृष्ट्या न विदधाति तदा महर्ध भवति इदमेव मतं प्रश्नभूषणकारेणापि स्वीकृतं, तद्यथा—

ग्रहोऽसौ यावतो मासान् विधत्तेऽङ्गस्य सौम्यताम् ।

समर्घं तावतो मासानन्यथा व्यत्ययं वदेत् ॥

ताजिकनीलकण्ठ्यामेकमपरं योगं समर्घताया वर्णयति नीलकण्ठः—

लग्ने बलाढ्ये निजनाथसौम्यैर्युक्तेक्षिते केन्द्रगतैः शुभैश्च ।

सर्वैः समर्घं विबलैर्विलग्ने केन्द्रेषु पापैः सकलं समर्घम् ॥ इति

श्लोकस्योपरिभागे तदेव वर्णितं यद् दीपककारेणोक्तं परमुत्तरे  
भागेऽन्ययोगो वर्णितः—केन्द्रेषु लग्ने वा पापैर्विबलैर्वाऽपि समर्घं वाच्यमिति भावः ।

**हिन्दी**—यदि कोई प्रश्न करे कि—‘मेरी अमुक वस्तु सस्ती होगी या महँगी’ तो इसके उत्तर के लिये जिस ग्रह से लग्न को (दृष्टि से) शुभत्व प्राप्त हो उसका विचार करना चाहिए । वह (जिससे लग्न दृष्ट या युक्त है) शुभग्रह जितने महीने तक लग्न को शुभत्व प्रदान करता है उतने महीने पर्यन्त वह वस्तु सस्ती रहती है ।

इस सन्दर्भ में प्रश्नभूषण, नीलकण्ठी प्रभृति ग्रन्थों का प्रश्नभूषण, नीलकण्ठी प्रभृति ग्रन्थों का भी यही मत है ।

प्रश्नलग्न की सबलता वस्तु की समर्घता (सस्ती) का कारण होती है । अतः यदि लग्न शुभग्रह से दृष्ट या युक्त हो तो प्रश्नलग्न से सम्बन्धित वस्तु का भाव तब तक सस्ता रहता है जब तक यह शुभबल नष्ट नहीं हो जाता ।

**अथासावशुभश्चिन्त्यः कियद्भिर्वासरैरयम् ।**

**सौम्यभावं विलग्नस्य विधास्यति विनिश्चितम् ॥ १३३ ॥**

**ज्ञातव्या दिवसैर्मासा मासैस्तावद्भिरस्य हि ।**

**समर्घता वस्तुनो हि प्रतिपाद्या विचक्षणैः ॥ १३४ ॥**

**दीप्तिः**—अथशब्दः प्रकारान्तरस्य वाचको विद्यते । पूर्वस्मिन् श्लोके सौम्यग्रहद्वारा समर्घतायाः निर्देशः कृतः । इदानीं लग्नोपरि क्रूरग्रहप्रभाववशेन महर्घतां निर्देशयति । पापग्रहाणां लग्नोपरि प्रभावेन वस्तुनो महर्घता जायते । अतः असौ अशुभः क्रूरश्चिन्त्यो विचारणीयो भवति यदयं क्रूरग्रहः कियद्भिर्वासरैर्दिवसैर्विलग्नस्य सौम्यभावं शुभभावं विधास्यति करिष्यति । अत्रावधेयो यद् असौ क्रूरः कियद्भिर्दिनैर्लग्नं मोचयिष्यति । यदा उदितः (लग्नं)



क्रूरप्रभावेण मुक्तो भविष्यति तदा तस्य शुभत्वं स्वयमेव उत्पत्स्यते । इदं सर्वं विनिश्चित्य वक्तव्यं यद् एभिर्दिवसैः अस्य वस्तुनः समर्घता भविष्यतीति । एभिर्दिवसैर्मासा ज्ञातव्याः । दिवसैर्मासज्ञानाय त्रिंशद्भिर्भागः प्रदेयः । यावद्भिर्मासैः लग्नं सौम्यत्वं प्राप्स्यति तावद्भिर्मासैः अस्य वस्तुनो हि निश्चयेन विचक्षणैर्विज्ञैः समर्घता प्रतिपाद्या कथनीया ।

**हिन्दी**—पूर्व के श्लोकों में लग्न और शुभग्रह के योग से वस्तु की समर्घता (मन्दी) का विचार किया गया है । अब अशुभग्रह की चिन्तता करनी चाहिए कि यह कितने दिनों में लग्न को सौम्यभाव प्रदान करेगा अर्थात् कितने दिनों में अशुभ ग्रह का लग्न से दृष्टिगत या युतिगत सम्बन्ध टूटेगा ? इस प्रकार से आनीत दिन संख्या को मास में परिवर्तन कर वस्तु की समर्घता का प्रतिपादन विद्वान् गणक को करना चाहिए ।

इस श्लोक में व्यतिरेकमुख से अर्थ का कथन किया गया है । शुभग्रह लग्न को जब तक प्रभावित रखता है तब तक वस्तु सस्ती रहती है । 'क्रूर ग्रह के द्वारा लग्न प्रभावित होने पर वस्तु महंगी होती है । अतः वस्तु की महर्घता में क्रूर ग्रहा का विचार आवश्यक होता है । यह क्रूर ग्रह जितने दिनों में लग्न को अपने प्रभाव से मुक्त करता है उतने दिनों के बाद वस्तु सस्ती होती है । दिन को मास में बदल कर वस्तु की समर्घता की सूचना 'मासिक' रूप में दी जा सकती है, अर्थात् क्रूर ग्रह के लग्न से हटने में लगने वाले दिन को मास में बदल कर फलादेश करना चाहिए ।

**अधिष्ठातुर्बलं ज्ञेयं लग्ने स्वामिविवर्जिते ।**

**बलहीने त्वधिष्ठातुः प्राहुः स्वामिबले बलम् ॥ १३५ ॥**

**दीप्तिः**—यदि लग्नेशोः निर्बलः स्यात् तदा वस्तुन अधिष्ठातुर्बलं ज्ञेयम् । इत्थं यदि वस्तुत अधिष्ठाताग्रहो बलहीनः स्यात्तदा लग्नेशबलं विचार्यमिति । इदमेवात्र वर्णयता कथयति—स्वामिविवर्जिते लग्ने लग्नेशदृष्टियुतिभ्यां हीने लग्ने वस्तुनो यस्य समर्घताया महर्घताया वा विचारः प्रवर्तते तस्याधिष्ठातुः बलं ज्ञेयम् । यस्य वस्तुनो योऽधिष्ठाताधिदेवता भवति तस्य सम्पूर्णं बलं विचारणीयमिति भावः । एवमेव तु अधिष्ठातुः स्वामिनो बलहीने सति स्वामिबले

लग्नेशबले बलं प्राहुदैवज्ञाः । स्पष्टार्थो यदा वस्तुन अधिष्ठाता ग्रहो बलहीनो भवति तदा लग्नेशस्य बलं विचार्यम् ।

केषां वस्तूनां कः स्वामीति निर्णेतुं ग्रन्थान्तरात् प्रस्तूयते—

रसानां तु प्रभुः सोमः सस्यानां च बृहस्पतिः ।

आधाता च विधाता च भूतानां भार्गवः स्मृतः ॥

कङ्गुकोद्रवमाषाणां तिलानां लवणस्य च ।

सर्वेषां कृष्णवस्तूनां प्रभुरेव शनैश्चरः ॥

स्वर्णादिः पीतधान्यस्य यवगोधूमसर्पिषाम् ।

शालीक्षूमां च सर्वेषां प्रभुरेषां बृहस्पतिः ॥

शुक्रस्तु सर्वसस्यानां द्विदलानां बुधः स्मृतः ।

स्नेहानां च रसानां च गन्धादिनां दिवाकरः ॥

कोशधान्यस्य सर्वस्य चवलानां च मङ्गलः ।

इत्येवं ते ग्रहाः सर्वे स्वामिनः सर्ववस्तुषु ॥

एवमेवान्यत्रापि ग्रहद्वारा वस्तुनो विचारो लभ्यते ।

**हिन्दी**—लग्नेश के वर्जित (बलहीन) होने पर वस्तु के अधिष्ठाता ग्रह का बल विचारना चाहिए । वस्तु के अधिष्ठाता ग्रह के निर्बल होने पर लग्न के स्वामी का बल विचारना चाहिए ।

पृथक् पृथक् वस्तुओं के अधिष्ठाता देवता ग्रह पृथक् पृथक् होते हैं । अतः यदि किसी वस्तु की समर्थता और महर्घता का विचार करना हो तो लग्नेश और वस्तु प्रतिनिधि ग्रह का विचार करना आवश्यक होता है । यदि लग्नेश निर्बल हो तो वस्तु के देवताग्रह से विचार करना चाहिए । इसी प्रकार यदि वस्तु का अधिष्ठाता ग्रह कमजोर हो तो लग्नेश का विचार करना चाहिए । सौकर्य के लिए ग्रह और उनकी वस्तुओं का संकेत दिया जा रहा है—

**सूर्य**—गन्ध, रस, तैल ।

**चन्द्र**—सभी प्रकार के रस ।

**मंगल**—चावल, कोश, धान्य, प्रवाल (मूँगा) ।

**बुध**—दाल (द्विदल) ।

**गुरु**—स्वर्ण, पीलाधान्य, यव, गोधूम (गेहूँ), सरसों, शाली (चावल), ईख ।  
**शुक्र**—सभी प्रकार के सस्य तथा प्राणी (गाय, घोड़ा, हाथी प्रभृति) ।  
**शनि**—सभी प्रकार की काली वस्तुयें, कङ्गु (कांगनी) कोद्रव (कोदों) उड़द, तिल, तथा नमक ।

**ऋयाणकानां पृच्छायां सौम्या ज्ञेया महात्मभिः ।**

**समर्घ सबले लग्ने महर्घमबले पुनः ॥ १३६ ॥**

**दीप्तिः**—ऋयाणकानां पृच्छायां ऋयाणकसम्बन्धितयस्तूनां प्रश्ने महात्मभिः सौम्याः शुभग्रहा ज्ञेया विचारणीया भवन्ति । लग्ने प्रश्नलग्ने सबले सौम्यग्रहे स्थिते सति ऋयाणकानां समर्घ समर्घता ज्ञेया एवमेवाऽबले बलहीने ग्रहे स्थिते सति महर्घ महर्घता कथनीया । सौम्यग्रहाः यदि सबला स्युस्तदा वस्तुनः समर्घता वस्तुनः समर्घता भवति परं त एव पुनः निर्बला वस्तुनो महर्घतां सूचयन्ति । अन्येषु प्रश्नग्रन्थेषु एकादशेशेन तथा चास्य नवामांशेशेन समर्घमहर्घयोर्विचारो भवति, तद्यथा—

लाभलाभांशपौ प्रश्ने सबलौ चेन्महर्घता ।

तावेवं बलहीनौ चेत्समर्घ जायते तदा ॥ प्र० भू० १५ अ० श्लो० ११

**हिन्दी**—ऋय-विक्रय से सम्बन्धित प्रश्न में यदि लग्न बलवान् हो तो वस्तु सस्ती होती है पर लग्न निर्बल हो तो वस्तु महंगी होती है, ऐसा महात्मजनों (गणकों) ने कहा है ।

यहाँ लग्न की प्रधानता दर्शायी गयी है, परन्तु सिद्धान्त पूर्वोक्त ही है । लग्न क्रेता होता है । यदि यह सबल होगा तो क्रेता को लाभ होगा । क्रेता को तभी लाभ सम्भव है जब विक्रेता उसे सस्ती दर में दे । अतः सौम्य ग्रह के प्रभा से लग्न सबल हो तो वस्तु सस्ती मिलती है । विपरीत परिस्थिति में वस्तु महर्घ होती है ।

**सौम्यदृष्टं स्वामिदृष्टं सौम्यकेन्द्रे युतं शुभैः ।**

**सबलं ब्रुवते लग्नमबलं त्वन्यथा बुधाः ॥ १३७ ॥**

**दीप्तिः**—सौम्यदृष्टं शुभग्रहैर्दृष्टं, स्वामिदृष्टं लग्नादिस्वामिनाऽवलोकितं, सौम्यकेन्द्रे चतुष्टये शुभग्रहस्थिते, शुभैर्युतं शुभग्रहैर्युक्तं वा लग्नमुदितं सबलं

बलयुक्तं बुधा बुवते कथयन्ति, अन्यथा तु तद्विकल्पे सति अबलं बलहीनं लग्नमिति कथयन्ति । अत्र 'सौम्यदृष्टं, स्वामिदृष्टं, सौम्यकेन्द्र, शुभैर्युतञ्च प्रत्येकं पदं लग्नस्य सबलत्वे स्वतन्त्रं कारणं विद्यते । अतः सर्वाणि पदानि स्वतन्त्ररूपेणात्र वर्णितानि सन्ति । केवलं सौम्येर्दृष्टं लग्नं सबलं भवति, अथवा लग्नेशद्वाराऽवलोकितं लग्नं बलयुक्तं भवति किमपि केन्द्रे सौम्यग्रहस्थितिवसादपि लग्नं बलयुतं भवति ।

हिन्दी—शुभ ग्रहों से दृष्ट, अपने स्वामी से दृष्ट, केन्द्र में शुभग्रहों के होने से तथा शुभग्रहों से युक्त होने पर विज्ञ गणकों ने लग्न को सबल अन्यथा (लग्न को) अबल कहा है ।

इस प्रकार से यहाँ लग्न के सबल होने के चार प्रकार वर्णित हैं—

- (१) यदि लग्न शुभग्रह से दृष्ट हो ।
- (२) यदि लग्न लग्नेश से दृष्ट हो ।
- (३) केन्द्र (१, ४, ७, १०) में शुभग्रह स्थित हों अथवा
- (४) लग्न में शुभग्रह स्थित हों ।

इन परिस्थितियों के बिना लग्न अबल कहलाता है ।

इति क्रयाणकार्धद्वारम्

अथ नौमृतिबन्धनद्वारम् ॥ ३० ॥

मृत्युर्धरणकं नौश्च फलेन सदृशं त्रयम् ।

म्रियते येन योगेन तेन योगेन मुच्यते ॥ १३८ ॥

दीप्तिः—षड्विंशद्वारे मृत्युयोगस्य वर्णनमाचार्येण कृतं, तद्यथा— 'स्मरे व्यये धने क्रूरे लग्नमृत्यौ रिपौ शशी ।

सद्यो मृत्युकरो योगः क्रूरे वा चन्द्रपार्श्वगे ॥ इति

अत्राशयो यस्मिन् योगे मृत्युर्भवति तस्मिन् योगे धरणकं मुक्तं भविष्यति तथा नावागमनप्रश्नेऽपि सकुशलमागमनं भविष्यति, परं रोगिणं कुशलप्रश्ने तु मरणमेव वाच्यम् । मृत्युधरणकनावः फलेन सदृशं सामान्यफलयुतं भवन्ति । अत्र विशिष्टां स्थिति सूचयति—येन योगेन म्रियते तनैव बद्धो मुच्यते । बद्धस्य

(धरणकस्य) मोक्षणप्रश्ने यदि प्रश्नकुण्डलयां मृत्युयोगो भवति तदाऽवश्यमेव तस्य बद्धस्य मोक्षो भवति । एवमेवाग्रे नावो रोगिणश्च स्थिति वर्णयति ।

**हिन्दी**—मृत्यु, बन्धन तथा नौका इन तीनों का फल एक समान होता है । जिस योग से मृत्यु होती है उसी योग से बद्ध व्यक्ति की मुक्ति होती है ।

छब्बीसवें द्वार में मृत्युयोग का उल्लेख किया जा चुका है । यदि योग बन्धन से मुक्ति मिलने के सन्दर्भ में किये गये प्रश्न में मिलता है तो बद्ध व्यक्ति की तत्काल रिहाई होती है ।

**क्षेमेण नौः समायाति मृत्युयोगे समागते ।**

**आमयावी स म्रियते बद्धः शीघ्रेण मुच्यते ॥ १३९ ॥**

**दीप्तिः**—पूर्वोक्तं तथ्यं विस्तीणङ्करोति—मृत्युयोगे समागते सति नौनौका क्षेमेण कुशलेन समायाति । बद्धोः जनः शीघ्रेण जवेन मुच्यते बन्धनरहितो भवति । स आमयावी रुग्णो यस्य प्रश्नकुण्डली भवति मृत्युयोगे म्रियते देहान्तरं व्रजति योगे रोगिणः कल्याणं कथमपि न वाच्यं यतस्तस्य शरीरात् निवृत्तिर्भवति । नौमृतिबन्धनद्वारे त्रयाणां फलसाम्ये निवृत्तिरेव सामान्यतत्त्वम् । यतो नौकाऽऽगमने यात्राया निवृत्तिः, बन्धनयोगे कारागारतो निवृत्तिः, रोगिणः प्रश्ने रुजापीडितशरीरान् निवृत्तिः । अतोऽत्र निवृत्तेः साम्यं दृष्ट्वैव मृत्युप्रश्ने प्रतीपं फलं प्रतिपादितमाचार्येण ।

**हिन्दी**—प्रश्नकाल में यदि मृत्युयोग हो तो नौका सकुशल वापस आती है, रोगी मर जाता है तथा बद्ध व्यक्ति मुक्त होता है ।

सप्तम, द्वादश, द्वितीय, लग्न अष्टम तथा षष्ठ स्थान में यदि चन्द्रमा बैठा हो तो मृत्युयोग होता है अथवा चन्द्रमा के पार्श्व में क्रूरग्रह हों तो भी मृत्युयोग होता है ।

भुवनदीपक का प्रभाव परवर्ती प्रश्नग्रन्थों पर स्पष्टरूप से झलकता है । ताजिकनीलकण्ठी में भी यही बात प्रकारान्तर से कही गई है—

‘बद्धोऽस्ति तत्किं भवितेति प्रश्ने

विमुच्यतेऽसौ खलु मृत्युयोगे’ ।

‘कुशलाऽऽयाति पृच्छायां मृत्युयोगे समागते ।

तदा नौरिति शीघ्रेण लाभाद्यं चान्ययोगतः ॥’

क्षेमायातं वहित्रस्य बुडनं प्लवनं जले ।

पण्यव्यवहृतौ लब्धिर्नाविप्रश्नचतुष्टयम् ॥ १४० ॥

दीप्तिः—वहित्रस्य नावः प्रवहणस्य वा क्षेमायातं कुशलपूर्वकमागमनं, बुडनं जले तिरोधानं प्लवनं सन्तरणं पण्यव्यवहृतौ प्रवहणागतक्रयाणकानां व्यवहारे लब्धिर्लाभो नाविप्रश्नचतुष्टयं नौसम्बन्धितत्वारो प्रश्ना अत्र जायन्ते । यदि कश्चिज्जनो नौकां प्रति पृच्छति तदा तस्य प्रश्नस्य तदा तस्य प्रश्नस्य चत्वार एव भेदा भविष्यन्ति—तत्र प्रथमः—नावः कल्याणं विद्यते न वेति ? द्वितीयः किं नौकाया जले निमज्जनं जातम् ? तृतीयः—नावः प्लवनं वायुवेगात् चक्रवातेन वा यदा-कदा समुद्रे प्रभावितं भवत्येव । अतः किमसौ रक्षिता विद्यते न वेति । चतुर्थः—नौकयाऽऽनीतं वस्तु लाभदायकं भविष्यति न वा ।

हिन्दी—नौका से सम्बन्धित चार प्रश्न होते हैं । १. नौका का सकुशल आगमन २. जल में डूबना ३. भटकते या तैरते रहना तथा ४ नौका द्वारा आई वस्तु के द्वारा लाभ का होना ये ही चार प्रश्न नौका से सम्बन्धित होते हैं ।

क्षेमागमनपृच्छायां मृत्युयोगोऽस्ति चेत्तदा ।

क्षेमेणायाति नौः पण्यलाभो व्यवहृतौ भवेत् ॥ १४१ ॥

दीप्तिः—नौः सकुशलमागमिष्यति न वाः, नौस्थितस्य वस्तुनो लाभो भविष्यति न वेति प्रश्ने समुदिते व्याहरति—क्षेमागमनपृच्छायां प्रवहणस्यागमनं क्षेमयुक्तं भविष्यति न वेति प्रश्ने चेन् मृत्युयोगोऽस्ति पूर्वोक्तमृत्युकारकयोगो भवेत् तदा वाच्यम्—“नौः क्षेमेणायाति ।” व्यवहृतौ पण्यव्यवहारे पण्यलाभो भवति । स्पष्टार्थो यदि प्रश्ने मृत्युयोगो भवेत्तदा नौकयाऽऽनीतवस्तुनो महान् लाभो भविष्यतीति वाच्यम् ।

**हिन्दी**—‘नौका सकुशल आयेगी’ प्रश्न में तथा उस पर लाई गई वस्तु से लाभ के प्रश्न में यदि मृत्युयोग हो तो नौका सकुशल आती है और वस्तु से व्यापार में लाभ होता है ।

नौका से सम्बन्धित प्रश्न के द्वारा जलीयमार्ग से प्रचलित व्यापार में लाभालाभ का विचार किया जाता है ।

**नेक्षते लग्नपो लग्नं मृत्युपो नेक्षते मृत्तिम् ।**

**यानपात्रस्य वक्तव्यं निश्चितं बुडनं तदा ॥ १४२ ॥**

**दीप्ति** :—अथेदानीं नौबुडनमुपस्थापयति—लग्नपो लग्नेशो लग्नं तनुगृहं नेक्षते न पश्यति, मृत्युप अष्टमेशो मृत्तिमष्टमस्थानं नेक्षते न विलोकयति तदा यानपात्रस्य पोतस्य निश्चितं बुडनं जले निमज्जनं वक्तव्यं वाच्यमिति । अस्य श्लोकस्यैको व्यतिरेकश्लोकोऽपि लभ्यते—

लग्नं पश्यति लग्नेशश्छिद्रं मृत्युपतिर्यदि ।

न बुडति तदा पोतो लाभो भवति निश्चितम् ॥ इति

भुवनदीपककारस्य मतं प्रश्नभूषणकारोऽपि समर्थयति—

लग्नपो नेक्षते लग्नं नाष्टमं निधनाधिपः ।

नद्यां प्रबूडिता नौका विज्ञेया गणकोत्तमैः ॥ इति

ताजिकनीलकण्ठ्यामपि एतदेव श्लोकान्तरेण लिखितं विद्यते—

लग्नेशोऽष्टपतिः स्वस्वगेहं नालोकते यदि ।

तदा यानेऽस्य वक्तव्यं निश्चितं मज्जनं बुधैः ॥ इति

**हिन्दी**—यदि लग्नेश लग्न को न देखता हो और अष्टमेश अष्टम स्थान को न देखता हो तो ‘नौका निश्चित ही डूब गई’ ऐसा कहना चाहिए ।

**लग्नपश्चाष्टमस्थानाधिपतिर्वा भवेद् यदि ।**

**सप्तमे कथयन्त्यन्तर्जले वापनिकं तदा ॥ १४३ ॥**

**दीप्ति** :—वा लग्नपो लग्नेश अष्टमस्थानाधिपतिश्च रन्ध्रेशश्च यदि सप्तमे सप्तमस्थाने भवेत् तदा वापनिकं नौका अन्तर्जले जलमध्ये कथयन्ति । योगेऽस्मिन् नौरगाद्यजलमध्ये इतस्ततो भ्रमति शीघ्रं तटं न प्राप्नोति । ताजिकनीलकण्ठ्यामपि अयमेवाभिप्रायो निगदितो नीलकण्ठेन—

‘तावुभौ सप्तमस्थौ चेज्जले वापनिकां वदेत् ।’

‘तावुभौ’ अर्थात् लग्नेशाष्टमेशौ यदि सप्तमस्थौ भवतस्तदा नौका जलमध्ये स्थिता भवति । प्रश्नभूषणकार अस्मिन् योगे नावि शत्रुवह्निकृतमुत्पातं सूचयति लग्नपो वाऽष्टमेशश्च सप्तमे यदि वर्तते ।

तदोत्पातं विजानीयादरिवह्निकृतं तदा ॥ अ० ५ श्लो० ३ ॥

केचन ‘वापनिकं’ पाठस्य स्थाने वापकिनं स्वीकुर्वन्ति तन्न भ्रमाभिभूतोऽयं प्रयोगः ।

**हिन्दी**—अथवा लग्नेश और अष्टमेश यदि सप्तम स्थान में हों तो नौका जल के बीच में भटक रही है—ऐसा फलादेश करना चाहिए ।

यह श्लोक पूर्वोक्त श्लोक का पूरक है । इस योग में ‘नौका’ डूब गई है’ ऐसा नहीं कहना चाहिए । इस योग में दिग्भ्रम या तूफान आदि आपदाओं से नाव भटक जाती है जो डूब भी सकती है या तट को प्राप्त भी कर सकती है ।

**नीचस्थोऽस्तमितो वा मृत्युपतिर्नवमगो रिपुक्षेत्रे ।**

**नीचो वा भवति तदा व्यवहृतलाभो भवेन्न तदा ॥ १४४ ॥**

**दीप्तिः**—यदा मृत्युपतिरष्टमेशो नीचस्थोऽस्तमितो वा नवमगो धर्मभावे स्थितो भवति, अथवा अष्टमेशो रिपुक्षेत्रे स्वकीये शत्रुराशौ भवति, अथवा यस्मिन् कस्मिन्नपि भावे स्थितो अष्टमेशो नीचस्थो स्यात्तदा व्यवहृतलाभो नौकागतवस्तुव्यवहारे लाभो न भवेदिति । अत्र प्रकारत्रयेण अष्टमेशस्थितिवशेनाऽलाभः प्रदर्शित आचार्येण ।

**हिन्दी**—यदि अष्टमेश नीचस्थ अथवा अस्तङ्गत होकर नवम भाव में हो या शत्रुगृही हो अथवा नीच राशि का होकर किसी भी भाव में बैठा हो तो नौका द्वारा लायी गई वस्तु के व्यापार से लाभ नहीं होता है ।

यहां नौका अथवा पानी के जहाज से सम्बन्धित अन्य कतिपय ज्ञातव्य योगों को निर्देशित करना आवश्यक है । यद्यपि आचार्यपद्मप्रभुसूरि इस द्वार में चार प्रश्नों का ही विचार करते हैं—(१) क्षेमायात (२) बुडन (३) प्लवन और (४) पण्यव्यवहति, परन्तु परवर्ती प्रश्नशास्त्रियों ने नाविक कुशल, अग्निभय, शत्रुभय एवं अन्य स्थितिओं का भी विचार किया है । इनमें से कुछ ख्यात योग इस प्रकार हैं—



### खाली नौका लेकर आने का योग—

यदि प्रश्नलग्नेश अथवा उसका नवमांशेश वक्री होकर क्रूर ग्रह से दृष्ट हो तो नौका विना किसी वस्तु को लिये ही लौट आती है—

लग्नाधिपे वक्रिणि चांशनाथे

.....पापैर्दृष्टस्तदा वस्तु विनेति वाच्यम् । ता० नी०

### नौका के मालिक का बीमार होने तथा मरने का योग—

(१) यदि लग्न, अष्टम या चतुर्थ भाव में पाप ग्रह बैठे हों और लग्नेश सूर्य किरणों से अस्तङ्गत हो तो नौका स्वामी को रोगी या मृत समझना चाहिए—

लग्नेऽष्टमे चतुर्थे वा पापो रविकरेऽङ्गपे ।

नौकापतिस्तदा रोगी मृतो वेति बुधो वदेत् ॥ प्रश्नभूषणम्

(२) यदि अष्टमेश लग्न, राशीश या चन्द्रमा को क्रूरदृष्टि से देखता हो तो नौका सहित मालिक डूब जाता है—

लग्नेशं चन्द्रनाथं वा चन्द्रं सवा मृत्युपो यदि ।

पश्येत्क्रूरदृशा नावा समं नश्यति नौपतिः ॥ ताजिकनीलकण्ठी

### नौका स्थित लोगों में परस्पर कलह का योग—

यदि लग्नेश और राशीश में परस्पर दृष्टि सम्बन्ध हो और दृष्टि शत्रुवद् हो तो नौका में स्थित लोगों में परस्पर कलह होता है । यह यवनाचार्य का मत है—

लग्नचन्द्रपती क्रूरदृष्ट्याऽन्योन्यं यदीक्षितौ ।

तदा पोतजनानां च मिथः कलहमादिशेत् ॥

### नाव को शत्रु तथा अग्नि से भय का योग—

जिस योग से भुवनदीपककार तथा ताजिकनीलकण्ठीकार नौका को भटकने की सूचना देते हैं उसी योग से प्रश्नभूषणकार अग्नि और शत्रु से भु कहते हैं ।<sup>१</sup>

इति नौमृतिबन्धनद्वारम् ।

अथातीतदिनलाभादिद्वारम् ॥ ३१ ॥

लग्ने यदिह विचारो भवति नवांशकगतैर्ग्रहैस्तत्र ।

बीजं गुरुपदेशो लग्ननवांशोन्यथायुक्तम् ॥ १४५ ॥

**दीप्तिः**—ममातीतदिनानि कथं गतानि ? मम व्यतीतस्य कालस्य फलादेशं कुरु प्रभृतिप्रश्ने यो विचारो लग्ने भवति स पृच्छाकाले नवांशकगतैर्ग्रहैरपि । तत्कालप्रश्नलग्नस्य नवमांशे ये ग्रहाःस्थिता भवन्ति तैर्ग्रहैर्व्यतीतं फलं वाच्यम् । अस्मिन् फलकथनक्रमे गुरुपदेशो बीजं भवति । गुरुं विना किमपि तथ्यं स्पष्टं न स्फुरति । यदि किञ्चिदुपदिष्यते तदपि लग्ननवांशोऽन्यथाऽम्नायाभावात् ।

ग्रहाणां नवमांशभोगस्य दिनादिसंख्या यथा पूर्वेः प्रतिपादिता तथाऽत्र निरूप्यते—

नवांशोऽर्कसितज्ञानां सत्रिभागमहस्त्रयम् ।

नाड्यः पञ्चदशैवं दोर्भौमे पञ्चदिनानि च ॥

मासो जीवे सत्रिभागस्त्रयोदश च वासराः ।

शनेर्मासत्रयं त्र्यंशो राहोर्मासद्वयं पुनः ॥ इति ।

**हिन्दी**—बीते हुये समय में लाभालाभादि कैसा हुआ है इसके ज्ञान हेतु जिस प्रकार लग्न से विचार किया जाता है वैसे ही ग्रह जिस नवमांश में स्थित हों उस से विचार करना चाहिए, परन्तु नवमांशों से फल कहने में गुरु का उपदेश बीज रूप होता है । गुरु से उपरिष्ठ हुए विना नवमांश माध्यम से फल कथन अन्यथा और अयुक्त होगा ।

तत्तन्नवांशकगतान्खेचरान् न्यस्य तद्दिने लग्ने ।

प्रष्टुरवाधार्य गणकैर्वाच्यमतिक्रान्तदिनवृत्तम् ॥ १४६ ॥

**दीप्तिः**—प्रश्नकुण्डली निर्माय सर्वेषां ग्रहाणां स्थापनं नवमांशवशेन तत्र तत्र कार्यं यत्र ते नवमांशे स्थिता भवन्ति । इदमेव तथ्यमत्र प्रस्तौति—लग्ने तद्दिने पृच्छालग्न इत्यर्थः । गणकैर्देवज्ञैर्नवांशकगतान् ग्रहान् न्यस्य विलिख्य तदनुसारमतिक्रान्तदिनवृत्तं व्यतीतदिनफलं मनसि अवधार्य प्रष्टुः फलस्य कथनं

वाच्यम् । तव इमानि दिनानि लाभप्रदानि आसनिमानि चालाभप्रदानि नवांशकैर्ग्रहैर्वाच्यमयं स्पष्टार्थः ।

**हिन्दी**—प्रश्नकाल में जो ग्रह जिस नवमांश में हो उसे वहाँ स्थापित कर बीते हुए दिनों का फलादेश प्रष्टा के लिए ज्योतिषी द्वारा कहना चाहिए ।

वस्तुतः यह प्रश्नशास्त्र की सर्वथा पृथक् फलादेश प्रक्रिया है । इस विधि से फलादेश करने के पूर्व अवश्य ही अनुभवी गुरु से फलादेश प्रक्रिया बोध जानना पड़ेगा अथवा कतिपय कुण्डलियों के फल कथन से इसे प्रयोग की कसौटी पर कसना पड़ेगा ।

ग्रहों के नवमांश की दिनादि संख्या इस प्रकार निर्दिष्ट है—

|           |                     |
|-----------|---------------------|
| सूर्य     | ३ दिन २० घटी        |
| चन्द्र    | १५ घटी              |
| मंगल      | ५ दिन               |
| बुध       | ३ दिन २० घटी        |
| गुरु      | १ मास १३ दिन २० घटी |
| शुक्र     | ३ दिन २० घटी        |
| शनि       | ३ मास १० दिन        |
| राहु/केतु | २ मास               |

ये नवमांश ग्रह एक नवमांश खण्ड को ऊपरनिर्दिष्ट काल में पूरा करते (भोगते) हैं ।

इति अतीतदिनलाभादिद्वारम् ।

अथ लग्नेशांशलाभादिद्वारम् ॥ ३२ ॥

लग्नपतिर्यत्रांशे पृच्छालगने तमंशमालोक्य ।

लग्नाधिपांशलगनांशनाथयोर्दृग्युतिसुहृत्वम् ॥ १४७ ॥

**दीप्ति**—पृच्छालगने प्रश्नकालिके लग्ने लग्नपतिर्लग्नेशो यत्रांशे यस्मिन्नंशे तिष्ठति तमंशमालोक्य संदृष्ट्य लग्नाधिपांशो लग्नेशस्यनवमांशो लग्नांशनाथ लग्नञ्च यस्मिन्नंशे भवेत् तयोरुभयोर्लग्नाधिपलग्नांशयोः स्थिति

दुग्धुतिसृहृत्वं दृष्टियोगस्थानयोगमैत्रीभावान् विलोकनीयम् । यदि स्थितिरियं साध्वी समुत्पद्यते तदा शुभस्य वृद्धिर्भवति ।

**हिन्दी**—प्रश्न काल में लग्नेश जिस अंश पर स्थित हो उसे देख कर, लग्नेश जिस के नवमांश में हो उनका स्वामी और लग्न के नवमांश स्वामी को देख कर विचार करना चाहिए कि इनका परस्पर दृष्टियोग, स्थानयोग और मैत्रीयोग बन रहा है या नहीं ।

इस श्लोक में मुख्यतः लग्न और लग्नेश के नवमांश स्वामी की दृष्टि, स्थिति और मैत्री से फल वृद्धि का विचार किया गया है ।

**यत्र स्यात्तत्र भवेत्सुदरता तनुधनादिभावेषु ।**

**यावल्लग्नधाधिपतेरंशकालः स कालश्च ॥ १४८ ॥**

**दीप्तिः**—यत्र तनुधनादिभावेषु लग्नद्वितीयादिभवेनेषु पूर्वोक्तं घटते अर्थात् लग्ननवमांशेशलग्नेशनवमांशेशयोर्दृष्टिर्युतिमैत्री वा स्यात् तत्र स्यात् तत्र तन्वादिस्थानेषु सुन्दरता भवति । इयं शोभनास्थितिः कियत् कालपर्यन्तं तिष्ठति । इत्याकाङ्क्षायामुत्तरयतियावल्लग्नधाधिपतेरंशकालो लग्नेशस्यांशकालः स्यात् तावत् कालपर्यन्तमियं स्थितिः स्यात् । वस्तुतः अत्र योगकालस्यावधिर्विचारितो विद्यते । प्रत्येकं ग्रहस्य नवमांशभोगकालः पठित एव विद्यते । अतः असौ शोभनकालो नवमांशभोगावधिपर्यन्तमेव भवति ।

**हिन्दी**—पूर्वोक्त योग जिस तनु, धनादि भावों में लगा होगा उन भावों की वृद्धि होगी । यह वृद्धि लग्नेश नवमांशपति के भोगकाल पर्यन्त होगी ।

प्रत्येक ग्रह का नवमांश भोगकाल बतलाया जा चुका है ।

**सञ्चार्योऽसौ तावद्यावत् पूर्णा भवन्ति ते भावाः ।**

**मासफलं सम्पूर्णं जातं लग्नाधिपात् तदिदम् ॥ १४९ ॥**

**दीप्तिः**—असौ लग्नाधिपतिरंशाधीपतिश्च तावद्धनादिस्थानेषु सञ्चार्यो यावत्ते धनादयो भावाः पूर्णा भवन्ति । यस्मिन् स्थाने लग्नांशाधिपयोर्दृष्टिः सम्पूर्णा स्यात् अथवा तयोर्युक्तत्वं मित्रत्वं वा स्यात् तदा तस्य स्थानस्य संख्यया माससंख्या वक्तव्या । अत्र स्पष्टार्थो लग्नस्थानात् लग्नेशो यस्मिन् भावे तिष्ठति तावन्मा.....कार्यस्य संसिद्धिर्जायते ।

**हिन्दी**—यह काल धानदि भावों में तब तक चलना चाहिए जब तक ये भाव पूर्ण न हो जाए और भाव से लग्नेश (दृष्टि, युति) जितनी संख्या पर स्थित हो उतने मासों में कार्य पूर्ण होता है—ऐसा कहना चाहिए ।

यह श्लोक 'यत्र स्यात् तत्र भवेत् सुन्दरता' का विकल्प है । प्रश्न लग्न का नवमांश स्वामी और स्पष्ट लग्नेश का नवमांश स्वामी जितने भावों के अन्तर पर स्थित होता है उतने मास पर्यन्त कार्य चलता रहता है । कार्य की पूर्णता तब होती है जब भावों का अन्तर भी पूर्ण हो जाता है ।

इति लग्नेशांशलाभद्वारम् ।

अथ द्रेष्काणादिद्वारम् ॥ ३३ ॥

**द्रेष्काणे यत्र लग्नं स्याद् द्वाविंशतितमे ततः ।**

**द्रेष्काणे यदि लग्नेशः पृच्छायां तन्मृतिर्ध्रुवम् ॥ १५० ॥**

**दीप्तिः**—अथेदानीं रोगिणः कुशलपृच्छायां द्रेष्काणद्वारा फलं कथयति—यत्र प्रश्ने द्वाविंशतितमे द्रेष्काणे लग्नं स्यात् ततो तस्मिन् द्रेष्काणे यदि लग्नेशः स्थितस्स्यात् तदा रोगिणो ध्रुवं मृत्युर्भवति । एकस्मिन् राशौ द्रेष्काणस्य त्रीणि खण्डानि भवन्ति । प्रथम खण्डे १ तः १० अंशाः समायान्ति । एवमेव ११ अंशतः २० अंशपर्यन्तं द्वितीयखण्डं भवति । २१ अंशतः ३० अंशपर्यन्तं तृतीयखण्डं पूर्यते । अत्राचार्येण लग्नत्रिभागरूपस्य द्रेष्काणस्य कल्पना कृता । सप्तमस्थानं यावद् एकविंशतिरंशाः व्यतीता भवन्ति । द्वाविंशतितमेऽशोऽष्टमस्थानं भवति । अतोऽत्र यदि लग्नेशः स्थितः स्यात् तदाऽवश्यमेव क्षेमप्रश्ने मरणं वाच्यमिति ।

**हिन्दी**—यदि रोगी के क्षेम प्रश्न में लग्न से २२ वें द्रेष्काण में लग्नेश स्थित हो तो निश्चित ही (रोगी की) मृत्यु होती है ।

यहाँ आचार्य ने लग्नत्रिभागरूप द्रेष्काण की कल्पना की है । सप्तमभाव तक २१ द्रेष्काण बीत जाते हैं । २२ वाँ द्रेष्काण अष्टम भाव का होता है । अतः अष्टम भाव में लग्नेश का स्थित होना मृत्युकारक माना गया है । एक

राशि में तीन द्रेष्काण होते हैं । अतः सप्तम भाव तक  $7 \times 3 = 21$  द्रेष्काणों की पूर्ति हो जाती है ।

लग्नपो मृत्युपश्चापि लग्ने स्यातामुभौ यदि ।

स्थितौ द्रेष्काण एकस्मिंस्तदा मूर्तिर्निरामया ॥ १५१ ॥

लग्नपो मृत्युपश्चापि मृत्यौ स्यातामुभौ यदि ।

स्थितौ द्रेष्काण एकस्मिंस्तदा मृत्युर्न संशयः ॥ १५२ ॥

दीप्तिः—यदि लग्नपो लग्नेशो मृत्युपश्चाष्टमेशश्च उभौ द्वौ लग्ने प्रश्नलग्ने स्यातामेवञ्च द्वौ यदि एकस्मिन्नेव द्रेष्काणे स्थितौ भवेतां तदा मूर्तिः पीडितस्यद्रेहो .....रुजा रहितः स्यात् । द्वितीयश्लोके लग्नेशरन्ध्रेशयो अष्टमस्थानस्थितिवशेन मृत्युयोगं निरूपयति—लग्नपो लग्नेशो मृत्युपश्च रन्ध्रेशोऽपि मृत्युभवने रन्ध्रे उभौ द्वौ स्यातां तथा एकस्मिन्नेव द्रेष्काणे स्थितौ भवेतां तदा मृत्युर्भवति । नात्र संशयः कर्तव्यः इति । लग्नेशरन्ध्रेशयोरेकस्मिन् द्रेष्काणे तदा एव स्थितिः संभाव्यते यदा तयोरंशो द्रेष्काणस्यैखण्डे भवेत् । एकस्मिन् राशौ द्रेष्काणस्य त्रीणि खण्डानि भवन्तीत्युक्तमेवपूर्वम् ।

हिन्दी—रोग से सम्बन्धित प्रश्नकुण्डली में यदि लग्नेश और अष्टमेश लग्न में स्थित हों तथा एक ही द्रेष्काण में हों तो शरीर निरोग होता है । यदि लग्नेश और अष्टमेश दोनों अष्टम स्थान में एक ही द्रेष्काण में स्थित हों तो निःसन्देह मृत्यु होती है ।

प्रथम योग में लग्नेश और अष्टमेश लग्न में एक ही द्रेष्कोण में हों तो निरोग करते हैं—बतलाया गया है । ऐसी स्थिति में लग्नेश प्रबल हो जाता है तथा अष्टमेश अपने स्थान से षष्ठस्थ हो जाने के कारण मृत्युभाव के फल का नाशक हो जाता है । इसीलिए रोगी व्यक्ति का शरीर या जिससे सम्बन्धित प्रश्न होता है उसका शरीर स्वस्थ रहता है । द्वितीय योग में अष्टमेश और लग्नेश एक ही द्रेष्काण में होने के कारण प्रबल हो जाते हैं तथा अष्टमस्थ होकर और अधिक घातक हो जाते हैं । ऐसी अवस्था में 'द्रेष्काणे यत्र लग्नं स्याद् द्वाविंशतितमे ततः' योग भी मृत्युकारक हो जाता है । अतः रोगी की मृत्यु निःसन्देह होती है ।

लाभयोगः—

लग्नपो लाभपश्चापि लाभे स्यातामुभौ यदि ।

स्थितौ द्रेष्काण एकस्मिन् प्रष्टुर्लाभस्तदाध्रुवम् ॥ १५३ ॥

दीप्तिः—इदानीं द्रेष्काणवशेन प्राश्निकस्य फलं प्रतिपाद्यते—लग्नपो लग्नेशो लाभप एकादशेशश्चोभौ द्वौ यदि लाभे स्यातां तथा एकस्मिन्नेव द्रेष्काणे भवेतां तदा प्रष्टुः प्राश्निकस्य लाभो ध्रुवं निश्चयेन भवति ।

हिन्दी—यदि लग्नेश और लाभेश प्रश्नकाल में एकादश स्थान में बैठे हों और एक ही द्रेष्काण में बैठे हों तो प्राश्निक को निश्चित ही लाभ होता है ।

वस्तुतः यह कार्यसिद्धि योग का ही प्रकारान्तर है, क्योंकि—‘लग्नाधिपस्य योगो लाभाधीशेन लाभकरः’ श्लोक में लग्नेश और एकादशेश का योग आचार्य ने लाभदायक माना है । वहीं पर—(बारहवें द्वार में) यह भी कहा गया है कि चन्द्रमा की दृष्टि इन दोनों पर (लग्नेश और एकादशेशपर) पड़ती हो तो ‘परं लाभ’ होता है । ठीक उसी योग का कथन द्रेष्काणवश यहाँ भी लिया गया है ।

पुत्रप्राप्तियोगः—

लग्नपः पुत्रपश्चापि पुत्रे स्यातामुभौ यदि ।

स्थितौ द्रेष्काण एकस्मिन् पुत्रप्राप्तिस्तदा भवेत् ॥ १५४ ॥

दीप्तिः—इदानीं लग्नेशपुत्रेशाभ्यां पुत्रप्राप्तियोगं विचारयति लग्नपो लग्नेश पुत्रपश्चापि पञ्चमेशश्चापि पुत्रे पञ्चमभावे यदि उभौ द्वौ स्यातां तथा एकस्मिन्नेव द्रेष्काणेऽपि स्यातां तदाऽवश्यमेव पुत्रप्राप्तिर्भविष्यतीति कथनीयमेतत्फलम् ।

हिन्दी—लग्नेश और पञ्चमेश दोनों एक साथ ही पञ्चमभाव में बैठे हों तथा एक ही द्रेष्काण में हों तो ‘पुत्र की प्राप्ति होगी’—ऐसा फलादेश करना चाहिए ।

इस प्रकार लग्नेश और कार्येश यदि दोनों एक साथ एक भाव में एक द्रेष्काणस्थित हों तो उस कार्य की सिद्धि होती है । यदि कार्येश त्रिक स्थानों का

पति हो तो कष्ट का प्राबल्य कहना चाहिए । इसी तथ्य का प्रतिपादन आचार्य अगले श्लोक में कर रहे हैं ।

एवं द्वादशभावेषु द्रेष्काणैरेव केवलैः ।

बुधो विनिश्चितं ब्रूयाद् भावेष्वन्येषु निःस्पृहः ॥ १५५ ॥

हिन्दी:—एवं पूर्वोक्तविधिना द्वादशभावेषु तन्वाद्भावेषु केवलैर्द्रेष्काणैरेव फलं कथनीयम् । निःस्पृहो बुधोऽन्येषु भावेषु योगोऽयं दृष्ट्वा विनिश्चितं निश्चयमेव ब्रूयाद् । कश्चित्प्रष्टाऽऽगत्य किमपि पृच्छतितदातस्य प्रश्नस्योत्तरं द्रेष्काणस्थित कार्येशलग्नेशयोर्योगद्वारा कथनीयम् ।

हिन्दी—इस प्रकार से बारहभावों में केवल द्रेष्काण के द्वारा फलादेश करना चाहिए । निःस्पृह गणक को अन्य भावों में स्थित लग्नेश कार्येश के एक द्रेष्काणस्थ होने से निश्चय पूर्वक फल कहना चाहिए ।

प्रश्नकाले सौम्यवर्गो यदि लग्नेऽधिको भवेत् ।

ग्रहभावानपेक्षेण तदा ज्ञेय शुभं फलम् ॥ १५६ ॥

प्रश्नकाले क्रूरवर्गो लग्ने यद्यधिको भवेत् ॥

अशुभं फलमाख्येयं ग्रहापेक्षां विना तदा ॥ १५७ ॥

दीप्ति:—इमौ द्वौ श्लोको जातकशास्त्रस्य प्रश्नशास्त्रस्य च सिद्धान्तभूतौ विद्येते प्रश्नकाले यदि लग्ने सौम्यवर्गः शुभवर्ग अधिको भवेद् अर्थात् लग्ने सौम्यग्रहाणां संख्याऽधिका स्यात्तथा द्रेष्काणनवमांशादयो वर्गा शुभग्रहाणां स्युस्तदाऽन्येषां भावानां विचारं विनैव शुभफलं कथनीयम् । एवमेव यदि प्रश्नकाले लग्ने क्रूरग्रहाणां वर्ग अधिको भवेत् तदाऽन्येषां ग्रहाणां विचारापेक्षां विनैव अशुभं फलं वाच्यम् । विषयेऽस्मिन् षट्पञ्चाशिकायां पृथुयशसा उक्तम्—

यो यो भावः स्वामिदृष्टो युतो वा

सौम्यर्वा स्यात् तस्य तस्यास्तिवृद्धिः ।

पापैरेवं तस्य भावस्य हानि—

निर्देष्टव्यापृच्छतां जन्मतो वा ॥



**हिन्दी**—यदि प्रश्नकाल में लग्न में शुभग्रहों का वर्ग अधिक हो तो अन्य भावों के विचार के बिना ही शुभ फल कहना चाहिए । इसी प्रकार यदि प्रश्नकालिक लग्न में अशुभ ग्रहों का वर्गाधिक्य हो तो ग्रहादिविचार के बिना ही अशुभ फल कहना चाहिए ।

यह जातक शास्त्र तथा प्रश्नशास्त्र का स्थिर सिद्धान्त है । यदि लग्न में सौम्य ग्रह का गृह, नवमांश, द्रेष्काण, होरा, त्रिंशांश तथा द्वादशांश हो तो शुभ फल होगा ही । ऐसी स्थिति में अन्य भावगत दोष गौण हो जाते हैं । यदि स्थितिविपर्यय हो जाये अर्थात् अशुभग्रह का वर्गाधिक्य लग्न में हो जाये तो अशुभ फल कहना चाहिए ।

अथ दोषज्ञानद्वारम्—

मूर्तो छिद्रे द्वादशेऽर्को व्यये कर्मणि भूसुतः ।

षष्ठान्त्याद्याष्टमश्चन्द्रो व्ययास्ते शेष खेचराः ॥ १५८ ॥

क्षेत्राधिपाकाशदेविशाकिन्याद्याश्च देवताः ।

देवदोषाम्बुदेवात्मव्यन्तरामिहरादयः ॥ १५९ ॥

**दीप्तिः**—प्रश्नकाले यदा मूर्तो लग्ने छिद्रेऽष्टमे द्वादशे व्यये स्थानेऽर्को सूर्यो व्यये द्वादशे कर्मणि दशमे भूसुतो भौमः, षष्ठान्त्याद्याष्टमश्चन्द्रो रिपुव्ययलग्नाष्टमश्चन्द्रो विधुः, शेषखेचराः बुधगुरुशुक्रशनिराहव व्ययास्ते द्वादशसप्तमे क्रमशः मिहिरादयः सूर्यादयः क्षेत्राधिपः क्षेत्रपालस्याकाशदेव्याः शाकिन्याः, देवतायाः, देवदोषस्य, अम्बुदेवतायाः, आत्मनः दोषः, प्रेतान्तिकादेः प्रभाववशेन कष्टं भवति । स्पष्टार्थो यदि रविः १-८-१२ स्थाने वा भवति तदा क्षेत्रपालस्य दोषो वाच्यः । ६-१२-१-८ स्थाने वा चन्द्रो भवति तदाऽऽकाशदेवतादोषोऽवधेयः । यदि १२-१०- वा स्थाने भूसुतो (मङ्गलः) भवति तदा शाकिनीदोषो विजानीयात् । एवमग्रे १२-७ वा स्थाने क्रमशो बुध-गुरु-शुक्र-शनि-राहुवः स्तुतदा क्रमेणैव वनदेवताया दोषात् देवताया दोषात् जलदेवताया दोषात्, आत्मदोषात् प्रेतादिगृहदेवताया दोषात् कष्टं भवतीति ।

अन्यदपि कारणं दोषस्य भवति परं ग्रहा आधिदैविकदोषमपि सूचयन्ति । यथा ग्रन्थान्तरे (ताजिकनीलकण्ठी) लभ्यते—

वह्नयङ्के द्वादशे षष्ठे लग्नात्पापग्रहो यदि ।

हतो गदैर्जलैश्शस्त्रैस्तस्य दोषः कुलोद्भवः ॥

लग्नात् ३-९-१२-६ स्थानेषु कश्चित्पापग्रहस्तिष्ठति तदा  
हननरुक्जलशस्त्रकुशलो दोषादिभिः कष्टं मृत्युर्वाभवति । एतेषु स्थानेषु  
चन्द्रादिग्रहा यथादोषमुद्भावयन्ति तथाऽत्र कथ्यते—

चन्द्रे देव्यो रवौ देवाद् भौमे स्वकुलगौत्रजान् ।

बुधे विचित्रजनितो दोषः स्यात्कर्मसम्भवः ॥ इति ।

रोगाद् दोषाद् वा मुक्तिर्भविष्यति न वेति जिज्ञासायां ताजिकनीलकण्ठ्यां यथा  
लभ्यते—

केन्द्रस्थैर्बलिभिः पापैरसाध्या देवतागणाः ।

सौम्यग्रहैश्च केन्द्रस्थैः साध्या मन्त्रस्तवार्चनैः ॥

कण्टकाष्टत्रिकोणस्थाः शुभा उपचये शशी ।

लग्ने च शुभसन्दृष्टे रोगी रोगाद् विमुच्यते ॥ इति ।

हिन्दी—यदि प्रश्नकाल के समय सूर्य १-८-१२ वें भाव में हो तो  
क्षेत्रपालजन्य दोष होता है, चन्द्रमा ६-१२-१-२ वें भाव में हो तो  
आकाशदेवता जन्य दोष होता है, मंगल १२ या १० वें भाव हों तो शाकिनी  
जन्य दोष होता है । एवमेव बुध १२ या ७ वें भाव में हो तो वनदेवता जन्य दोष  
गुरु १२ या ७ वें भाव हों तो देवदोष शुक्र १२ या ७वें भाव में हो तो  
जलदेवता जन्य दोष शनि १२ या ७वें भाव में हो तो आत्मदोष तथा राहु १२  
या ७ वें भाव में हो तो प्रेतगृह देवता जन्य दोष होता है ।

इस सम्बन्ध में ताजिकनीलकण्ठी में दो श्लोक हैं—

प्रेताश्च राहौ पितरः सुरेज्ये चन्द्रेऽम्बुदेव्यस्तपनेपिदेव्यः ।

स्वगोत्रदेव्यश्च शनौ बुधे च भूतानि विन्द्याद् व्ययरन्ध्रसंस्थे ॥

शाकिन्य आरे भृगुजेऽम्बुदेव्यो गृह्णन्ति मर्त्यं विमुखं मुकुन्दात् ।

स्वर्क्षोच्चगे वीर्ययुते च साध्याश्चन्द्रे च नीचे विबले न साध्याः ॥

अर्थात् राहु ग्रह के कारण प्रेत दोष, बृहस्पति के कारण पितर दोष, चन्द्रमा के कारण जलदेवी दोष, सूर्य के कारण देवी दोष, शनि के कारण कुल देवता दोष, बुध के कारण भूत प्रेत दोष, मंगल के कारण शाकिनी दोष तथा शुक्र के कारण जलदेवता दोष से मनुष्य को व्याधि होती है ।

ग्रहों के द्वारा अदृष्ट आधिदैविक शक्तियों के उत्पात की सूचना मिलती है । जातक परिजात के अनुसार सूर्य ग्रह देवता तथा ब्राह्मण के अभिशाप जन्य व्याधि को सूचित करता है । एवमेव चन्द्र कालिका, मंगल भैरव तथा भूतप्रेत, बुध वैष्णवशक्ति, गुरु-अग्नि, देवता, ब्राह्मण तथा शाप, शुक्र स्त्रीजनित प्रयोग, शनि पिशाच तथा .....प्रतादिकों से उत्पन्न व्याधि को बतलाया है । अतः ऐसी दशा में मन्त्रप्रयोग और ग्रह जनित दोष के निवारक विना केवल औषधि से लाभ सम्भव नहीं होता ।

इति दोषज्ञानद्वारम् ।

अथ दिनचर्याद्वारम् ॥ ३५ ॥

यदीन्दुर्दिनचर्यायां शुभः स्यादुदयास्तयोः ।

श्रेयांस्तदाऽवगन्तव्यं सकलोऽपि हि वासरः ॥ १६० ॥

दीप्तिः—पुरा राजानः स्वकीयायां सभायां राजज्यौतिषी पालयन्ति स्मः । ते स्वदिवसं प्रति पप्रच्छुः यदद्य मे दिवसः कीदृग् भविष्यति ? शोभनअशोभनो वेति ? अस्य प्रश्नस्योत्तरे सर्वथाऽयं श्लोको व्यवहर्तव्यः—दिनचर्या प्रश्नकाले यदीन्दुश्चन्द्र उदयास्तयो उदयकालेऽस्तकाले च शुभस्स्यात् तदा श्रेयान् अवगन्तव्यः । हि निश्चयेन सकलोऽपि सम्पूर्णोऽपि वासरो दिवसः कल्याणकर अवगन्तव्यः ।

हिन्दी—दिनचर्या के प्रश्न में अर्थात् कोई पूछे कि मेरा दिन कैसा व्यतीत होगा ? तो इस प्रश्न के उत्तर में यदि उदय और अस्त के समय चन्द्रमा शुभ हो तो समग्र दिन श्रेयकारक समझना (कहना) चाहिए ।

प्राचीन काल में राजा गण अपनी राजसभा में पण्डित (गणक) रखते थे । उन्हें आशंका होने पर अपने दिन भर के भविष्य की भी चिन्ता हो जाती

थी। दिनचर्या के क्षेम प्रश्न में चन्द्रमा ही सर्वथा कारक ग्रह होता है। यदि यह प्रश्नकाल के दौरान शुभग्रह से दृष्ट, युत या शुभराशिस्थ हो और अस्तपर्यन्त इसी स्थिति में हो तो दिन उत्तम ढंग से बीतता है। केवल दिन भर के लिए प्रश्न किया जाये तो सूर्योदय और सूर्यास्त पर से इष्टानयन करके फल कहना चाहिए।

असिना वधयोगः—

राहौ वाथ कुजे क्रूरे परस्मिन्नपि खेचरे ।

अष्टमे स्वगृहे चैव दिने चन्द्रेऽसिना वधः ॥ १६१ ॥

दीप्तिः—दिनचर्याप्रश्ने अष्टमे स्थाने राहौ, कुजे वा स्थिते सति परस्मिन्नपि क्रूरे खेचरे स्थिते यदि ते स्वगृहस्थाः स्युस्तस्मिन्नेव दिने तत्रैवाऽष्टमस्थाने चन्द्रो भवति तदाऽसिना खड्गेन वधो वाच्यः। पूर्व १०१ श्लोके छुरिकाया प्रहारयोगो निरूपितो विद्यते। तत्र विवादीयुगलयोर्मध्ये छुरिकायाः प्रहारो वर्णितः। अत्र अकस्माद् (योगेऽस्मिन्) तीक्ष्णधारेणास्त्रेण मृत्युयोगः प्रतिपादितः। द्रेष्काणद्वारेऽपि प्रतिपादितं यद् अष्टमेशोऽष्टमस्थो मृत्युकारको भवति। स एव सिद्धान्त अत्रापि दृश्यते। अष्टमस्थे क्रूरग्रहे विशेषरूपेण भौमे राहौ वा शस्त्रादिना मृत्युर्भवति।

हिन्दी—दिनचर्या के प्रश्न में यदि अष्टम स्थान में राहु या मंगल दूसरे क्रूरग्रह स्थित हों तथा स्वगृही हों और चन्द्रमा भी अष्टमस्थ हो तो उस दिन वार (तीक्ष्ण धार वाले अस्त्र से) मृत्यु होती है।

वाद विवाद विचारद्वार में भी छुरा से प्रहार का योग दिया गया है, परन्तु वहाँ दो विवादियों के बीच कलह के अन्तराल में प्रहार का योग है। द्रेष्काणद्वार में भी मृत्यु योग का वर्णन करते समय लिखा गया है कि अष्टमेश क्रूर हो और अष्टमस्थ हो तो मृत्यु होती है। इससे स्पष्ट होता है कि अष्टमस्थान घातक होता है। अष्टमस्थ राहु या मंगल तीक्ष्णधारवाले अस्त्र से प्रहार कराते हैं। यदि ये स्वगृही क्रूराक्रान्त तथा चन्द्रमा के साथ अष्टमस्थ हों तो निश्चय ही तलवार और आग्न्येयास्त्र से घात देने वाले होते हैं।

दन्तुरवदनः कृष्णो विज्ञेयो राहुदर्शने प्राणी ।

षष्ठेऽष्टमे च जीवः कथयति च सन्निपातरुजम् ॥ १६२ ॥

दीप्तिः—अथेदानीं जन्मकालस्वरूपं निरूपयति-यदा राहुः प्रश्नकाले प्रश्नलग्नं पश्यति आहोस्वित् जन्मराशौ वर्तमानो राहुर्जन्मलग्नं पश्यति तदा प्राणी जातकः प्राश्निको वा दन्तुरवदनः प्रलम्बदन्तो विज्ञेयो ज्ञातव्यः । स कृष्णवर्णोऽपि भवति । प्रश्नलग्नात् जन्मलग्नाद् षष्ठेऽष्टमे च स्थाने विद्यमानः सन्निपातरुजं सन्निपातगदं कथयति ददाति । राहोर्दृष्टिर्यदा लग्ने भवति किम्बा चन्द्रे भवति तदा जनः कृष्णकायो दन्तुरवदनश्च जायत इति ।

हिन्दी—प्रश्नलग्न पर राहु की दृष्टि होने पर मनुष्य काले रंग का तथा बड़े-बड़े दाँत वाला होता है । लग्न से षष्ठ या अष्टम स्थान में बृहस्पति हो तो सन्निपात रोग होता है ।

राहु का वर्ण कृष्ण कहा गया है । जहां ग्रहों से रोग का निर्देश किया गया है वहाँ बृहस्पति को सन्निपात कारक माना गया है ।

इति दिनचर्याद्वारम् ।

अथ गर्भादिप्रश्नद्वारम् ॥ ३६ ॥

पृच्छन्त्याः पितृमन्दिरे पितृगृहाभिज्ञाक्षरं गुर्विणी ।

पत्युश्चापि तदीयमन्दिरगतं गुर्व्या अभिज्ञाक्षरम् ॥

शुक्लारब्धदिनव्यवस्थिततिथीन्दत्त्वामुनींश्च ध्रुवान् ।

भागं वह्निभिरेककेन तनयो द्वाभ्यां सुता खेन खम् ॥ १६३ ॥

दीप्तिः—गर्भिण्या गर्भतः किं भविष्यति पुत्रो वा पुत्री ? गुर्व्या गर्भिण्या प्रश्ने पितृमन्दिरे पितृगृहे पितृगृहाभिज्ञाक्षरं पितृधृतनामाक्षरं विगण्य तस्य संख्यायास्तथा पत्युर्नामाक्षरसंख्यायाश्चैक्यं विधेयम् । यदि सा गुर्विणी पतिगृहादागत्य प्रश्नं लग्न तदा तदीयमन्दिरगतमभिज्ञाक्षरं पतिवेश्मस्थितनामाक्षरं पत्युर्नामाक्षरैर्योजनीयम् । स्पष्टार्थो यद् पितुः पत्युर्वागेहस्य प्रचलितनामाक्षरं गुर्विण्याः पत्युर्नामाक्षरैर्योजनीयम् । पुनश्च शुक्लारब्धदिनव्यवस्थिततिथीन् दत्त्वाऽर्थात् शुक्लपक्षस्य प्रतिपदारभ्य कृष्णामावास्यां यावत् त्रिंशत्तिथिषु या

प्रश्नकालिकी तिथिर्विद्यते तस्याः संख्या तस्मिन् योगाक्षरेषु योज्या । मुनींश्च ध्रुवान् सप्तध्रुवकान् दत्त्वा वह्निभिस्त्रिभिर्भागं प्रदेयम् । एकेन शेषेन तनयो भवति द्वाभ्यां सुता खेन शून्येन शेषेन खं शून्यं भवति, गर्भो गलति जातो वा विनश्यतीति भावः ।

अन्येषु ग्रन्थेष्वपि विषयेऽस्मिन् प्राप्यते—

विषमस्थितेष्वेकाकी पुत्रजन्मप्रदः शनिः ।

राहुयुक्तस्तु तत्कालं विद्धः कालेन मृत्युदः ॥

अपि च—

यदीन्दुभौमशुक्राभ्यां गर्भो वा वीक्षितः शुभैः ।

तदासौ जनयेत् पुत्रो नात्र कार्या विचारणा ॥

शुक्रो वा चन्द्रमा वापि नेक्षते यदि पञ्चनम् ।

तदा पुत्रस्य पृच्छायां न पुत्रोऽस्तीति कथ्यते ॥ इति

**हिन्दी**—गर्भ से सम्बन्धित प्रश्न में यदि गर्भवती पिता के घर में हो तो वहाँ का प्रसिद्धनाम अथवा पतिघर में हो तो वहाँ का धारित नाम ग्रहण करके जो अक्षर संख्या हो उसमें पति के नामाक्षरों को जोड़कर वर्तमान तिथि की संख्या जोड़कर उसमें ध्रुवाङ्क ७ जोड़ दें । समग्र योगाङ्क में ३ से भाग देने पर यदि शेष १ बचे तो पुत्र, २ बचे तो कन्या और शून्य शेष बचे तो गर्भ शून्य कहना चाहिए अर्थात् गर्भनाश हो जायेगा या उत्पन्न सन्तति मर जायेगी ऐसा फलादेश करना चाहिए ।

यहां शुक्लादि गणना का निर्देश है, अर्थात् पूर्णिमा १५ और अमावस्या ३० संख्या मानें । कृष्ण पक्ष की विधि की तिथि की गणना १६-१७-१८ आसि करें । ऊपर लिखित विधि से गर्भ का पिण्ड बनाया गया है, परन्तु इसका सत्यापन प्रश्नकुण्डली से भी कर लेना चाहिए ।

एकस्मिन् प्रकृतिः शुभेन सहिते सौख्यातिरेकः क्षपा—

नाथेन श्रुतिरद्भुता प्रसरति क्रूरेण पीडोद्भवः ।

शुक्रे सप्तमगे स्त्रियाः पतिगतं पुत्रादिकं वा पदम् ।

पृच्छन्त्याः सुरतस्थितावनुभवो वाच्योऽष्टमस्थेऽपि च ॥ १६४ ॥

दीप्तिः—यदि काचित् स्त्री गणकं प्रति पृच्छति कीदृशं सुखं विद्यते पत्युः, पुत्रः कुशली विद्यते न वेति, स्थानलाभो भविष्यति न वेति तदा शुक्रग्रहेण सर्वमेतद् विचार्यते । इदमेवात्र वर्णयति पतिगतं, पुत्रादिकं अर्थात् पुत्रादिकानां वा पदं स्थानादिकं पृच्छन्त्याः स्त्रियाः प्रश्नकाले एकस्मिन् शुक्रे भार्गवे सप्तमगे तदा प्रकृति स्वभावो न विशेषः कश्चिदपि वाच्यः । अर्थाद् पूर्ववदेव सर्वं प्रचलति । शुभेन सहिते शुभग्रहेण सहिते शुक्रे सौख्यातिरेकः सौख्यातिशयो वाच्यः । क्षपानाथेन सहिते शुक्रे चन्द्रयुक्ते दैत्यगुरौ श्रुतिरद्भुता परमाख्यातिः प्रसरति विस्तारतां याति । क्रूरेण ग्रहेण युक्तः शुक्रः पीडोद्भवः पीडाकारको भवति । अनेन प्रकारेण सुरतस्थितशुक्रग्रहद्वारा यत्फलं निर्दिष्टमर्थात् सप्तमस्थशुक्रेण यत्फलं कथितं तदेव फलमष्टमस्थे शुक्रेऽपि च वक्तव्यम् ।

अत्र केचन विशेषप्रश्ना ग्रन्थादन्यस्माद् उदाहृत्य प्रस्तूयन्ते—

लग्नाधिपे ह्यविनष्टे न बुभुक्षा भौमसूर्ययोः ।

असकृच्छिद्रे चन्द्रसितौ चेत्सहजोतिसार आख्यातः ॥

छिद्रे भौमार्को चेद्बुधोद्रेकश्च पित्तजोद्रेकः ।

सितभौमौ बलहीनौ सक्रूरशनिर्विविधरोगः ॥

सन्निपातरुजं कुर्यात्सक्रूरश्चेद् बृहस्पतिः ।

स्त्रीप्रश्ने छिद्रगे भौमे विनष्टं योनिदूषणम् ॥

शत्रुप्रश्ने तु षष्ठेशो मूर्तौ बस्तिविधुस्तथा ।

यद्यन्यः षष्ठभः खेटः शत्रोः पक्षकरः स तु ॥

अत्र भाटकपृच्छायां लग्नेशो भाटकप्रदः ।

सप्तगो भाटकग्राही भाटकोत्पत्तिकृनभः ॥

चतुर्थमवसानं स्यादेषु सौम्यग्रहैः शुभम् ।

व्यस्ते व्यस्तं सुहृच्छत्रुमवस्थित्याद्यसर्वतः ॥

इत्यलम् ।

**हिन्दी**—यदि कोई स्त्री पतिसुख पुत्रादिकों के सुख और स्थान सुख से सम्बन्धित प्रश्न करे तो प्रश्नकुण्डली में शुक्र ग्रह अकेले सप्तम स्थान में बैठा हो तो 'जैसी स्थिति है वैसी ही रहेगी' कहना चाहिए । यदि शुक्र शुभग्रह युक्त (बुध, बृहस्पति युक्त) हो तो 'अत्यधिक सुख मिलेगा' एवं शुक्र चन्द्रमा युक्त हो तो अत्यधिक 'प्रसिद्धि मिलेगी' तथा पापग्रह युक्त शुक्र हो तो 'पीड़ा उत्पन्न होगी' ऐसा फलादेश करना चाहिए । सप्तमस्थ शुक्र ग्रह के प्रभाव से जो फल आदिष्ट हैं उन्हें अष्टमस्थ शुक्र से भी कहना चाहिए ।

यहाँ 'सुरतभवन' से आशय है 'सप्तमस्थान ।' स्त्री की कुण्डली में सप्तम भाव पति का होता है । अतः वहाँ से पति के सुखादिकों का विचार किया जाता है ।

तुर्य पश्यति तुर्यपोऽस्ति निहितं क्रूरेऽपि तस्मिन्भवे ।

चेन्न प्राप्तिः खलु खेचरे च सदधिष्ठानं तदिन्दौ स्थिते ॥

स्वामिप्रेक्षणवर्जितेऽपि च तदस्तित्वं न तद्वार्षिके

लाभश्चन्द्रयुगीक्षणेन रहितं पूर्णं च चन्द्रेक्षणम् ॥ १६५ ॥

**दीप्ति**—अथेदानीं चतुर्थभवनान् निधि लक्षयति—तुर्यपः चतुर्थेशः तुर्यं चतुर्थस्थानं पश्यति तदाऽस्ति निधिः । निहितं निधानं भवति निधिर्यदा चतुर्थेशः चतुर्थभावं पश्यति, परं क्रूरेऽपि तस्मिन् चतुर्थभवने स्थिते सति प्राप्तिर्न भवेत् । क्रूरग्रहयुतिनिधि नाशयति । अर्थात् यदि क्रूराश्चतुर्थास्था भवन्ति तदा निहितनिधेः प्राप्तिर्न स्यात् । मूलतः क्रूरग्रहस्य दृष्टिर्यदि तुर्ये भवति तदा निधिस्तत्र भवति परं च निधेः प्राप्तिर्न स्यात् । मूलतः क्रूरग्रहस्य दृष्टिर्यदि तुर्ये भवति तदा निधिस्तत्र भवति परं च निधेः प्राप्तिर्न जायते । अन्यऽस्मिन् खेचरे तत्र स्थिते सूर्यादिप्रभृतिकग्रहे सदधिष्ठानं भवति तथा च स्वामिप्रेक्षणवर्जितेऽपि चतुर्थेशदृष्टिरहितेऽपि तदिन्दौ स्थिते चन्द्रमसि तत्र वा स्थिते वीक्षिते वा तदस्तित्वमर्थात् निहितस्यास्तित्वं वाच्यम् । परं चन्द्रयुगीक्षणेन रहितं निधानं तद्वार्षिके न मिलति यदा तस्मिन् चन्द्रस्य युतिर्दृष्टिर्वा भवति तदा (तस्मिन् वर्षे) लाभो जायते ।

**हिन्दी**—यदि प्रश्नकाल में चतुर्थेश चतुर्थ भाव को देख रहा हो तो निधि (छुपा खजाना या कोष) होती है । यदि चतुर्थ स्थान पर क्रूरग्रह की दृष्टि पड़े तो उस निधि की



प्राप्ति नहीं होती । चतुर्थस्थान में सूर्यादि ग्रहों में से कोई भी स्थित हो तो सत् पात्र (उत्तम वर्तन) में धन रहता है । चन्द्रमा की स्थिति चतुर्थ में हो तो चतुर्थेश की दृष्टि के विना भी निधि कहनी चाहिए परन्तु वह निधि चन्द्रमा की युति या दृष्टि के विना एक वर्ष पर्यन्त नहीं मिलती । निधि लाभ चन्द्रमा की पूर्ण दृष्टि पड़ने पर ही होता है ।

|       |         |            |    |
|-------|---------|------------|----|
| ५     | ५ गु. ३ | ६          | २  |
| के. ४ | १ चं.   | सू.बु.मं.७ | १२ |
| ८     | रा.१०   | शु.श.९     | ११ |

इस प्रश्नकुण्डली में प्रश्नकर्ता को निधि मिलने का योग बताया गया । प्रश्नकर्ता दिल्ली क्षेत्र का रहने वाला था । उसने निधि हेतु भूमि खोदवाई परन्तु उसे बन्द घड़े में भस्म और अस्थियाँ मिली । वस्तुतः क्रूरादिग्रह चतुर्थस्थ है । अतः निधि तो भूमि के अन्दर थी । चन्द्र की दृष्टि होने से उसके मिलने का भी योग था परन्तु चन्द्रमा पर क्रूर दृष्टि पड़ रही थी तथा लग्न केतु ग्रस्त था । इसलिए .....के स्थल पर उसे भस्मादि की प्राप्ति हुई । साथ ही साथ प्रश्नकुण्डली में शुक्र चतुर्थस्थान से किसी भी तरह युत या दृष्ट नहीं रहा ।

द्रव्यखननयोगः—

योगेऽस्तित्वविधायके हिमरुचिर्नीचे विनष्टोऽपि वाऽ-

मावास्यानिकटस्थितोऽपि कथितः प्राज्ञैः प्रमाणं तथा ॥

लाभे चन्द्रयुगीक्षणो न भवतः सौम्यस्यतेऽस्तस्तदा ।

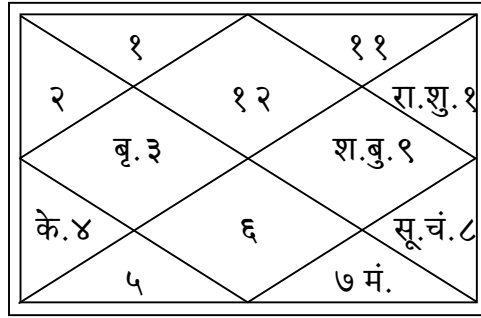
वर्षेऽन्यत्र निधिग्रहाय सुधिया कार्यः प्रयत्नो महान् ॥ १६६ ॥

दीप्तिः—योगेऽस्तित्वविधायके निधानस्य ज्ञानं सम्प्राप्यपि निधानास्तित्वदशके प्रागुक्तेऽपि योगे तावत् कालपर्यन्तं न खननाय प्रयतेद् यावद् हिमरुचिश्चन्द्रो नीचे वृश्चिके भवति विनष्टोऽपि वा चन्द्रो निधिदायको न भवति सूर्यसङ्गमात्, क्रूरविद्धो वा चन्द्रो विनष्टो भवति । अमावास्यातिथेः सन्निकटस्थोऽपि विधुर्बाधको भवति निधिप्राप्तिप्रयासे । अतः

प्राज्ञैर्ग्रणकैस्तथा प्रमाणं निधिप्राप्तये उद्यमो न कार्य इति । पूर्वेः प्रतिपादित असौ योगः । तथा लग्ने एकादशभवने चन्द्रयुगीक्षणे चन्द्रस्य युतिर्दृष्टिर्वा न स्याद् एकादशभवने चन्द्रसंयोगं विना दृष्टि विना वेति भावः निधिप्राप्तये प्रयासो न कर्तव्य इति । यदि एकादशे भवने सौम्यस्य ग्रहस्य संयोगदृष्टी भवतस्तदा सुधिया विज्ञेन निधिग्रहाय अन्यत्रवर्षे अपरेऽब्दे महान् प्रयत्नः कार्यः । निधिग्रहाय पूर्वं तावदनुष्ठानादिकं विधाय एव प्रयत्नः कार्यः । कार्येऽस्मिन् विध्नोत्पत्तिर्बलीयसी । अतः शान्तिकर्मण आवश्यकताऽनिवार्या । एतदर्थमेवोक्तं 'कार्यः प्रयत्नो महान्' इति ।

**हिन्दी**—निधि प्राप्ति का (पूर्वोक्त) योग होने पर यदि चन्द्रमा नीचराशि में स्थित हो, विनष्ट (अस्त, क्रूरादिविद्ध) हो अथवा अमावास्या तिथि के निकट हो तो उसे निकालने का प्रयास नहीं करना चाहिए । ऐसा विज्ञ पूर्वाचार्यों ने कहा है । लाभ स्थान पर चन्द्रमा की युति या दृष्टि न हो और शुभग्रह की युति या दृष्टि हो तो एक वर्ष बाद द्रव्य निकालने का महान् उद्यम करना चाहिए ।

महान् उद्यम से तात्पर्य है—शान्तिकर्म आदि कराके ही निधि निकालने का प्रयास करना चाहिए क्योंकि इस कार्य में विघ्न बहुत आता है ।



प्रश्नकर्ता ने प्रश्न किया कि मेरे घर में निधि है । उसे मैं कब निकालूँ ? प्रश्नकुण्डली के आधार पर चतुर्थ स्थान में सौम्यग्रह गुरु बैठा है तथा चतुर्थेश बुध उसे देख रहा है । अतः निधि तो है परन्तु चन्द्रमा अमावास्या का है अर्थात् सूर्य सानिध्य के कारण अस्तङ्गत है और चतुर्थ भवन शनि ग्रह से दृष्ट है । इसलिए प्रश्नकर्ता को आदेश दिया गया कि वह सम्वत्सर पर्यन्त निधि निकालने का उद्योग न करे ।

जाया स्थानस्य भावा न भृगुसुतमृते नो शनि धर्मभावा ।  
 नो सूर्य कर्मभावा न बुधहिमकरौ लाभभावा भवन्ति ॥  
 विद्यास्थानस्य भावा न गुरुमवनिजं तातनिस्थान भावा ।  
 नेन्दुं मृत्युर्न सर्वे न च तनयपदं भार्गवं श्वेतरश्मिम् ॥ १६७ ॥

दीप्तिः—अथेदानीं वर्णयति कं कं ग्रहं विना कस्य-कस्य भावस्य विचारो न सम्पद्यते तद्यथाभृगुसुतं शुक्रमृते विना जायास्थानस्य सप्तमस्थानस्य न विचारः सम्पद्यते । अनेन प्रकारेण अन्येऽपि भावा निर्दिष्टग्रहान् विना न विचार्यन्ते । शनि विना धर्मभावा नो नवमस्थानजन्यविषया न विचार्यन्ते । सूर्य विना कर्मभावा दशमभावा नो विचार्यन्ते । नो पदमव्ययम् । हीनत्वज्ञापकमेतत्पदम् । बुधहिमकरौ ज्ञचन्द्रौ विना लाभभावा न भवन्ति । यद्यपि प्रश्नशास्त्रे चन्द्रं विना कस्यापि भावस्यादेशः कर्तुं न शक्यते तथापि विशेषणैकादशभावस्यफलं तु चन्द्रं विना नैव निष्पद्यते । एवमेव विद्यास्थानस्य पञ्चमस्थानस्य भावा गुरुं बृहस्पति विना न भवन्ति । अवनिजं भौमं विना तातनिस्थानभावा नवमस्थानभावा न फलदायका भवन्ति । इन्दुं विना चन्द्रमृते मृत्युर्नाष्टमस्थानं विचारणीयम् । एवमेवाऽन्ये सर्वेऽपि भावा इन्द्रं विना न विचार्यन्ते । अपि च तनयपदं पञ्चमस्थानं श्रोतरश्मि शुक्रं विना न फलीभूतं । केचन श्वेतरश्मिपदेन चन्द्रमा एव मन्यन्ते ।

ग्रहाणां हर्षस्थानानि ब्रुवन्ति केचन—

लग्ने बुधः शशी वह्नौ षष्ठे भौमः कलत्रगः ।  
 शुक्रो नवमगः सूर्यो लाभे जीवः शनिर्व्यये ॥

कीदृशो ग्रहो कार्यकरो न भवति तत्कथयति—

सूर्यस्याग्रगवात्राहोर्मुखे पुच्छेऽथ वा स्थितः ।  
 स्वगृहात्सप्तराशिस्थोः ग्रहः कार्यकरो नहि ॥

अपि च—

षष्ठपं द्वादशं लग्नाद् वक्रितोस्तमितोभ्रगः ।  
 क्रूराक्रान्तादिना नष्टो नीचस्थो मित्रनीचगः ॥ इति ।

हिन्दी—शुक्र के विना सप्तम भाव, शनि के विना नवम भाव, सूर्य के दशम भाव, तथा बुध और चन्द्र के बिना आय (एकादश) भाव विचारित नहीं होता । विद्याभाव का विचार बृहस्पति के विना पितृभाव का विचार मंगल के विना तथा चन्द्र के विना मृत्यु

एवं अन्य भावों का विचार नहीं होता । शुभ्ररश्मि शुक्र के विना पुत्रस्थान का विचार नहीं होता ।

कुछ आचार्य 'शुभ्ररश्मि पद से चन्द्रमा का अर्थ लगाते हैं । जो ग्रह जिस स्थान का कारक होता है वह उसके फल को अभिवद्ध करता है । ऐसी स्थिति में चन्द्रमा तथा शुक्र दोनों को ही पुत्रस्थान का कारक मानना पड़ेगा ।

लग्नं चन्द्रोऽस्ति यस्मिंस्तदथ दिनमणिर्यत्र जीवस्तन्नी-

चोऽस्तङ्गतो वा न यदि सुरगुरुर्वक्रितश्चेत्तदाद्यम् ॥

वित्काव्यक्ष्माङ्गजानां भवति किल बली यस्त्रयाणां तदीयं

दौर्बल्यं यत्र मन्दस्तदपि च न बली शिष्टयोर्यस्तदीयम् ॥१६८॥

दीप्ति:—अथ प्रश्नकुण्डल्या लग्नं तात्कालिकमुदितं प्रथमम्, यस्मिन् भावे चन्द्रोऽस्ति तद् द्वितीयम्, यत्र यस्मिन् भावे दिनमणिः सूर्यो भवति तत् तृतीयम्, यत्र यस्मिन् भावे जीवोगुरुः स्थितः परं स नीच अस्तङ्गतो वक्रो वा न स्यात् तच्चतुर्थम्, इमानि सर्वाणि स्थानानि आद्यं चिन्त्यं प्राथम्येन विचारणीयं निरीक्षणीयञ्च । तदनन्तरं वित्काव्यक्ष्माङ्गजानां बुधशुक्रमङ्गलानां त्रयाणां किल निश्चयेन यो बली तदीयं पञ्चनम् क्रमेण बुधशुक्रभौमानां मध्ये यो बलवान् ग्रहो भवति तस्य स्थानस्य निरीक्षणं करणीयम् । यत्र मन्दो शनिर्यस्मिन् भावे भवति तस्य दौर्बल्यं हीनबलत्वं च स्याद् अर्थात् यदि मन्दो निर्बलस्यात्तदानीं शिष्टयोः प्रागुक्तयोर्बुधशुक्रयोः, शुक्रभौमयोः, बुधभौमयोर्मध्ये यो बली बलवांस्तदीय-स्थानमाद्यं करणीयम् । इदं षष्ठस्थानकम् । इमानि षट् प्रश्नलग्नानि भवन्ति ।

हिन्दी—प्रश्नकुण्डली के द्वारा फलकथन करते समय छः परिस्थितियों का निरीक्षण करना चाहिए—

(१) लग्न (२) जिस राशि में चन्द्र हो (३) जिस भाव में सूर्य स्थित हो (४) जिस भाव में बृहस्पति बैठा हो पर वह नीच, अस्तङ्गत या वक्र भाव को न प्राप्त हो (५) बुधशुक्र और मंगल में से जो कोई बली हो कर जिस भाव में बैठा हो तथा (६) शनि जहाँ पर स्थित हो, परन्तु यदि शनि निर्बल हो तो पूर्वोक्त बुध शुक्र तथा मंगल में से शेष दो जो अवशिष्ट हों उनमें जो बली हो उस भाव को लग्न मान कर विचार करना चाहिए ।

ये सभी विकल्प एक साथ अनेक प्रश्नों के उत्तर के लिए वर्णित हैं । एकाधिक प्रश्नों के उत्तर के लिए गणक को ऊपर कथित क्रमों के अनुसार लग्न कल्पना कर फलादेश करना चाहिए ।

एवं षट् प्रश्नलग्नान्यथ च षडपराण्येवमेषां द्वितीया

न्येतेनैव क्रमेण स्फुटमिदमुदितं द्वादशप्रश्नलग्नम् ।

एतेषां द्वादशानामपि च धनपदैर्द्वादशद्वादशैषं

तार्तीयिकैः तथान्यैरपिसकलमिदं पूर्णमब्ध्यब्धिचन्द्रैः ॥ १६९ ॥

**दीप्तिः**—एवं पूर्वोक्तप्रकारेण षटलग्नानि कथीतानि, अन्यच्च षट् प्रश्नलग्नानि तदतिरिक्तान्यपि भवन्ति । द्वितीयक्रमेऽपि षटलग्नानि बलाबलज्ञानपूर्वकानि कथितानि सन्ति । एतेनैव क्रमेणोदितंद्वादशप्रश्नलग्नं स्फुटं कथितम् । एतेषां द्वादशानामपि च पुनर्धनपदैः कुटुम्बादिभेदैर्द्वादशद्वादशभेदाः संभाव्यन्ते । तार्तीयिकैस्तृतयभवनैरपि तथाऽन्यैरपि भावै इदं सकलं सम्पूर्णमब्ध्यब्धिचन्द्रैः चतुश्चत्वारिंशदधिकशतसंख्यैः प्रश्नलग्नैर्जगदेतत् पूर्णं भवति । अत्राशयः १४४ प्रश्नलग्नभेदाः सूक्ष्मरूपेण जायन्ते । तार्तीयिकं तृतीयशब्देन ईकक् भाव्य निष्पाद्यते ।

**हिन्दी**—पूर्वोक्त प्रकार से आनीत छः लग्नों के अतिरिक्त छः स्थानों से द्वितीय क्रम में छः अन्य लग्न विचारणीय होते हैं । इसी प्रकार क्रमशः बारह प्रश्न लग्नों में धनादि, तृतीयादि भावों में भी बारह-बारह लग्न उदित होते हैं । अतः बारह भावों में बारह लग्नों के उदित होने के कारण १४४ ( एक सौ चौवालीस ) लग्न भेद कल्पित होते हैं । इन भेदों के अन्तर्गत जगत् के सम्पूर्ण प्रश्न समाहित हो जाते हैं ।

यदि कोई प्रश्नकर्ता एक ही प्रश्नकाल में अनेकशः प्रश्नों को पूछता है तो उसको उत्तर देने के लिए इसी प्रक्रिया को अपनाना पड़ता है । इस माध्यम से विश्व के सभी प्रश्नों का समाधान किया जा सकता है ।

कार्यभेद से जब कार्येश बदल जाता है और उसका फल कथन सम्बन्धित भवन से किया जाता है तो फिर इस वितण्डा को पैदा करने से कोई विशेष लाभ नहीं । प्रश्नकुण्डली के माध्यम से छः या १२ प्रश्नों का उत्तर आसानी पूर्वक कहा जा सकता है । इसीलिए कतिपय आचार्यों ने प्रश्नकुण्डली के भावों से छः प्रश्नों पर ही विचार करने की रीति बतलाई है ।

उपसंहार—

ग्रहभावप्रकाशाख्यं शास्त्रमेतत्प्रकाशितम् ।

लोकानामुपकाराय श्रीपद्मप्रभुसूरिभिः ॥ १७० ॥

दीप्तिः—भुवनदीपकस्य ग्रन्थस्यापरनाम विद्यते ग्रहभावप्रकाशः । प्रश्नशास्त्रस्य महान् ग्रन्थोऽयम् । त्रिस्कन्धज्यौतिषेऽस्य प्रश्नस्य समावेशात् शास्त्रत्वमेवोचितम् । ग्रहेषु प्रकाशो भवत्येव । अत इदमपि शास्त्रं ज्ञानात्मकं प्रकाशात्मकञ्च विद्यते । ज्ञानस्य स्वरूपं प्रकाशवदेवोज्ज्वलं भवति । अतः प्रकाशो लोकानामुपकाराय जगतां हिताय एव भवति । अत्राशयः श्रीपद्मप्रभुसूरिभिराचार्यै असौ भुवनदीपको लोकमुपकाणाय प्रकाशितः ।

कृष्णात्रेयगोत्रोद्भवस्य विदुषः श्रीमतः

कामेश्वर उपाध्यायस्य भुवनदीपकव्याख्यायां

दीप्तिविवृतिरियं परिपूर्णा ।

हिन्दी—आचार्य पद्मप्रभुसूरि ने 'ग्रहभावप्रकाश' नामक इस शास्त्र का प्रकाशन लोक हित के लिए किया ।

इस ग्रन्थ की प्रसिद्धि दो नामों से है—(१) भुवनदीपक तथा (२) ग्रहभाव प्रकाश । इसमें ३६ द्वारों की अद्भुत कल्पना की गई है । अतः यह छत्तीसगढ़ी दुर्ग की तरह अभेद्य है ।

इति भुवनदीपकः

— ० —